राजा बलदेवदास बिडला

राजा बलदेवदास बिड़ला-ग्रंथमाला

प्रस्तुत ग्रंथमाला के प्रकाशन का एक संक्षिप्त-सा इतिहास है। उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी जब काशी नागरीप्रचारिणी सभा में पधारे थे तो यहाँ के सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथों को देखकर उन्होंने सलाह दी थी कि एक ऐसी ग्रंथमाला निकाली जाय जिसमें सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रंथ मुद्रित कर दिए जायँ। बहुत अधिक परिश्रमपूर्वक संपादित ग्रंथ छापने के लोभ में पड़कर अनेकानेक महत्वपूर्ण ग्रंथों को अमुद्रित रहने देना उनके मत में बहुत बुद्धिमानी का काम नहीं है। उन्होंने सलाह दी कि ये पुस्तकें पहले मुद्रित हो जायँ फिर विद्वानों को उनकी सामग्री के विषय में विचारने का अवसर मिलेगा। सभा के कार्यकर्ताओं को राज्यपाल महोदय की यह सलाह पसंद आई। हीरक जयंती के अवसर पर सभा ने जिन कई महत्वपूर्ण कार्यों की योजना बनाई उनमें एक ऐसी ग्रंथमाला का प्रकाशन भी था। सभा का प्रतिनिधि मंडल जब इन योजनाओं के लिये धन संग्रह करने के उद्देश्य से दिल्ली गया तो सुप्रसिद्ध दानवीर सेठ घनश्यामदास जी बिड़ला से मिला और उनके सामने इन योजनाओं को रखा। बिड़ला जी ने सहर्ष इस प्रकार की ग्रंथमाला के लिये २५०००) रु० की सहायता देना स्वीकार कर लिया। इस कार्य के महत्व का उन्होंने तुरंत अनुभव कर लिया और सभा के प्रतिनिधिमंडल को इस विषय में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं हुई। बिड़ला परिवार की उदारता से आज भारतवर्ष का बच्चा-बच्चा परिचित है। इस परिवार ने भारतवर्ष के सांस्कृतिक उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण दान दिए हैं। सभा को इस प्रकार की ग्रंथमाला के लिये प्रदत्त दान भी उन्हीं महत्वपूर्ण दानों की कोटि में आएगा। सभा ने निर्णय किया कि इन रुपयों से प्रकाशित होनेवाली ग्रंथमाला का नाम श्रीघनश्यामदास जी बिड़ला के पूज्य पिता राजा बलदेवदास जी बिड़ला के नाम पर रखा जाय और इसकी आय इसी कार्य में लगती रहे।

परिचय

"गर हकीकी इश्क चाहे कर मजाजी इश्क तो
उसपे कोई क्या चढ़े जीना न हो जिस बाम का।"

सूफीवाद का मूल तत्व बताते हुए कवि ने उक्त शेर में यही कहा कि यदि हकीकी इश्क अर्थात् ईश्वर से प्रेम करने की इच्छा हो तो यह आवश्यक है कि पहले सांसारिक प्रेम ही किया जाय। वासनात्मक लौकिक प्रेम ही वह सीढ़ी है जिसपर चढ़कर मनुष्य अलौकिक आध्यात्मिक प्रेम की ऊँची छतपर जा सकता है। सीढ़ी के अभाव में जैसे छत तक जाना दुष्कर है उसी प्रकार लौकिक प्रेम के बिना अलौकिक प्रेम की प्राप्ति भी कठिन ही है।

उक्त सिद्धांत समझ लेने पर इस निष्कर्ष तक पहुँच जाना बहुत कठिन नहीं है कि सूफीवाद मधुरा भक्ति का अरबी संस्करण है। यह दूसरी बात है कि वह यौगिक क्रियाओं से भी कुछ दूर तक प्रभावित है, परंतु उसके मूल में भक्ति ही है इससे इंकार नहीं किया जा सकता। संसार में जितने धर्म सम्प्रदाय ईश्वर को केवल निराकार मानते हैं सभी में किसी न किसी रूप में यह रहस्यवादी भक्ति दिखाई देती है। इसका कारण शायद यही है कि निराकार ईश्वर के संबंध में केवल जिज्ञासा की जा सकती है और शुष्क बुद्धि के आंदोलन से उसका समाधान भी किया जा सकता है। दूसरी ओर किसी की भक्ति करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसके रूप का भी परिचय हमें सम्प्राप्त हो। उस रूप में इतनी शक्ति हो कि वह हृदय को रसार्द्र कर दे और उस रसार्द्रता का परिणाम यह हो कि हृदय उस रूपवान के दर्शन मिलन के लिये व्याकुल हो उठे। उधर इस्लाम में ईश्वर की मान्यता निराकार रूप में ही है। इसका फल यह हुआ कि इस्लाम के आरंभिक दिनों में जब कि नवीनता के कारण उसमें कट्टरता बहुत अधिक थी, कुरान और शरीअत के विरुद्ध आचरण प्राणदंड के योग्य माना जाने लगा था। ईश्वर के प्रति, अपने हृदय की रसार्द्रता के कारण, मधुरा भक्ति रखनेवाले अपने सिद्धांत का समर्थन कुरान और शरीअत द्वारा ही करने के लिये विवश थे। फिर भी समय समय पर कट्टरतावादियों के हाथों सूफियों को भारी क्लेश उठाने पड़े। मंसूर से लेकर सरमद तक अनेक ऐसे सूफियों के नाम उद्धृत किए जा सकते हैं जिन्हें कट्टर पंथियों ने विविध यातनाएँ ही नहीं दीं प्रत्युत उन्हें अपना चोला बदलने के लिये भी विवश कर दिया। मंसूर को इस्लाम की जन्मभूमि ने ही

सूली पर चढ़ना पड़ा और सरमद दिल्ली में औरंगजेब की आज्ञा से मौत के घाट उतारा गया। सूफी सरमद को शहीद मानते हैं और मसूर के विषय में कहते हैं :—

"चढा मसूर सूली पर पुकारा इश्कबाजों को
ये उसके बाम का जीना है, आये जिसका जी चाहे।"

इस्लामी जगत को केवल यह बताने के लिए कि हम भी मुसलमान ही हैं और कुरान तथा शरीअत के उतने ही पाबद हैं जितने कि अन्य मुसलमान, सूफियों ने अपने सिद्धात का आधार इस्लामी धर्मशास्त्र को ही बनाया। उन्होंने कुरान के वचन से ही अपने सिद्धात का समर्थन किया और इस्लाम के पैगंबर हजरत मुहम्मद साहब के सुप्रसिद्ध चार मित्रों—हजरत अबूबक्र, हजरत उमर, हजरत उसमान और हजरत अलीमें इस्लाम के प्रथम खलीफा अबूबक्र को ही अपना नेता भी माना। डाक्टर रिजवी के कथनानुसार कश्फुल महजूब में अबुलहसन हुजबेरी ने लिखा है कि 'यह दोनों गुण सिद्दीक अकबर अर्थात् खलीफा अबूबक्र में विद्यमान थे। वे ही इस तरीके वालों के (सूफियों के) इमाम (नेता) हैं। इसका समर्थन हिंदी के सुप्रसिद्ध सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने भी किया है :—

"अबू बकर सिद्दीक सयाने।
पहिले सिदिक दीन वइ आने॥"

इस प्रकार सूफियों ने अपने सिद्धात को कुरान वचन से जोड़ते हुए इस्लाम के प्रथम खलीफा को अपना नेता स्वीकार कर लिया। फिर भी, जैसा कि कहा जा चुका है, स्वधर्मियों के हाथों वे लाछित होते ही रहे। कहना यह चाहिए कि बेल तो लग गई परतु वह परवान न चढ़ सकी। बारहवीं शताब्दी में जब इस्लाम का प्रवेश भारत में हुआ तो उसके साथ ही सूफीवाद भी आया और यहाँ उसने अपने मनोनुकूल जलवायु पाया।

सूफीवाद के विकास के लिये भारत में भूमि पहले से ही प्रस्तुत हो चुकी थी। बौद्धधर्म के ह्रासशील होने पर जब महायान और हीनयान के बाद वज्रयान और सहज यान की भी उत्पत्ति हो गयी तो उसके फलस्वरूप आगे चलकर वैष्णव भी रहस्यवादी उपासक बन बैठे। महामहोपाध्याय हर प्रसाद शास्त्री ने अपने चडीदास आर जयदेव शीर्षक निवध में लिखा है कि: -

"सहजयानेर दुइ रूप आछे—एक भैरव भैरवी आर प्रकृटि नाड़ा नाड़ी। प्रथमटि शाक्त हइया दाड़ाय द्वितीयटि वैष्णव हइया दाड़ाय।

> कथा दुइयेरई एक-युगनद्ध वा युगुल रूपेर उपासना। ....जे सहज भाव बौद्ध बोधिसत्त्वेरा निजेर बोध चित्ते अनुभव करिया कृतार्थ हइतेन हिन्दू सहजियारा सेई भावटि राधाकृष्णेर युगल मूर्त्तिते आरोप करिया तद्दर्शनेई आपनादिगके कृतार्थ मने करितेन।"

अर्थात् सहज यान के दो रूप हैं—एक भैरव भैरवी और दूसरा नेड़ा नेड़ी। पहला दल शाक्त बना और दूसरा वैष्णव। काम दोनों ही का एक ही था अर्थात् युगनद्ध अथवा युगल मूर्ति की उपासना। .... अपने संबुद्ध हृदय में बौद्ध बोधिसत्त्वगण जिस सहज भाव का अनुभव कर अपने आपको कृतार्थ मानते थे हिंदू सहजियापंथी भी राधाकृष्ण की युगल मूर्ति पर उसी भाव का आरोप कर उसी के दर्शन मात्र से अपने आपको कृतार्थ समझते थे। इन सहजिया हिंदुओं में सर्वप्रधान थे जयदेव।

जयदेव का एक ही ग्रंथ हमें प्राप्त है—गीत गोविंद। गीत गोविंद के शृंगार रस प्रधान पदों को देखकर हिंदी संत साहित्य के एक आलोचक ने आचार्य क्षितिमोहन सेन की भाँति यह संदेह भी प्रकट कर दिया है कि इन पदों को देखते हुए जयदेव संत नहीं जान पड़ते। परंतु यदि यह बात मान ली जाय तो प्रियतम के वियोग में हर घड़ी कराह होनेवाला समूचा सूफी साहित्य भी इसी श्रेणी में आ जायगा और इसकी गणना रहस्यवादी भक्ति साहित्य में न होकर कामुक साहित्य में होने लगेगी।

जयदेव की परंपरा को विद्यापति ने आगे बढ़ाया। विद्यापति अपने धार्मिक विश्वास की दृष्टि से शैव थे, परंतु इनके पद अधिकांशतः राधाकृष्ण की प्रणय गाथा से ही संबंध रखते हैं। इनका एक पद है :—

> कुंज भवन सयँ निकसलि हे, रोकल गिरधारी।
> एकहि नगर बसि माधव हे, जनि कर बटपारी॥
> दामिनि आइ तुलायलि हे, एक रयनि अँधारी।
> जगक जवि अनुमाटल हे, हम एक सरि नारी॥
> छाड़ु कन्हैया मोर आँचर हे, फाटत नव सारी।
> कवि विद्यापति भाषइ हे, तुहुँ परम गवाँरी।
> हरिके संग किछु डर नहिं हे सुनु गुनमति नारी॥

इसमें संदेह नहीं कि उक्त पद शृंगार रस से लबालब भरा हुआ है परंतु अंतिम पंक्ति 'हरि के संग किछु डर नहिं है सुनु गुनमति नारी' का संकेत कुछ और ही है। उक्त पद के अन्य शब्दों में भी वही संकेत है जिसे सूफी

बड़े प्रेम से ग्रहण करते हैं। इस परंपरा के प्रचारक के नाते जयदेव संतों में बहुत समानित रहे हैं। आचार्य क्षितिमोहन सेन ने अपने 'दादू' नामक ग्रथ में एक स्थान पर कहा है कि 'तखनकार दिने साधकश्रेष्ठ कबीर नानक प्रभृति सबाई भक्त जयदेवेर नामे ओ वाणीते गभीर श्रद्धा प्रकाश करिया गियाछेन। ग्रथ साहेब उद्धृत कबीर वाणीते एक जायगाय पाई जयदेव नामदेवेर प्रति भगवानेर अपार कृपा हइयाछे। आवार एइ ग्रथ साहेबेई उद्धृत कबीर वाणीते देखि भगति ओ प्रेमेर मर्म जयदेव ओ नामदेवई जानेन। ग्रथ साहेबे जयदेवेर वाणीओ उद्धृत आछे। ताहाते देखि गीतगोविंदेर वाणीर सगे तार किछू मात्र भावेर सपर्क नाई अथच एई जयदेवओ बाग्लारई जयदेव। काजेई देखा जाय जयदेवेर एकटा परिचय आमादेर काछे चापा पडिया आछे।'—अर्थात् उस समय के साधकश्रेष्ठ कबीर नानक आदि जयदेव के नाम और उनकी वाणी के प्रति गभीर श्रद्धा प्रकट कर गए हैं। ग्रथ साहब में उद्धृत कबीर-वाणी में एक स्थान पर यह भी मिलता है कि जयदेव और नामदेव पर भगवान् ने अपार कृपा की। इसी ग्रथ साहब में उद्धृत उसी कबीर-वाणी में यह कहा गया है कि भक्ति और प्रेम का मर्म जयदेव और नामदेव ही मानते थे। ग्रंथ साहब में जयदेव की भी वाणी उद्धृत है परतु उसका मेल गीत-गोविंद के स्वर से नहीं है फिर भी ये जयदेव बगालवाले जयदेव ही हैं। फलत. यही निष्कर्ष निकलता है कि जयदेव का एक परिचय अभी दबा पड़ा है।

आचार्य सेन ने जयदेव के जिस छिपे हुए परिचय की ओर सकेत किया है वह सभवत यही है कि जयदेव कभी शुद्ध सहजिया थे। आगे चलकर वे वैष्णव बने और राधा-कृष्ण की उपासना पर उन्होंने सहजिया रग चढ़ाया। गुह्य उपासना की बातों को गुह्य भाषा में ही रखने की प्रवृत्ति बौद्ध तांत्रिकों, योगियों, सहजयानियों आदि में पहले से ही आ गयी थी। ऐसा क्यों हुआ यह जानने के लिए हमें भारतीय धर्म-विकास का परिचय प्राप्त करना पड़ेगा। अत्यंत प्राचीन काल में ही यह बात मान ली गयी थी धर्म लोक और परलोक दोनों के लिये आवश्यक है। इसके बाद यह भी मान लिया गया कि धर्म के दो मार्ग हैं एक दक्षिण और दूसरा वाम। जो कुछ प्रत्यक्ष था, समाज के नियमानुकुल था, सदाचारसमत था वह दक्षिण मार्ग कहा गया परंतु समाज के नियमों के प्रतिकूल और रहस्य समन्वित मार्ग वाम मार्ग। इस प्रकार दक्षिण मार्ग वेदोक्त और वाम मार्ग तन्त्रोक्त बताया गया। दोनों ही मार्गों में महत्व के गुप्त तथ्य गुप्त भाषा शैली में लिखे जाते थे जैसे ब्रह्म का स्वरूप बताने के लिये इस रूपक से काम लिया गया—

ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥

जिसकी जड़ ऊपर है और शाखाएँ नीचे हैं जो कभी नष्ट नहीं होता तथा वेद जिसके पत्ते हैं उस वृक्ष को जिसने जान लिया वही वेदज्ञ है। गीता का उक्त श्लोक कठोपनिषद् के निम्नलिखित श्लोक के आधार पर है।

ऊर्ध्वमूलो वाक्शाख एषोऽश्वत्थः सनातनः
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ॥

एक कल्पना में पीपल का स्थान वट ने भी लिया। मुंडकोपनिषद् में ऋग्वेद के आधार पर यह कहा गया कि एक वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हैं जिनमें एक पीपल के फलों को खाता है। परंतु छांदोग्य में पीपल की जगह वट आ गया है। कृत्या अभिचार और अलौकिक सिद्धियों का रास्ता हमारे यहाँ अथर्ववेद के समय ही खुल गया था। इसने संभवत दूसरी शताब्दी से ही बौद्ध धर्म को भी प्रभावित करना आरंभ कर दिया। फल यह हुआ महायान वज्रयान बन बैठा। वज्रयान के प्रसिद्ध आचार्यों में पद्मवज्र, उनके शिष्य अनंगवज्र, पद्म-संभव और दीपंकर अतिश प्रसिद्ध हैं। पद्मवज्र और अनंगवज्र ने संस्कृत में ही ग्रंथ लिखकर अपने पंथ का प्रचार किया। तिब्बत में वज्रयान के प्रचार का श्रेय पद्मसंभव और दीपंकर अतिश को ही है। इस बौद्ध वाम मार्ग की तरह पौराणिक वाममार्ग भी आगे चलकर खुल गए। जो प्रवृत्ति बौद्ध वाममार्ग में थी वही शैव और वैष्णव वामपथों में प्रगट हुई। शैव वामपंथ से पाशुपत कापालिक और कालामुख सम्प्रदाय निकले और वैष्णवों में गोपीलीला संप्रदाय। कुलार्णव तंत्र ने तो स्पष्ट घोषणा ही कर दी कि विष्णु के वामभाव के रूपों में नृसिंह, रामकृष्ण और गोपाल हैं जैसे—

विष्णोस्तु वामका मूर्तिर्नृसिंहो हयो भवेत्
रामकृष्णौ च गोपालौ कथितौ वामनायकौ ॥

जैन ग्रंथ दर्शनसार में भी इस ऐकांतिक साधना की चर्चा है। उसमें लिखा है—

सिरिपासणाह तित्थो सरयूतीरे पलासणयरत्थो
पिहियासवस्स सिस्सो महासुदो बुद्धकित्तिमुणी
तिमिपूरणासणेहिं अहिगय पवज्जाओ पब्भिट्ठो
रत्तंबरं धरित्ता पवट्टियं तेण एयंतं
मंसस्स णत्थि जीवो जहा फले दहियदुद्ध-सक्करए
तम्हा तं वंछित्ता तं भक्खंतो ण पाविट्ठो ॥

बड़े प्रेम से ग्रहण करते हैं। इस परंपरा के प्रचारक के नाते जयदेव संतों में बहुत समानित रहे हैं। आचार्य क्षितिमोहन सेन ने अपने 'दादू' नामक ग्रथ में एक स्थान पर कहा है कि 'तखनकार दिने साधकश्रेष्ठ कबीर नानक प्रभृति सबाई भक्त जयदेवेर नामे ओ वाणीते गभीर श्रद्धा प्रकाश करिया गियाछेन। ग्रंथ साहेब उद्धृत कबीर वाणीते एक जायगाय पाई जयदेव नामदेवेर प्रति भगवानेर अपार कृपा हइयाछे। आबार एइ ग्रथ साहेबेई उद्धृत कबीर वाणीते देखि भगति ओ प्रेमेर मर्म जयदेव ओ नामदेवई जानेन। ग्रथ साहेबे जयदेवेर वाणीओ उद्धृत आछे। ताहाते देखि गीतगोविंदेर वाणीर संगे तार किछु मात्र भावेर संपर्क नाई अथच एई जयदेवओ बाग्लारई जयदेव। काजेई देखा जाय जयदेवेर एकटा परिचय आमादेर काछे चापा पडिया आछे।'—अर्थात् उस समय के साधकश्रेष्ठ कबीर नानक आदि जयदेव के नाम और उनकी वाणी के प्रति गभीर श्रद्धा प्रकट कर गए हैं। ग्रथ साहब में उद्धृत कबीर-वाणीं में एक स्थान पर यह भी मिलता है कि जयदेव और नामदेव पर भगवान् ने अपार कृपा की। इसी ग्रथ साहब में उद्धृत उसी कबीर-वाणी में यह कहा गया है कि भक्ति और प्रेम का मर्म जयदेव और नामदेव ही मानते थे। ग्रथ साहब में जयदेव की भी वाणी उद्धृत है परतु उसका मेल गीत-गोविंद के स्वर से नहीं है फिर भी ये जयदेव बगालवाले जयदेव ही हैं। फलत. यही निष्कर्ष निकलता है कि जयदेव का एक परिचय अभी दबा पड़ा है।

आचार्य सेन ने जयदेव के जिस छिपे हुए परिचय की ओर संकेत किया है वह सभवत यही है कि जयदेव कभी शुद्ध सहजिया थे। आगे चलकर वे वैष्णव बने और राधा-कृष्ण की उपासना पर उन्होंने सहजिया रग चढ़ाया। गुह्य उपासना की बातों को गुह्य भाषा में ही रखने की प्रवृत्ति बौद्ध तान्त्रिकों, योगियों, सहजयानियों आदि में पहले से ही आ गयी थी। ऐसा क्यों हुआ यह जानने के लिए हमें भारतीय धर्म-विकास का परिचय प्राप्त करना पड़ेगा। अत्यंत प्राचीन काल में ही यह बात मान ली गयी थी धर्म लोक और परलोक दोनों के लिये आवश्यक है। इसके बाद यह भी मान लिया गया कि धर्म के दो मार्ग हैं एक दक्षिण और दूसरा वाम। जो कुछ प्रत्यक्ष था, समाज के नियमानुकुल था, सदाचारसमत था वह दक्षिण मार्ग कहा गया परंतु समाज के नियमों के प्रतिकूल और रहस्य समन्वित मार्ग वाम मार्ग। इस प्रकार दक्षिण मार्ग वेदोक्त और वाम मार्ग तन्त्रोक्त बताया गया। दोनों ही मार्गों में महत्व'के गुप्त तथ्य गुप्त भाषा शैली में लिखे जाते थे जैसे ब्रह्म का स्वरूप बताने के लिये इस रूपक से काम लिया गया—

ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ।।

जिसकी जड़ ऊपर है और शाखाएँ नीचे हैं जो कभी नष्ट नहीं होता तथा वेद जिसके पत्ते हैं उस वृक्ष को जिसने जान लिया वही वेदज्ञ है। गीता का उक्त श्लोक कठोपनिषद् के निम्नलिखित श्लोक के आधार पर है।

ऊर्ध्वमूलो वाक्शाख एषोऽश्वत्थः सनातनः
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ।।

एक कल्पना में पीपल का स्थान वट ने भी लिया। मुंडकोपनिषद् में ऋग्वेद के आधार पर यह कहा गया कि एक वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हैं जिनमें एक पीपल के फलों को खाता है। परंतु छांदोग्य में पीपल की जगह वट आ गया है। कृत्या अभिचार और अलौकिक सिद्धियों का रास्ता हमारे यहाँ अथर्ववेद के समय ही खुल गया था। उसने संभवतः दूसरी शताब्दी से ही बौद्ध धर्म को भी प्रभावित करना आरंभ कर दिया। फल यह हुआ महायान वज्रयान बन बैठा। वज्रयान के प्रसिद्ध आचार्यों में पद्मवज्र, उनके शिष्य अनंगवज्र, पद्मसंभव और दीपंकर अतिश प्रसिद्ध हैं। पद्मवज्र और अनंगवज्र ने संस्कृत में ही ग्रंथ लिखकर अपने पंथ का प्रचार किया। तिब्बत में वज्रयान के प्रचार का श्रेय पद्मसंभव और दीपंकर अतिश को ही है। इस बौद्ध वाम मार्ग की तरह पौराणिक वाममार्ग भी आगे चलकर खुल गए। जो प्रवृत्ति बौद्ध वाममार्ग में थी वही शैव और वैष्णव वामपथों में प्रगट हुई। शैव वामपंथ से पाशुपत कापालिक और कालामुख सम्प्रदाय निकले और वैष्णवों में गोपीलीला सम्प्रदाय। कुलार्णव तंत्र ने तो स्पष्ट घोषणा ही कर दी कि विष्णु के वामभाव के रूपों में नृसिंह, रामकृष्ण और गोपाल हैं जैसे—

विष्णोस्तु वामका मूर्तिर्नृसिंहो ह्यो भवेत्
रामकृष्णौ च गोपालौ कथितौ वामनायकौ ।।

जैन ग्रंथ दर्शनसार में भी इस ऐकांतिक साधना की चर्चा है। उसमें लिखा है—

सिरिपासणाह तित्थे सरयूतीरे पलासणयरत्थो
पिहियासवस्स सिस्सो महासुदो बुड्ढकित्तिमुणी।
तिमिपूरणासणेहिं अहिगय पवज्जाओ परिभट्ठो
रत्तंबरं धरित्ता पवट्टियं तेण एयंतं
मंसस्स णत्थि जीवो जहा फले दहियदुद्ध-सक्करए
तम्हा तं व छित्ता तं भक्खंतो ण पा विट्ठो ।।

अर्थात् श्री पार्श्वनाथ के तीर्थ सरयू तट पर पलाश नामक नगर में पिहिताश्रय का शिष्य बुद्ध कीर्ति मुनि रहता था। वह शास्त्रों का ज्ञाता था परतु मछली खाने से दीक्षाभ्रष्ट हो गया। उसने लाल वस्त्र धारण कर एकात साधना आरभ कर दी। वह कहा करता था कि मांस भी फल दही दूध और शक्कर की ही तरह निर्जीव है। अत उसे खाने में कोई दोष नहीं।

परंतु इस प्रकार के काम खुल्लमखुल्ला करने का दुस्साहस कम ही लोगों में होता है। फलतः ऐसी उपासना पद्धति के लिये यदि गुह्य भाषा काम में लाई गयी तो वह उचित ही थी। इसलिये जैसे उनके पूर्ववर्ती बौद्ध तांत्रिक संधाभाषा का प्रयोग कर गए थे और जैसे उनके पूर्ववर्ती सिद्धों और परवर्ती कबीर जैसे साधकों ने उलटवासी का प्रयोग किया वैसे ही जयदेव ने भी एक ऐसी शैली में रचना की जिसका लौकिक अर्थ तो सर्वथा शृंगार-परक है परंतु जिसमें आत्मा परमात्मा के पारस्परिक आकर्षण विकर्षण का भी सकेत मिलता है। ऐसी साकेतिक भाषा प्रायः चार रूपों में प्रकट होती है— संध्या भाषा, उलठवासी, अन्योक्ति और कूट। यद्यपि कतिपय विद्वान उलट वासी को सधाभाषा का ही परवर्ती रूप मानते हैं तथापि दोनों में कुछ तात्विक अतर भी प्रतीत होता है। जान पड़ता है कि सधा भाषा के लिये यह आवश्यक था कि उसमें अभिधेयार्थ के साथ ही कोई गूढ़ार्थ भी रहे जैसे 'तरुवर काया पंच बिढ़ाल।' परतु उलटवासी में अभिधेयार्थ की पूरी उपेक्षा कर केवल गूढार्थ पर ही जोर दिया जाता है जैसे 'नइया बिच नदिया डूबल जाय।' यह अंतर उनके नामों से भी स्पष्ट है। सधा भाषा का अर्थ ही है वह भाषा जिसके दो अर्थों में सधि हो [अर्थात् जिसमें अभिधेयार्थ और गूढ़ार्थ दोनों हों परंतु उटलवासी का अर्थ ही है सर्वथा उलटी बात। इस प्रकार अप्रस्तुत से प्रस्तुत की ओर जाना जैसे अन्योक्ति है और पर्यायवाची अथवा ध्वनिसाम्य रखनेवाले शब्दों के सहारे अर्थनिर्देश जैसे कूट कहला कर प्रहेलिका कोटि में है वैसे ही सधा भाषा अध्यवसित रूपक की कोटि में आती है और उलटवांसी काकु के अतर्गत। इसी के बीच सांकेतिक भाषा है जिसका अभिधेयार्थ तो कुछ और ही होता है परंतु गूढ़ार्थ उससे सर्वथा स्वतत्र। जयदेव ने गीत गोविंद में यही किया और यही परपरा जैसा कि दिखाया जा चुका है, विद्यापति के माध्यम से हिंदी में भी चली। यह सूफियों के बड़े काम की प्रमाणित हुई। फलत. हिंदी के सूफी कवियों ने भी इसे ग्रहण

किया जैसे मलिक मुहम्मद जायसी ने पदमावत की कथा लिखी तो अंत में उसकी कुंजी देना भी उन्होंने आवश्यक समझा। उन्होंने लिखा—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा
कहा कि हम किछु और न सूझा
चौदह भुवन जो तर उपराहीं
ते सब मानुस के घट माहीं
तन चितउर मन राजा कीन्हा
हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा
गुरू सुआ जेइ पन्थ देखावा
बिन गुरु जगत को निरगुन पावा
नागमती यह दुनिया धन्धा
बाँचा सोइ न एहि चित बन्धा
राघव दूत सोइ सैतानू
माया अलाउदीं सुलतानू
प्रेम कथा एहि भाँति बिचारहु
बूझि लेहु जो जो बूझै पारहु ॥

जिस समय भारत में मुसलमान आए उस समय हिंदी गीतों में इस प्रकार के भाव साधारण हो गए थे। साथ ही जैसे आजकल हिंदी का साधारण अर्थ खड़ी बोली है वैसे ही उस समय व्रजभाषा का अर्थ हिंदी था यद्यपि तब तक भाषा के लिये हिंदी शब्द प्रयोग में नहीं आया था। जहां तक भारत में फारसी के विकास का प्रश्न है भारत में तीन ही फारसीदाँ ऐसे हुए जिनकी फारसीदानी के कायल ईरानी भी हैं। वे तीनों हैं—अमीर खुसरो फैजी और मिर्जा गालिब ये तीनों ही क्रमशः भारत में इस्लामी शासन के उद्भव, उसके अभ्युदय और उसके पतनकाल में उत्पन्न हुए अर्थात् खुसरो ने गुलाम खिलजी और तुगलक शासन कालों का दर्शन किया, फैजी अकबर के दरबार के रत्न थे और मिर्जा गालिब अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह के दरबार की शोभा बढ़ाते थे। इन्हीं अमीर खुसरो ने व्रजभाषा के संबंध में यह मत प्रकट किया कि विचार करने पर प्रकट होता है कि व्रजभाषा मिठास में फारसी से कम नहीं है और यही मत अठारहवीं शताब्दी में ईरान से आगत मत कवि अली हजीं ने प्रकट किया। खुसरो प्रसिद्ध संत निजामुद्दीन औलिया के मुरीद थे। उनके देहावसान का समाचार पाकर जब उनकी दरगाह पर पहुंचे तो रहस्यवादी सूफी शैली में व्रजभाषा का यही दोहा

यदा कि :—

गोरी सोवै सेजपर, मुखपर डारे केस।
चल खुसरू घर आपने, रैन भई चहुँ देस।

अतः जैसा कि डाक्टर रिजवी ने प्रस्तुत ग्रथ की भूमिका में लिखा है ब्रजभाषा के गीत सूफियों के बीच गाए जाते रहे होंगे और कट्टरपथी उन पर आपत्ति भी करते होंगे, वह सर्वथा सही है इस कथन की सत्यता के प्रमाण भी हमें कम नहीं मिलते। हिंदी के एक सूफी कवि नूर मुहम्मद थे। वे दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह रगीले के समकालिक थे। इन्होंने इन्द्रावती नामक एक सुदर मसनवी लिखी। गुरुवर आचार्य रामचद्र शुक्ल ने इद्रावती को हिंदी में सूफी पद्धति का अतिम ग्रथ माना है और लिखा है कि "दूसरी बात है हिंदी भाषा के प्रति मुसलमानों का भाव। इन्द्रावती की रचना करने पर शायद नूरमुहम्मद को समय समय पर यह उपालभ सुनने को मिलता था कि तुम मुसलमान होकर हिंदी भाषा में रचना करने क्यों गए? इसी से अनुराग बाँसुरी के आरभ में उन्हें यह सफाई देने की जरूरत पड़ी—

जानत है वह सिरजनहारा
जो किछु है मन मरम हमारा
हिंदू मग पर पाँव न राखेउँ
का जौ बहुतै हिंदी भाखेउँ
मन इस्लाम मिस्किलै माँजेउँ
दीन जेवरी करकस भाँजेउँ
जहाँ रसूल अल्लाह पियारा
उम्मत को मुक्तावनहारा
तहाँ दूसरौ कैसे भावै
जच्छ असुर सुर काज न आवै।
छाँड़ पारसी कन्द नबातैं
अरुझाना हिंदी रस बातैं"

इसी स्थल पर हिंदी की दूसरी शैली उर्दू में भी जो बहुत दिन तक हिंदी ही जानी और मानी जाती रही सूफी काव्य लिखते समय किस प्रकार इस्लाम की दुहाई देते हुए अपनी सफाई देनी पड़ती थी इसका उल्लेख भी अप्रासगिक न होगा। मौलाना अब्दुस्सलाम नदवी ने अपने सैरुल हिंद

नामक ग्रंथ में इस विषय पर लिखा है कि 'उर्दू शायरी की इब्तिदा (आरंभ) दकन से हुई जो निहायत कदीम जमाने से (अत्यंत प्राचीन काल से) फिक्रो तसव्वुफ का मरकज़ (पारलौकिक चिंता और दार्शनिकता का केंद्र) है। इसलिये इब्तिदा से ही उसमें सूफियाना खयालात की आमेजिश (मिलावट) हो गई। चुनांचे कुतुब शाह अल्तमूल्लुम व ज़िल्ले अल्लाह (जिनका उपनाम ज़िल्ले अल्लाह था) जिसका जमाना दिल्ली से बहुत मुकद्दम (बहुत पहले) है कहता है—

जहाँ है सामिया का नक्श उस थे
कहे हैं आरिफाँ सब उसको तमशान ॥

कुतुबशाह के बाद आलमगीर के जमाने में उर्दू शायरी ने ज्यादा तरक्की की तो मुस्तकिल तौर पर सूफियाना लिटरेचर की बुनियाद कायम हो गयी और ख्वाजा महमूद बहरी ने जो हजरत मुहम्मद बाकर कुद्स सरा के मुरीद थे तसव्वुफ में एक मुस्तकिल मसनवी लिखी जिसका नाम 'मन लगन' रखा। चुनांचे इस मसनवी की वजहे तसनीफ (रचना के कारण) के मुतल्लिक लिखते हैं—

चालीस बरस यही थी मस्ती।
यूं शेर यू शाहिदारस्ती ॥
हर बूँद न एक अमोल मोती।
मोती न हर एक बीत (वृत्त) जोती।
हिंदी तो जबान है हमारी।
कहते न लगे हमन को भारी ॥
हर बोल में मारफत की बानी।
सीता की न राम की कहानी ॥
यह जिसमें अच्छे बयान वाला।
संसार के हाथ इक रिसाला ॥
बानी हमन सब सिफ्त, है तू जात।
क्यों जातकी कर सके सिफ्त बात ?
निरमन को तलाश है जू मनकी
त्यों मन को लगन दी मन-लगनकी ॥''

सूफियों को समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिये कितनी सावधानी बरतनी पड़ती थी इसका परिचय उक्त उद्धरणोंकी विशिष्ट पंक्तियों पर ध्यान देने मात्र से मिल जाता है।

यढ़ा कि :—

गोरी सोवै सेजपर, मुखपर डरे केस।
चल खुसरू घर आपने, रैन भई चहुँ देस।

अतः जैसा कि डाक्टर रिजवी ने प्रस्तुत ग्रथ की भूमिका में लिखा है ब्रजभापा के गीत सूफियों के बीच गाए जाते रहे होंगे और कट्टरपंथी उन पर आपत्ति भी करते होंगे, वह सर्वथा सही है इस कथन की सत्यता के प्रमाण भी हमें कम नहीं मिलते। हिंदी के एक सूफी कवि नूर मुहम्मद थे। वे दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले के समकालिक थे। इन्होंने इन्द्रावती नामक एक सुदर मसनवी लिखी। गुरुवर आचार्य रामचद्र शुक्ल ने इद्रावती को हिंदी में सूफी पद्धति का अतिम ग्रथ माना है और लिखा है कि "दूसरी बात है हिंदी भाषा के प्रति मुसलमानों का भाव। इन्द्रावती की रचना करने पर शायद नूरमुहम्मद को समय समय पर यह उपालभ सुनने को मिलता था कि तुम मुसलमान होकर हिंदी भाषा में रचना करने क्यों गए ? इसी से अनुराग बाँसुरी के आरभ में उन्हें यह सफाई देने की जरूरत पड़ी—

जानत है वह सिरजनहारा
जो किछु है मन मरम हमारा
हिंदू मग पर पाँव न राखेउँ
का जौ बहुतै हिंदी भाखेउँ
मन इस्लाम मिस्किलै माँजेउँ
दीन जेवरी करकस भाँजेउँ
जहाँ रसूल अल्लाह पियारा
उम्मत को मुक्तावनहारा
तहाँ दूसरौ कैसे भावै
जच्छ असुर सुर काज न आवै।
छाँड़ पारसी कन्द नबातैं
अरुझाना हिंदी रस बातैं
"

इसी स्थल पर हिंदी की दूसरी शैली उर्दू में भी जो बहुत दिन तक हिंदी ही जानी और मानी जाती रही सूफी काव्य लिखते समय किस प्रकार इस्लाम की दुहाई देते हुए अपनी सफाई देनी पडती थी इसका उल्लेख भी अप्रासगिक न होगा। मौलाना अब्दुस्सलाम नदवी ने अपने सैरुल हिंद

नामक ग्रंथ में इस विषय पर लिखा है कि 'उर्दू शायरी की इब्तिदा (आरंभ) दक्न मे हुई जो निहायत कदीम जमाने से (अत्यंत प्राचीन काल से) फिक्रो तसव्वुफ का मरकज़ (पारलौकिक चिंता और दार्शनिकता का केंद्र) है। इसलिये इब्तिदा मे ही उसमें सूफियाना खयालात की आमेजिश (मिलावट) हो गई। चुनाचे कुतुब शाह अल्तमल्लुस व ज़िल्ले अल्लाह (जिनका उपनाम ज़िल्ले अल्लाह था) जिसका जमाना दिल्ली से बहुत मुकद्दम (बहुत पहले) है कहना है—

जहाँ है सामिया का नक्श उस थे
फदे हैं आरिफाँ सब उसको तमशाल ॥

कुतुबशाह के बाद आलमगीर के जमाने में उर्दू शायरी ने ज्यादा तरक्की की तो मुस्तकिल तौर पर सूफियाना लिटरेचर की बुनियाद कायम हो गयी और ख्वाजा महमूद बहरी ने जो हजरत मुहम्मद बाकर कुद्स सरा के मुरीद थे तसव्वुफ में एक मुस्तकिल मसनवी लिखी जिसका नाम 'मन लगन' रखा। चुनाचे इस मसनवी की वजहे तसनीफ (रचना के कारण) के मुतल्लिक लिखते हैं—

चालीस बरस यही थी मस्ती।
यूं शेर यू शाहिदानरस्ती ॥
हर बूँद न एक अमोल मोती।
मोती न हर एक बीत (वृत्त) जोती।
हिंदी तो जबान है हमारी।
कहते न लगे हमन को भारी ॥
हर बोल में मारफत की बानी।
सीता की न राम की कहानी ॥
यह जिसमें अच्छे बयान वाला।
संसार के हाथ इक रिसाला ॥
यानी हमन सब लिफ्त, है तू जात।
क्यों जातकी कर सके लिफ्त बात ?
निस्मन को तलाश है जू मनकी
रों मन की लगन दी मन-लगनकी ॥'

सूफियों को समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिये कितनी साव-धानी बरतनी पड़ती थी इसका परिचय इक उद्धरणोंकी विशिष्ट पंक्तियों पर ध्यान देने मात्र से मिल जाता है।

जैसा कि हम पहले दिखा आए हैं जयदेव द्वारा 'राधा-कृष्ण की युगल मूर्ति पर सहजिया भाव की उपासना पद्धति का रग चढ़ा दिए जाने के बाद हिंदी गीतों में ऐसे भाव अनायास भरे जाने लगे जो सर्वसाधारण की दृष्टि में कामुकतावादी और अश्लील दिखाई पड़ते थे परंतु भक्त और साधकगण उन्हीं भावों का रहस्यवादी अर्थ ग्रहण कर पुलकित हो उठते थे। यह प्रथा इतनी व्यापक हुई कि चैतन्य महाप्रभु के बाद मधुरा भक्ति साहित्य में रसराट् रूप ग्रहण कर बैठी। रस के स्थायी भाव विभाव अनुभाव संचारी आदि अवयव मधुरा-भक्ति-रस की निष्पत्ति के लिये कल्पित किए गए। श्री रूप गोस्वामी ने इस रस का लक्षण बताते हुए लिखा:—

> वक्ष्यमाणैर्विभावाद्यैः स्वाद्यता मधुरा रति
> नीता भक्तिरस. प्रोक्तो मधुराख्यो मनीषिभि ॥

इसकी टीका करते हुए जीव गोस्वामी ने कहा कि कृष्णप्रेम ही इस रस का स्थायी भाव है। कृष्ण और कृष्णभक्त ही इसके आलबन हैं। कृष्ण-चद्र के गुण चेष्टा और प्रसाधन उद्दीपन विभाव हैं आदि।

मधुरा-भक्ति-रस में दापत्य भाव की अवतारणा अनिवार्य थी। उधर जिन राधा-कृष्ण को आलबन बनाकर उक्त रस की सृष्टि हुई उनकी उपासना सहज भाव से आरभ हो ही गयी थी। सूफी भी अल्लाह को माशूक मानते हुए भारत आए और सोलहवीं शताब्दी तक भारत में सूफियों के चार सप्रदाय विकसित होकर फूलने फलने लगे। बारहवीं शताब्दी में चिश्तिया तेरहवीं में सुहरवर्दिया पद्रहवी और सोलहवीं शताब्दियों में नक्शाबदी और कादिरिया सप्रदाय स्थापित हो गए। कबीर जैसे साधक भी अपना परिचय 'राम की बहुरिया' के रूप में देने ही लग गए थे। सूफियों का यह सिद्धात प्रकट हो ही चुका था कि अलौकिक प्रेम की मंजिल तक पहुँचने के लिये लौकिक प्रेम का ही पथ पकड़ना चाहिए। अत प्रत्येक सूफी काव्य का आधार किसी लौकिक प्रेम कथा को बनना पड़ा। जहाँ ऐसी कथा नहीं मिल सकी वहाँ भी अपना सिद्धात समझाने के लिये दापत्य भाव सबधी रूपक ही प्रस्तुत किया गया। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा।

अठारहवीं शताब्दी में मीर हसन ने मौजुलआरफीन नामक एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का नाम यद्यपि विदेशी है परतु इसकी भाषा हिन्दुस्तानी है। कथा तो छोटी सी ही है परतु सूफीवाद के मूल सिद्धात को दृष्टात द्वारा

समझा देती है। मीर हसन लिखते हैं—

इक मुहल्ले में थीं कितनी लड़कियां
खेल में बाहम थीं वो सब रहतियां
गुड़िया खेला करती थीं आपस में वो
थीं बहम इस बात पर हमकस्मे वो
यानी हममें से जो व्याही जाय तो
खेल को दिल में रखे अपने गिरो

इन लड़कियों में एक का विवाह हो गया परंतु विवाह के बाद उसकी यह दशा हुई कि

ध्यान गुड़ियों से न मतलब खेल से
कुछ खबर मस्ती से औ कुछ तेल से

अन्य लड़कियों ने जब उनकी यह दशा देखी तो उनमें से एक ने उससे पूछा:—

क्यों बहिन क्या था बहम कौलोकरार
भूलगी क्यों खेल के दारोमदार
व्याह में तूने मजा पाया है क्या
कम किया जो खेल का सारा मजा

उसने उत्तर दिया—

तल्खो शीरीं हो तो बोलूँ माजरा
जीभ पर आता नहीं इसका मजा
बात है बाहर बयाँ से इसको तो
जी ही जाने है बयाँ है गोमगो
व्याह जब यूँ ही तुम्हारा होयगा
तब मजा मालूम सारा होवगा
तुम भी तब यह खेल भूलोगी तमाम
और ही कुछ खेल होगा बाइस्तलाम (?)
अस्ल जब पैदा हो फिर क्या नक्ल से
कर जरा दरियाफ्त इसको अक्ल से

अंत में कथा का निष्कर्ष निकालते हुए कवि कहता है—

जब मजा [illegible] न हो [illegible]
फिर [illegible] फिर तरह [illegible]

गो मसल यह है मजाजी ऐ अजीज
पर हकीकत को यहीं से कर तमीज
तुझको इस आलम की है गर आरजू
दीनो दुनिया को उठा रख एकसू

[यदि लौकिक प्रेम का वर्णन न किया जाय तब अलौकिक प्रेम कैसे प्रकट होगा ? यद्यपि लौकिक प्रेम दृष्टांत मात्र है परतु अलौकिक प्रेम की पहचान यहीं से करनी चाहिए । यदि तुझे इस (प्रेम की) दुनियाँ की इच्छा है तो धर्म और ससार दोनों को उठा कर एक ओर रखदे ।]

इस प्रकार जैसे हिंदुओं ने रसीले हिंदी गीतों के लिये रस शास्त्रीय और आध्यात्मिक आधार ढूँढ निकाले थे वैसे ही मुसलमानों ने भी परतु धार्मिक विश्वास भिन्न होने के कारण मुसलमान हिंदुओं की मान्यताओं के प्रति सहानुभूति तो रख सकते थे परतु उनसे सहमत नहीं हो सकते थे। अतः उन्होंने हिंदी गीतों में आए हुए शब्दों की इस्लामी धर्मशास्त्रपरक व्याख्या की । हकायके हिदी उन्हीं व्याख्याओं का संग्रह है ।

इस स्थल पर यह आपत्ति उठायी जा सकती है कि हिंदी में तो सूफी साहित्य उसके अवधी और आगे चलकर उर्दू रूपों तक सीमित रह गया। परतु जिस समय के गीतों की बात इसमें कही गयी है उस समय ब्रज भाषा का बोलबाला था । उन गीतों के रचयिताओं में कोई भी सूफी नहीं था कि वह जानबूझ कर अपने पदों में साकेतिक शब्दों का प्रयोग करता परतु यह जान लेने पर कि एक परपरा भारत में भी रहस्यवादी वैष्णव पद्धति की थी और उसका साहित्य भी था तव यह मान लेने में सकोच के लिये अवकाश नहीं रह जाता कि हिंदुओं में वैसे पदों की आध्यात्मिक व्याख्या भी प्रचलित रही होगी । उन गीतों की मधुरता ने मुसलमानों का भी हृदय आकृष्ट किया होगा और उन्होंने उसकी व्याख्या अपने ढग से कर ली बिलकुल उसी तरह जैसे आजकल रामायण के व्यास लोग रामचरित मानस की चौपाइयों के ऐसे ऐसे अर्थ निकालते और ऐसी ऐसी व्याख्या करते हैं जिनकी कल्पना तक गोस्वामीजी ने न की होगी । इसके साथ ही उस समय हिंदुओं में सगीत ब्रह्मानद सहोदर कहा जाता था । वह मोक्ष का साधन माना जाता था । यह कहा जाता था कि

त्रिवर्ग फलदास्सर्वे दानाध्ययजपादयः
एकं संगीत विज्ञानम् चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥

अर्थात् दान ध्यान और जप तो अर्थ धर्म और काम की ही सिद्धि प्रदान करते हैं परंतु यह संगीत विज्ञान मोक्ष सहित चारों फलों का दाता है ॥

मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने अपने ग्रंथ हकायके हिंदी को तीन भागों में बांटा है। प्रथम भाग में ध्रुव-पद में प्रयुक्त हिंदी शब्दों के सूफीयाना अर्थ दिये गये हैं। दूसरे भाग में उन हिंदी शब्दों की व्याख्या है जो विष्णु पद में प्रयुक्त होते थे। तीसरे भाग में अन्य प्रकार के गीतों और काव्यों आदि में आये शब्दों की व्याख्या की गयी है मीर अब्दुल वाहिद के परिश्रम और उनकी सूझ बूझ की प्रशंसा करते हुए भी इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि मीर साहब मुसलमान थे और इसीलिए हिंदू संगीत की बारीकियों की पूरी-पूरी अभिज्ञता प्राप्त करने की स्थिति में न थे। स्पष्टतः उन्हें यह नहीं मालूम था कि भारतीय संगीत में गायन की ध्रुव-पद पद्धति तो है परंतु विष्णु-पद पद्धति जैसी कोई चीज नहीं है। ब्रह्म ताल और रुद्र ताल की तरह विष्णु ताल अवश्य है जिसका लक्षण यह है—

लघुत्रयद्रुतश्चैव चत्वारो द्रुलघुस्तथा।
विष्णुतालोऽतिविख्यातो संगीते परिभाषित ॥

कोष के अनुसार विष्णु-पद का अर्थ आकाश, क्षीर सागर, गया धाम स्थित विष्णु का पद चिह्न आदि होता है। देवी भागवत में कहा गया है कि 'सप्तर्षि मंडल में ऊपर तेरह लाख योजन की दूरी पर विष्णु का परम पद है। वहां इन्द्र, अग्नि, कश्यप और धर्म के साथ मिलकर ध्रुव उक्त पदपर विराजमान है। स्वयं परमेश्वर ने इस ध्रुव को स्पष्ट वेगवाली काल-चक्र में निरन्तर भ्रमणशील समस्त ग्रह नक्षत्रादि ज्योतिर्मण्डली का आश्रय-स्तंभ स्वरूप बनाया है। यह ध्रुव अपनी प्रतिभा से प्रतिभात होकर सब जगत प्रकाश देता है। जिस तरह जुए में पशु जोते जाते हैं, उसी तरह ग्रह 'नक्षत्रादि अंतर्बहि-र्विभाग के क्रम से काल-चक्र में नियोजित होकर ध्रुव का अवलम्बन करते हैं और वायु से प्रणोदित होकर कालत्रयमंडल गति से बड़ी ही तेजी के साथ घूमा करते हैं।'

विष्णु-पद पर विचार करते समय एक बार यह कल्पना भी उठी थी कि जैसे ध्रुव पद गान, चौताल में गाया जाता है और इसीलिए बहुत से गायक ध्रुपद और चौताल में कोई अन्तर नहीं मानते, वैसे ही यहां विष्णुपद का

भी सबंध तिताले से न हो। विष्णु के वामन रूप धारण कर संसार को तीन पग में नाप लेने की कथा प्रसिद्ध है ही। परतु विष्णु-पद का संबंध तिताले से ही नहीं है। उधर हकायके हिंदी के अध्ययन से पता चलता है कि विष्णुपद खंड में निम्नलिखित साकेतिक शब्दों का संग्रह किया गया है—

गोपी[१], गूजरी[२], कुबरी[३], कुब्जा[४], ऊधो[५], पतिया[६], ब्रज[७], गोकुल[८], जमुना[९], गगा[१०], कालिन्दी[११], मुरली[१२], बासुरी[१३], गांग पार डफ[१४], बासुरि बाजे, किन्नर[१५], बीन[१६], कस[१७], शेषनाग[१८], मधुपुरी[१९], बृंदावन[२०], मधुवन[२१], मथुरा[२२], द्वारका[२३], यशोदा[२४], नद[२५]महर, गोरस[२६], दहिया[२७], महिय्व[२८], दूध[२९], गोबर[३०] और रक्त, नैन[३१], बेचन[३२] जाय, दुहावन[३३] जाय, नीर भरन[३४] जाय, कांह बाट[३५] रूधौ, कन्हैया मारग[३६] रोक्यौ, लार[३७] जबान को ही, काहूकी[३८], बांह मरोरी, काहू के कर चूरी[३९] फोरी, काहू की मटकिया[४०] ढारी, काहू की कंचुकी[४१] फारी, वह बालक[४२], मेरो कछू न जाने, कन्हैया मेरो[४३] बारो तुम बाद लगावत खोर, ग्वाल[४४] गायन चरावै, कांधे कमरिधा[४५], पांयन[४६] पावरे, मोर मुकुट[४७] सीस धरे, गोवर्द्धनधारी[४८], श्याम सुदरिया[४९] सावरो, अतरजामी[५०] और पीत पिछौरी[५१]।

कुल ५१ शब्दों और वाक्य खडों की उक्त सूची में एक भी शब्द ऐसा नही है जिसका प्रयोग सूर आदि वैष्णव कवियों ने न किया हो और जिसका सबध स्वयं विष्णु अथवा उनकी कृष्णावतार लीला से न हो। फलत. हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए बाध्य हैं कि मीर अब्दुल वाहिद ने विष्णु की कृष्णावतार-लीला सबधी पदों को ही विष्णुपद से अभिहित किया है। उनके विष्णु-पद का अर्थ है वे पद जिनमें कृष्णवतार की लीलाओं का चित्रण हो। अत. विष्णुपद को ध्रुवपद की तरह सगीत की कोई विशिष्ट पद्धति न मानना चाहिये। मीर साहब ने किस प्रकार के पदों की गणना विष्णुपद में की है उसके उदाहरण में बैजू बावरा का यह गीत लिया जा सकता है—

मुरली बजाय रिझाय लई मुख मोहनते
गोपी रीझि रही रस ताननते।

सुध बुध सब बिसराई
धुन सुन मन मोहे मगन भई देखत हरि आनन।
जीव जतु पसु पछी सुर नर मुनि मोहे
हरे सबके प्रानन।

बैजू बनवारी बंसी अधर धरि वृंदावन चंद
वस किये सुनतही कानन ॥

बैजू तानसेन से बहुत पहले ही प्रसिद्ध हो चुका था । अतः उसका यह गीत ब्रजभाषा के उन गीतों का प्रतिनिधि माना जा सकता है जिनसे मीर अब्दुल वाहिद ने शब्द संग्रहीत किये हैं । उक्त गीत ध्रुवपद में बँधा हुआ है और उसके रेखांकित शब्द भी वही हैं जो मीर साहब की सूची में आये हैं । सूची के शेष शब्दों में एक भी ऐसा नहीं है जिसका प्रयोग सूर सागर में न हुआ हो ।

विष्णुपद खंड में जिन शब्दों की व्याख्या की गयी है उनमें से 'गोंग-पार डफ बाँसुरि बाजै' 'किन्नर' 'दहियव' महियव 'लार जवान कोही' और 'श्याम सुंदरिया साँवरो' पर विचार करना आवश्यक है । 'गोंग पार डफ बाँसुरी बाजै में' गोंग शब्द का अर्थ गंगा न होकर नदी मात्र है । किन्नर सम्भवतः वह वाद्य है जिसे किंगरी कहते हैं । जायसी ने इस शब्द का प्रयोग किया है ।

"हाड भये सब किंगरी नसैं भई सब ताँति ।
रोवँ रोवँ ते धुनि उठै कहौं बिथा केहि भाँति ॥"

'दहियव' 'महियव' सम्भवतः 'दहीओं' 'महीओं' के विकृत रूप हैं । सर्वाधिक अस्पष्ट वाक्य खंड है 'लार जवान कोही ।' डाक्टर रिजवी ने इसे संदेहास्पद समझा है और आचार्य हजारीप्रसाद जी ने अपने विद्वत्तापूर्ण प्राक्कथन में यह मत प्रकट किया है कि "यह अस्पष्ट वाक्य है । इसके बाद 'काहू की बाँह मरोरी" काहू के कर चूरी फोरी" काहू की मटकिया टारी" काहू की कंचुकी फारी' है जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि इसी भाव से मिलता जुलता कोई वाक्य रहा होगा । मूल शब्द क्या था यह मैं ठीक नहीं समझ सका किंतु समकालीन या ईषत् पूर्ववर्ती प्रसिद्ध गवैयों के भजनों में 'लार जय रच्यो (रची ?) कन्हाई' जैसे वाक्य मिल जाते हैं । सम्भवत. ऐसे ही किसी वाक्य का यह विकार हो ।' मेरी समझ में यह वाक्य 'लाल जौन कोही' होना चाहिए । यदि फारसी लिपि में यह वाक्य लिखा जाय तो इसका रूप यह होगा— لال جون کوہی जो सरलतापूर्वक दूसरे लाम का गोलाई में दबा हुआ भाग दब जाने और जौन को 'जवान' पढ़ने के कारण सीधे 'लार जवान कोही' हो जा सकता है । लाल जौन कोही पढ़ने से अर्थ

में कोई बाधा नहीं रह जाती और प्रसग भी बैठ जाता है जैसे, लाल ऐसा कोहीं-क्रोधी-कलह करनेवाला है कि उसने किसी की बाहें मरोड़ दीं, किसी के हाथों की चूड़ियाँ फोड़ डाली, किसी की मटकी ढुलका दी और किसी की कचुकी फाड़ डाली। रार जब रच्यो कन्हाई फारसी लिपि में इस प्रकार लिखा जायगा-- رار حب رچیو کنہائی

तब इसे 'लाल जवन कोही' पढ़ना अत्यन्त कठिन अवश्य होगा। श्याम सुंदरिया सावरो का शुद्ध रूप श्याम सुदरवा सावरो होना चाहिये।

ध्रुव-पद

ध्रुवपद ध्रुपद धुरपद धुरपत ध्रौपद आदि नामों से प्रसिद्ध सगीत की यह विशिष्ट पद्धति हमारे देश में प्राचीन काल से ही प्रचलित है। इसे भ्रमवश कुछ लोग राग समझते हैं और कुछ लोग ताल परतु ध्रुपद न किसी राग का नाम है और न किसी ताल का। 'ध्रुवपद स्थैर्य गत्यो' के अनुसार ध्रुवपद सगीत की वह विशिष्ट शैली है जिसमें स्थिरता और गंभीरता हो। जिसके पद स्पष्ट हों ताल मध्य लय या विलबित लय में रहे। स्वरों को बिना चचल किए ही गायक परम सावधानी के साथ इच्छित राग का स्वरूप खड़ा करे। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें ठुमरी या ख्याल की तरह तान का अवकाश नहीं रहता। ध्रुपद प्राय: तीन प्रकार का होता है—वदनात्मक अथवा आशीर्वादात्मक, वर्णनात्मक और लक्षणात्मक। वदनात्मक अथवा आशीर्वादात्मक ध्रुपद में या तो किसी देवता की स्तुति की जाती है या किसी को आशीर्वाद दिया जाता है। जैसे—

महादेव आदिदेव देवादिदेव महेश्वर ईश्वर हर।
नीलकठ गिरिजापति कैलासवासी शिवशकर भोलानाथ गगाधर
रूप बहुरूप भयानक बाघबर अबर खप्पर त्रिशूलधर।
तानसेन के प्रभु दीजे नादविद्या सगतसों गाऊँ बजाऊँ वीना कर

गोपालनायक का निम्नलिखित ध्रुपद आशीर्वादात्मक है—

दिल्लीपति नरेन्द्र सिकदरशाह जाके डरते धरणी हिलहिलायो।
दल शाह महिमा अपार अगाध जहाँ गुणी जन विद्या तहँ किरत छायो
नाद विद्या गावे सुनि आलम धावे दीन दुनी के तुमही अवतार आयो।
कहत नायक गोपाल चिरजीव रहौ पादशाह गहनते आय मृग धायो

वर्णनात्मक ध्रुपद वह होता है जिसमें किसी ऋतु का वर्णन हो जैसे—

चादर झूमि झूमि आये बरन बरन बरसन प्रानप्यारे।
सुनि सुनि घनघोर चातक चकोर मोर बोलत सुहाए नंददुलारे।
तैसेई बन कुंज केलिविहरत भुज कंठ मेलि अनुरागे जागे दोउ रूप उजारे
सखिजन बलिहार लेत रूप नैन बिहारी सोहे सूहे बसन हसन मैनवारे॥

तीसरे प्रकार के ध्रुपद में राग या रागिनी के लक्षण कहे जाते हैं जैसे—

गावो रे गावो गुणी प्रथम भैरव सरज सुर राग।
दूजे सुर कंठ कोमल अति सोच समझ लेही
निषाद धैवत पंचम मध्यम गांधार रिषभ साध लाग।
सा म ग सा ग म ग सा सा ध प म ग सा सा नि ध म ग सा
सा नि ध नि नि ध प ध ध प म प प म ग म म ग सा सा नि
ध नि ध प ध प म प म ग म ग रे स ग रे मा।
संगीत रतनाकर मतसों लेहो सुधार वाक् बानी सों राग रङ्ग लेहो माँग।

गायन की ध्रुवपद पद्धति भारत की सर्वाधिक प्राचीन गायन पद्धति है। आज भी सामवेद के मंत्र ध्रुपद पद्धति से ही पढ़े जाते हैं। यद्यपि सामवेद के मंत्रों में राग की व्यवस्था नहीं है फिर भी मंत्रों का पाठ हाथों से समय की गति नापते हुए किया जाता है। इसका लक्षण निम्नलिखित है—

गीर्वाणमध्यदेशीय भाषा साहित्यराजितम्
द्विचतुर्वाक्यसम्पन्नम् नरनारीकथाश्रयम्
श्रृंगाररसभावाढ्य रागालापपदात्मकम्
पादान्तानुप्रासयुत पादान्तयुगकं न वा
प्रतिपादं यत्र बद्धमेवं पादचतुष्टयम्
उद्ग्राहध्रुवकाभोगान्तरं ध्रुवपदं स्मृतम्॥

उक्त लक्षण में भाषा और भाव की दृष्टि से निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

१—ध्रुवपद की भाषा मध्यदेशीय साहित्यिक भाषा होनी चाहिये।
२—नर-नारी की कथा के आश्रय से श्रृंगार रस की स्थिति होनी चाहिए।
३—पदांत में तुक होना ही चाहिए।

मध्यदेशीय से तात्पर्य उस मध्यदेश से है जिसके लिए राजशेखर ने कहा है कि 'यो मध्ये मध्यदेशे निवसति स कविः सर्वभाषानिषण्णः' अर्थात् ब्रज और अवधी भाषाओं का क्षेत्र। संयोग की बात है कि मीर दर्द ने जब उर्दू शैली में सूफियाना कविता करना आरम्भ किया तो उन्होंने कहा कि उर्दू में

यह सर्वथा नई चीज है। इस जबान में आध्यात्मिकता का यह उपवन फूले-फलेगा। मैंने उर्दू शेर की भूमि में बीज वपन कर दिया है:—

फूलेगी इस जबान मे गुलजारे मारफत
मैं या जमीने शेर में यह तुख्म बो गया ।।

नर-नारी कथाश्रय से शृंगार रस की निष्पत्ति का समर्थन करते हुए डाक्टर डी० जी० व्यास ने स्पष्टतः कहा है कि उसमें नायिकाभेद का प्रकरण भी होना चाहिए। आगे हकायके-हिंदी के एक वाक्य को लेकर दिखाया गया है कि नायिका भेद का दूती प्रकरण उसमें किस प्रकार आया है। रागालापपदात्मकम् पद से स्पष्ट विदित होता है कि ध्रुपद में आलाप ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तु है। प्राचीनकाल में ध्रुपद का गान मृदग के साथ किया जाता था। गायकों का ख्याल है कि सितार से सहयोग कर ध्रुपद चौपट हो गया। इस सबध में वे यह कथा कहते हैं कि तानसेन के वशज सुरवसेन के पुत्र रहीमसेन ने अपने पितृव्यों से ध्रुपद न सीखकर अपने ससुर दूलह खां से सितार सीखा। उस समय सितार का विशेष समान न था। फलतः एक बार किसी ने इन्हें चिढ़ाते हुए यह कह दिया कि बस अब आप डिड्डाडा, डिड्डाडा बजाया कीजिये। इस पर रहीमसेन ने आवेश में आकर कह दिया कि यद्यपि ध्रुपद के आगे सितार का कोई मूल्य नही, वह रत्न है यह ककड़ परतु मैं इस ककड़ को ही रत्न के समान बना दूंगा। और उन्होंने सितार में बीन, ख्याल और धुरपद तीनों को भरा। कालिदास के निम्नलिखित श्लोक में जिस मृदग घोष का वर्णन है वह ध्रुपद की सगति में ही बजाया गया प्रतीत होता है:—

तस्यायमतर्हित सौधभाज. प्रसक्त सगीत मृदग घोषः
वियद्गतः पुष्पकचन्द्रशाला क्षणप्रतिश्रुन्मुखराः करोति ।।

[पचाप्सर सरोवर के भीतर भवन में बजाए गए सगीत-मृदंग की ध्वनि आकाश तक पहुँच कर श्री रामचद्र के पुष्पक विमान की चद्रशाला को भी गुंजा देती है।]

हिंदुओं ने ध्रुपद को जो समान दिया था उसकी रक्षा मुसलमानों ने भी की। मुसलमान बादशाहों के दरबार में ध्रुपद की गायकी ही नहीं प्रचलित थी प्रत्युत उस पर शास्त्रार्थ भी होते थे। गोपाल नायक और बैजू बावरा में शास्त्रार्थ होने का प्रवाद भारतीय गायकों में आज भी प्रचलित है। उनके सवाल जवाब निम्नलिखित बताये जाते हैं.—

परज कहाते रिषभ कहाते कहाते उपज्यो सुर गंधार ?
मध्यम कहाते पञ्चम कहाते कहाते धैवत निषाद नार ?
आरोहि कहाते अवरोही कहाते मूर्छना कहाते गीत संगीत की धार
कहै लाल गोपाल सुनिये बैजू बावरे अथाह जाकी गति अगम अपार

और उन्हें उत्तर देते हुए बैजू ने गाया:—

मेघ की सुर परज, रिषभ सुर छागरी, दादुर की सुर है री गंधार
मध्यम तमचुर सुर, पञ्चम कोकिल, केकी सुर धैवत, निषाद सुर कुंजार
आरोह हंससों अवरोह वृषभसों मुरछना सर्पसों गीत संगीत की धार
कहै बैजू सुनिये गोपाल लाल केते गुनी हिरे काहू न पायौ नाद को पार

मुगल बादशाहों में प्रायः सभी के दरबारों में ध्रुपद गाये जाने के प्रमाण उपलब्ध हैं जैसे अकबर के समक्ष तानसेन गाते थे—

> जुगिजुग्त लाग डाट कर देखायो।
> तानसेन कहै सुनौ शाह अकबर प्रथम भैरव गायो॥

जहांगीर के दरबार में यह ध्रुपद गाया गया था—

> तेरे कुल होत आये तिमिर लंग
> अमर बाबर हिमायू दीनदार
> जाके शाह अकबर ताके साह जहाँगीर नरपति नर
> फनराज तेज कायथ दानम को तव भटर॥

किसी गायक ने शाहजहाँ के समक्ष गाया था—

> नर साहजहाँ जहालों रवि ससि नभ रहै और वसुधा
> पर सदा अमर दिन दिन नरखन को।

संगीत के तथोक्त शत्रु आलमगीर औरंगजेब के सामने यह ध्रुपद गाया गया था—

> तुम धरा तोलों मार आय बैठे रतन जड़ित तखत
> साह आनंदन आनंद आलिम बटाई
> साह औरंगजेब तुम कोटि बरस लौं ऐसे ही
> करो करम नाद बधाई।

कहने का तात्पर्य यह कि मुसलमानों में गायन की ध्रुपद पद्धति और हिंदी अर्थात् ब्रजभाषा और अवधी इतनी लोकप्रिय थी कि राजदरबार से लेकर सूफियों के समा तक में उनका प्रवेश हो गया था। यह पहले ही

कहा जा चुका है हिंदू भावापन्न गीतों से कट्टरतावादी मुसलमान चिढ़ते थे। उन्ही को शांत करने के लिए हिंदी गीतों में आए हुए शब्दों की इस्लाम के अनुसार व्याख्या की गयी। फिर भी शायद उन लोगों का आक्रोश बना ही रहा जिसे दूर करने लिये इस प्रकार के ध्रुपदों की रचना हुई:—

हजरत महम्मद रसूल अली बली
मकबूल ख्वाजे हसन बसरी
हजरत अब्दुल वाहिद बिन जैद
फजल बिन आलम सुलतान
इबराहीम अदहम करम काज कीजै

फिर तो कर्बला की लड़ाई का वर्णन भी ध्रुपद पद्धतिसे गाया जाने लगा जैसे —

लडे हसन हुसेन इमाम सैयद सुभट
धूम मची भई जङ्ग ताती।
खेत बिरछाइयो सिंहके छाबडे
भल्ले चले खड्ग गिरे हाथी।
करबला भूमि पर महाभारत भयो
भए सहीद जब नबी नाती।
करै मातम खोदावतक मजलूम कौ
लानत यजीद पर सदा चलि जाती॥

मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने ध्रुवपद खड में निम्नलिखित शब्दों का सग्रह किया है —

सुर्सती (सरस्वती[1]) सुर (स्वर[2]) ताल[3] बधन[4] अनागत[5] अतीत[6] सम[7] नायक[8] भुवनायक[9] बहुरूपी[10] सुढग[11] बेसी(वेशी[12]) जमनिका[13] (जवनिका) पात्र[14] रूप[15], रग[16] गुण[17] कालिमा[18] मांग[19] भरी[20] माग-बिथरी[21] माग सेंदुर[22] अलक[23] जूडा[24] लिलार[25] नासिका[26] बेसरि[27] माथा[28] बारगह[29] टीका[30] तिलक[31] लोचन[32] नेत्र[33] बांके[34] नेत्र छबीले[35] नैन अलसाने नैन[36] भौंह[37] बरुनी[38] कटाक्ष[39] काजल[40] आँख[41] अखियाँ मटकी[42] अखियाँ फड़की[43] सरवन[44] (श्रवन) कर्णफूल[45] (तरौना) कपोल[46] मुख[47] (आनन) अधर[48] लाली[49] पान की लाली[50] रसना[51] मुसकान[52] कन (कण्ठ[53]) कठमाला[54] (रुद्राक्ष) कर[55] अगुरी[56] तटस्थ[57] (तलहथ) छतिया[58] मोटी (कठिन[59]) आभूषण[60]

दो थन[६१] चूचुककी[६२] कालिमा खेलत चीर भरक्यो उभर[६३] गये थन हार हार[६४] पीठ[६५] फुफंदी[६६] (डोरी) जाघ[६७] चरण[६८] पैर के आभूषण[६९] चुस्त चरण[७०] झनकार[७१] आभरण[७२] शृंगार[७३] मोती[७४] मुक्ताहल[७५] मोती[७६] प्रदान करना। गर्दन बंद[७७] नवकरी जुहार[७८], मुनकाय तोड़ो हार[७९] वस्त्र[८०] (चोरी चोला सारी लहँगा पग पगा) राता चुन गिर[८१] तक चुनरी, आचर[८२] पल्लू मृगाजिन[८३] बांकी पुष्टि[८४] वाक वाक्य अँगिया[८५] कंचुकी[८६] कटाओकी[८७] अगियत गाँधभरी[८८] अँगिया अँगिया[८९] फाटी जोबन भार तनी[९०] बंद[९१] काढ कटारिहि[९२] कंच तन बौरी मूर्ख गंवार चोला और है[९३] भाँतिक बाध निवार टूटे[९४] बन्द टूटे बन्द तरके तड़के[९५] कटावों की चोला[९६] दलमली होय रल्ल मे राहुँ[९७] न जाय सुहागिन[९८] सुहागिनि[९९] दुहागि[१००] दुहागिनि बालापन[१०१] नेहर[१०२] तरुनापन[१०३] ससुराल[१०४] बूढ़ापन[१०५] ब्याह[१०६] मांगल[१०७] मांगल[१०८] महेला[१०९] सोहला[११०] सौत[१११] मान[११२] मटकनि मानमती[११३] मानवती जब जब मान[११४] दहन करे तब तब अधिक सुहाग सखी[११५] तुम मान छाड[११६] दई बत हेत है मानमती उठ चल[११७] नेग लाई ब्यागही चतुरदग्ग विद्या निधान रैन मानुस[११८] बासर[११९] बासर भोर[१२०] सूरज सूर्य[१२१] उदय छांह[१२२] दोपहर की[१२३] छांह[१२४] चंद्रमा[१२५] चंद्रमा[१२६] की ठंडक या गरमी में परिवर्तन पवन[१२७] चंदन[१२८] अगर[१२९] केवल[१३०] कमल कुमुदनी[१३१] तरैया[१३२] भोरकी[१३३] तरों तरैयों तुम नहिं मई[१३४] भोर की तरैयों रैन[१३५] कटी तारे गिनत रैन गयी[१३६] पीतम कंठ लागे रैन बिहानी[१३७] पीतम संग लालनकी[१३८] हौं देखन न देहौं तोहुँ[१३९] मन जाऊँ अवधि बदि[१४०] गयी मोसो भवन रति मानी[१४१] तहीं सिधारी[१४२] जहां रति मानी रति के चिह्न[१४३] सब प्रकार के भरे कपोल[१४४] नैन आनन उर कहि देत रति के आनन्द मे पर्दई तौ लैन सुधि[१४५] ने [ति ?] रति मानी जाय अगरो कीन्यो[१४६] मरिजन आध रैहों[१४७] चढाय समीप[१४८] मग बिरह[१४९] वियोग गर्भ[१५०] अगन[१५१] ॥

उपर्युक्त सूची से प्रकट होता है कि मीर अब्दुल वाहिद ने ध्रुवपद शैली से गाये जाने वाले हिंदी गीतों से एक सौ इक्यावन शब्द और पद अपने ध्रुपद खंड में समग्रहीत किए हैं। प्रस्तुत पुस्तक के प्रवीण प्राक्कथन लेखक ने अस्पष्ट शब्दों और पदों के अर्थ पर विशद विचार किया है। वह पर्याप्त भी है। परन्तु पुष्टिमार्ग के संबंध में कोई निर्णय नहीं दिया है। फलतः प्रश्न की गुंजाइश है। पुष्टिमार्ग के संबंध में आचार्य द्विवेदीजी की दो स्थापनाएँ हैं।

पहली यह कि 'फारसी लिपि की घसीट लिखावट और लिपिकारों के प्रमाद से कुछ का कुछ लिख दिया गया है और कुछ का कुछ पढ लिया गया है। दूसरी यह कि यतः प्रसग दली मली सुरतमृदिता साड़ी का है अतः इस शब्द का अर्थ भी कुछ वस्त्र सबधी ही होगा।' वस्तुत बात ऐसी ही है। सारी करामात लिखावट की है।

डाक्टर मोतीचद ने भारतीय वेशभूषा में पुष्पपट्ट नामक एक कपड़े का उल्लेख किया है और उसे फूलदार कपडा बताया है। यह भी कहा है कि सभवतः जामदानी से तात्पर्य हो। उसी पुस्तक में एक दूसरे सूत्र से प्राप्त सूचना के आधार पर यह सभावना प्रकट की है कि संभवतः पुष्पपट्ट किमखाब था और काशी में बनता था।

उक्त पुष्पपट्ट कालांतर में सरलतापूर्वक पुष्पवाट बन गया होगा। वैसे ही जैसे बौद्धों का आयोगपट्ट योगपट्ट बना और फिर जोगबट्टु बनकर जोगवाट बन गया। जायसी ने राजा रतनसेन के जोगीवेश धारण के सबध में लिखा है '—

> चद बदन औ चदनदेहा
> भसम चढाई कीन्ह तन खेहा
> मेखल सिंधी चक्र धधारी
> जोगवाट रुदराछ अधारी

और यदि पुष्पवाट फारसी लिपि में लिखा जाय तो यों लिखा जायगा— پشپواٹ नुक्ते और शोसे के अभाव में इसे कोई भी पुष्टिवाक् पढ़ सकता है। भ्रम से पुष्टिवाक् पढ़ लिए जाने योग्य एक दूसरा शब्द पटवास भी है जिसका बाण भट्ट ने अनेक स्थलों पर प्रयोग किया है जैसे—

१—गधतैलावसेकसुगधिना दीपिकाचक्रवालालोकेन कुकुमपटवासधूलिपटलेनेव पिंजरीकुर्वन्सकललोकम्।

२—ताम्बूलपटवासकुसुमप्रसाधितसर्वलोकम्।

३—मुष्टिप्रकीर्यमाणकर्पूरपटवासपांसुलामनोरथसञ्चरणरथ्या इव यौवनस्य।

४—पटवासपांसुपटलेन प्रकटितमदाकिनीसैकतसहस्रमिव शुशुभे नभस्तलम्।

उक्त वाक्य में जहाँ जहाँ पटवास शब्द आया है हर्षचरित के हिंदी टीकाकारों ने उसका सीधा अर्थ सुगधित वस्त्र लिखने में सकोच किया है। एक सुधी पुरातत्व विद ने पटवास का अर्थ कपडे में लगाने की सुगधि

अथवा इत्र का फाहा माना है। इत्र का फाहा अर्थ मानने में सकोच की बात इतनी ही है कि इत्र का फाहा तभी बन सकता है जब पहले इत्र हो। अत. जब तक यह प्रमाणित न हो जाय कि हर्षवर्द्धन के समय तक इत्र का आविष्कार हो चुका था तब तक पटवास का अर्थ इत्र का फाहा नहीं माना जा सकता। यही आपत्ति कपडे में लगाने के इत्र अर्थ में भी है। हर्ष-चरित के एक आधुनिक संस्कृत टीकाकार का यह अर्थ अधिक ग्रहणीय प्रतीत होता है कि 'एव प्रतीयतेस्म यथा पटवासेन वस्त्रसौगन्ध्यसमादकचूर्णविशेषेणेव पिञ्जलीकृत. इति भाव।' अतः पटवास का सीधा अर्थ है वह वस्त्र जो सुगंधित चूर्ण आदि से सुवासित किया गया हो। उपर्युक्त सभी उद्धरणों में आये हुए पटवास का यह अर्थ ग्रहण करने पर सभी वाक्यों का आशय स्पष्ट हो जाता है जैसे पहले वाक्य का अर्थ होगा कि सुगंधित तेल भरे हुए दीपक के आलोक के बहाने कुकुम और वस्त्रो की रंगाई और उन्हें सुगंधित करने के काम में लाए गए पदार्थ के कणों की धूल से समस्त लोक को पीला करता हुआ सा। इसी प्रकार दूसरे वाक्य का अर्थ यह न होकर कि उदारतापूर्वक वितरण किए गए पान सुगंधियों और फूलो से सभी लोग अलंकृत हुए यह अर्थ होगा कि पान फूल और सुगंधित वस्त्रों के वितरण से सभी लोग शोभित हुए। पान इत्र और खिल्अत में वस्त्र देने की प्रथा भारतीय मुगल दरबार में उसके अंतिम दिन तक जारी रही। इत्र का आविष्कार हिंदू राज्य काल में न होने के कारण इसकी पूर्ति स्वभावतया सुगंधित पुष्पों द्वारा की जाती होगी और जैसे मुगलों के दरबार में पान इत्र और वस्त्र वितरण चलता था वैसे ही उस समय पान फूल और सुवासित वस्त्र का वितरण चलता होगा। वस्त्र सुवासित करने वाले चूर्ण के अर्थ में 'पटवास' का प्रयोग केशव ने भी किया है.—

जल थल फल फूल भूरि अबर पटवास धूरि स्वच्छ जच्छ कर्दम हिय देखत अभिलाखे।

प्रसादजी के संस्मरण लिखते हुए श्री रायकृष्णदासजी ने लिखा है कि सुरती बनाने में प्रसादजी को विविध भाँति के सुगंधित द्रव्यों का प्रयोग करना पड़ता था। फलत जो सुगंधित पानी बचता था उसमें प्रसादजी अपने घर के कपड़े और कभी-कभी राय साहब के घर से भी कपड़े मंगवाकर रंग दिया करते थे। उन वस्त्रों पर हलका रंग चढ़ जाता था और उसमें से भीनी भीनी सुगंध हफ्तों निकला करती थी। इस प्रकार रायसाहब ने जो विवरण उपस्थित किया है उससे यह अनुमान भी किया जा सकता है कि इस

प्रकार वस्त्रों को रंगने और सुगंधित करने की कल्पना संभवतः हर्षचरित के पटवास शब्द से ही प्रसाद जी के मस्तिष्क में जागरित हुई। उनकी कल्पना का स्रोत यह भी हो सकता है। तीस तैंतीस वर्ष पूर्व तक या यों कहिये कि खादी और स्वदेशी आन्दोलन प्रारम्भ होने के पहले तक मथुरा के गोस्वामियों में आबेरवाँ का दुपट्टा सुगंधित कर ओढ़ने की चाल थी। खस, छारछबीला, नागरमोथा, पानड़ी, अगर, तगर, केशर, कस्तूरी, चन्दन चूरा, हर सिंगार की डण्डी आदि को औंटाकर और उसमें रंग कर सन्दली दुपट्टा तैयार किया जाता था।

बोलचाल में किसी मानिनी के कुपित होकर आचरण करने की क्रिया को खटवास पटवास लेकर पड़ जाना कहते हैं। खटवास तो खाट पकड़ने के अर्थ में है परंतु पटवास का अर्थ इसमें पहनने का वस्त्र है। हिंदी शब्दसागर में पटवास का अर्थ लहँगा दिया भी है। अत विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि पुष्टिवाक् पढा जानेवाला शब्द अपने मूल रूप में पुष्पवाट या पटवास रहा होगा।

ध्रुवपद खंड में मीर अब्दुल वाहिद ने जितने शब्द संग्रहीत किए हैं उन सब में से सरस्वती सुर ताल बंधन अनागत अतीत सम भुवनायक और सुढंग ऐसे शब्द हैं जो ध्रुवपदों में प्रचुरता से प्राप्त होते हैं। शेष शृंगारी साहित्य में भरे पड़े हैं। कुछ तो ऐसे भी हैं जो संस्कृत के रस साहित्य में भी प्रयुक्त हुए हैं और अपने रसीलेपन के कारण उन भावों ने हिंदी गीतों और कवित्तों में भी स्थान प्राप्त किया है। उदाहरण के लिये 'मैं पठई तो लैन सुधि मैं (तै) रति मानी जाय।' अर्थ यह कि नायिका ने नायक को मना लाने के लिये अपनी सखी को उसके पास भेजा परंतु नायक के पास जाकर वह स्वयं उस पर रीझ रही। जब वह लौटकर नायिका के पास आयी तो उपालंभ देते हुए उसने कहा कि मैंने तो तुझे उसकी खबर लेने के लिये भेजा था परंतु तू वहाँ जाकर स्वयं उसके प्रेम में फँस गई।

सन् १३६३ ई० में संग्रहीत ग्रंथ शार्ङ्गधर पद्धति में दूती का उपहास करती हुई नायिका कहती है—

> बहुनात्र किमुक्तेन दूति मत्कार्य सिद्धये।
> स्वभासान्यपि दत्तानि वक्तव्येषु तु का कथा॥

अधिक बकवाद की आवश्यकता ही क्या है। अरी दूती मेरा कार्य सिद्ध करने के लिये तूने तो अपना मांस तक दे दिया। बात की बात ही क्या है।

अमरु शतक में यह भाव और भी खटमिट्ठे रूप में प्रकट किया गया है जैसे—

निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्मृष्टरागोऽधरो
नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः।
मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमा
वापीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम्॥

यह देखकर कुतूहल होता है कि अकबर के महामन्त्री अबुल फजल ने आईने अकबरी में संस्कृत साहित्य शास्त्र विषयक अपने ज्ञान का परिचय देते हुए इन्च हू यही श्लोक उद्धृत किया है।

इनका सीधा अनुवाद पद्माकर ने किया—

धोय गयी केसर कपोल कुच गोलनकी
पीक लीक अधर अमोलन लगाई है।
कहै पद्माकर त्यों नैन हू निरंजन भे
तजत न कंप देह पुलकनि छाई है।
बाद मति ठानै झूठवादिनि भई री आज
दूतपन छोड़ धूतपनमें सोहाई है।
आई तोहि पीर न पराई महा पापिनी तू
पापी लौं गई न कहूँ वापी न्हाय आई है॥

परतु इसी श्लोक के एक दूसरे भावानुवाद के साथ अर्वाचीन हिंदी के एक साहित्यकार हरिऔधजी का एक संस्मरण भी जुड़ा हुआ है। प्राय बीस वर्ष पूर्व नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा आयोजित भारतेंदु जयंती के अवसर पर हरिऔधजी ने भाषण किया था कि मैंने बचपन में भारतेंदु को उस समय देखा था जब कि मैं अपने गुरु बाबा सुमेरसिंह के साथ काशी आया था। भारतेंदु उनसे मिलने आए। उनके साथ हनुमान कवि भी थे जिन्होंने कविता सुनाने की फर्माइश होने पर निम्नलिखित कवित्त सुनाया था—

आई अनमनी सी वदन पियराई छाई
सुधि न रही है कछू आपने पराये की।
कहति कछू है सुन कहत कछू सी कछू
देखति हौं आज तेरी गति मतवारे की।
नेकु गिर गै कै बैठु हार लोग वारी तो पै
न तौ हनुमान तेरी भगिनी है कारे की।

नजर परो री मो पै पठई कहाँ ते तहाँ
नजर लगी री तोहिं जुलफनवारे की ।।

यद्यपि प्रसगांतर है तथापि उल्लेख्य है कि उक्त कवि को भारतेंदु ने दुशाले से और बाबा सुमेरसिंह ने अगूठी से पुरस्कृत किया। जैसा कि दिखाया जा चुका है 'मैं पठई तो लैन सुधि तैं रति मानी जाय' में भी वही भाव है। पूरा वाक्य ध्रुपद शैली के किसी गीत का नहीं प्रत्युत किसी दोहे का अर्द्धांश है और दोहा ध्रुपद शैली में शायद नहीं गाया जा सकता क्योंकि ध्रुपद में पद के जिस विस्तार की आवश्यकता पड़ती है वह दोहे से सभव नहीं। ध्रुपद खड में एक दोहा उद्धृत है भी—

सावन आवत देखि कै हे सखि तोरौं हार
लोग जानि मुतिया चुनै हौं नय करौं जुहार ।।

उक्त दोहे में अभिधेयार्थ है कि प्रिय को आते देखकर हे सखी मैंने मोतियों का हार तोड डाला। लोकजन टूटे हुए हार के मोती चुनने लगे और मैं झुककर प्रियतम के चरणों में प्रणत हो गई। मीर साहब के अनुसार यह गूढ़ार्थ है कि प्रियतम से मिलने के लिये मैंने अपने सांसारिक बधन तोड डाले और प्रियतम के समक्ष नम्रता से नत हो गई। दुनिया वालों ने मेरे इस कार्य से उपदेश ग्रहण किया।

जान पडता है जैसे मीर अब्दुल वाहिद कृष्णलीला सबधी पदों को विष्णुपद समझते थे वैसे ही उन गीतों को जो कृष्ण लीला से सबंध नहीं रखते थे परतु जिनमें अभिधेयार्थ के साथ गूढ़ार्थ भी निश्चित रहता था उसे ध्रुवपद मानते थे अर्थात् वह निश्चित पद जिसमें गूढ़ार्थ भी अवश्य हो। मीर साहब ने इन दोहों का जो परिचय दिया है वह भी महत्वपूर्ण है। इस दोहे को उन्होंने गवाई राग में गाया जाने वाला बताया है। परतु छ राग छत्तीस रागिनी और उनके रावण जैसे भारी भरकम परिवार में किसी का नाम गवाई नहीं मिलता। डाक्टर कृष्णमाचारी ने अंग्रेजी में लिखित अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में राजा लक्ष्मणसेन की सभा के प्रमुख कवि धोयी को Gavai Dhoyi Kaviraj गवई धोयी कविराज लिखा है और गवई का अर्थ गवैया माना है जिससे अन्य लोग सहमत नहीं हैं। यहाँ गवाई का अर्थ गेय पद जान पड़ता है। या यह भी हो सकता है कि गौरी रागिनी हो जो 'गवरी' लिखावट के कारण 'गवई' अथवा 'गवाई' पढ़ ली गयी हो।

प्रस्तुत पुस्तक के तीसरे अध्याय में मीर अब्दुल वाहिद ने इन पदों से शब्द संग्रहीत किए हैं जिनकी गणना न तो ध्रुपद में की जाती है और न विष्णुपद में। इसमें निम्नलिखित शब्दों वाक्यखंडों तथा दोहे चौपाइयों का संग्रह है—

मयाला व[1] नाह पाला महाला[2] कौंच[3] चूर लमते जाइ[4] न जाय जाइ लगत, मरत[5] कउ लाग प्यारी पवन अनमका मीव जनाया[6] कामी कत बहुरि फिन लाया फूल[7] या पुहुप बसत[8] पचम[9] हार[10] (हमेल) चांसर[11] मेहरा[12] हो बलिहारी साजना[13] साजन नो बलिहार हौं साजन सिर मेहरा[14] साजन मुख गलहार पुर[15] नौलासी[16] कोकिला[17] भेवर[18] (भौरा) मालती[19] तरवर भेख फिर[20] आया मेरो चोला झटना[21] छ्वर मग हो चाचर[22] देलो सरव अंग कोंची कलियों[23] न तोर मुरझ गयीं डालियाँ दो थन हाथ न लावा[24] पावा नालियो इह बन फूलि पुडरिया[25] इह बन तोम ले चल रानी[26] के दुलहा अपने देस साजन आओ[27] हमारी बारी हम तन फूलि फूलन फुलवारी[28] तुझ कारन मैं सेज सवारी तन मन जोबन[29] जिह बलिहारी नन्ह नन्ह पात जो अचली मरहर पेड़ खजूर[30] तिन चढ़ि देखो बालमा नियरे बसे कि दूर इह सुहागिन मुख न जोह[31] ढेल गदों गल याहि थाल भरी[32] गजमोतिनहि गोद भरी कलियाहि मीत चिरातन परिहरो[33] भूली बौंन दुलास अटुनहार[34] वनस्पति बरखा[35] (वर्षा) मेह[36] स्वाति नखत स्वाती नक्षत्र[37] अथवा बूंद सेवाती झकोर[38] (झकोर) बड़ी बदी[39] बूंदन फुहि[40] पपीहा[41] दादुर[42] मोर[43] दामिनी[44] कुम[45] बक[46] चकई[47] सारस[48] घन गरजे[49] बरसे[50] पहना हरिया चोला बीरबहूटी[51] ऊंच ख्याल फिर[52] नोर हिलोरा अध कूप[53] निसि पैव ब[54] हिंडोला फूल[55] हिंडोला बाय दिया झूला जो[56] पिया दूर सिमरे[57] हिंडोले न पाव धरो जोबन[58] लहरें ले दुइ[59] गांभ चार[60] रति कंवल[61] (कमल) भौरा[62] तितरी[63] त्योहार[64] (दिवाली होली) प्रियतम[65] सग तन होली कीन्हा धुरहटी[66]।

तीसरे अध्याय में संग्रहीत इन ६६ शब्दों और वाक्यांशों और पदों के अध्ययन से जान पड़ता है कि जैसे मीर साहब ने ध्रुपद के अन्तर्गत कृष्ण-लीलेतर परंतु गूढार्थ समन्वित पदों से शब्द संग्रह किये हैं और कृष्णलीला संबंधी पदों को विष्णुपद के अंतर्गत लिया है वैसे ही तृतीय अध्याय में उन्होंने मसनत, सूफी शब्दों से शब्द संग्रहीत किये हैं। दोहा चौपाई के

साथ ही बरवै छंद तक का प्रयोग इस धारणा की पुष्टि करता है। जैसे

हम तन फूलि फूलन फुलवारी
तुम्ह कारन मैं सेज सवारी

चौपाई है और

नन्ह नन्ह पात जो अंवली, सरहर पेड़ खजूर।
तिन चढि देखौं बालमा, नियरे बसै कि दूर ॥

दोहा है वैसे ही यह बरवै का अर्द्धांश है—

इह बन फूलि पुडरिया
उह बन तीस ॥

पिछले खेवे के हिन्दी सूफी कवियों ने बरवा छन्द का प्रयोग आरम्भ कर दिया था। नूर मुहम्मद के प्रसग में आचार्यवर शुक्ल जीने अपने इतिहास में लिखा है कि—'एक विशेषता और है। चौपाइयों के बीच बीच में इन्होंने दोहे न रखकर बरवे रखे हैं।'

साथ ही उक्त ६६ शब्दों में शायद ही ऐसा कोई शब्द हो जिसका प्रयोग जायसी के पदमावत में न मिलता हो। यह तथ्य भी इसी धारणा की पुष्टि करता है कि मीर अब्दुल वाहिद ने तीसरे अध्याय में सूफी काव्यों से ही शब्द लिये हैं। कतिपय उदाहरण अप्रासगिक न होंगे जैसे—

सयाला व माह पाला—लागेउ माघ परै अब पाला। महाला महवट के अर्थ में आया प्रतीत होता है। कौच जैसा कि द्विवेदीजी ने लिखा हैं कौंध है। अत महाला का अर्थ महवट होना चाहिये जैसे—नैन चुवहिं जस महवट नीरू। महवट को कुछ लोग माघ मास की वर्षा मानते हैं परतु सैयद इशा ने मौसिमे बरसात में इसका वर्णन किया जैसे—

इस मौसिमे बरसात में क्यों घर न रहें हम
आखें भी बरसती हैं महावट के बराबर ॥

'सूर सप्त ते जाड़ न जाय' का अर्थ यदि 'सौर सपेती आवे जूड़ी' के जोड़ पर न भी लगाया जाय तो भी कोई हानि नही। सात सात सूर्यों के उदय से भी जाड़ा नहीं जाता इतना ही अर्थ पर्याप्त है।

इस सग्रह में एक शब्द है नोलासी। वैसे तो नवला का अर्थ तरुणी होता ० परंतु मीर वाहिद के अनुसार सूफियों में उन बहुत सी दशाओं एवं

ईश्वर की अनेक अनुकंपाओं की ओर संकेत किया जाता है जो अत्यधिक संख्या में प्राप्त होती रहती हैं। यह सांकेतिक अर्थ ग्रहण करने पर मान लेना होगा कि नौलाखी पाठ अशुद्ध है और उसकी जगह नौलाखी होना चाहिए। इस संग्रह का 'अष्टुनहार वनस्पति' भी विचारणीय है। यह किसी दोहे का प्रथम चरण जान पड़ता है। इसकी व्याख्या में लिखा है कि यदि हिंदी वाक्य में अष्टुनहार वनस्पति का उल्लेख हो तो इसका तात्पर्य १८००० जगत् से होता है और कभी-कभी ७२ सम्प्रदायों तथा इसी प्रकार की वस्तुओं की ओर संकेत होता है। इस कथन से अनुमान लगाया जा सकता है कि जैसे वियोगावस्था में रुदन से वृक्ष के पत्तों तक के झड़ जाने का वर्णन किया जाता है कुछ ऐसा ही भाव यहाँ भी है। नागमती के विरह वर्णन में जायसी ने लिखा है :—

जेहि पंखी के नियर होइ, कहै बिरह कै बात।
सोई पंखी जाइ जरि तरिवर होइ निपात॥

अतः अष्टुनहार या तो अंसुवनधार या हार था जिसके कारण वनस्पति के झड़ने का उल्लेख किया गया होगा या ओट निहार वनस्पति जैसी कोई चीज होगी जिसका भाव 'तृन धरि ओट कहति वैदेही' से मिलता जुलता होगा। परंतु संभावना अंसुवनधार या हार की ही है क्योंकि अष्टुनहार का जो सांके-तिक अर्थ बताया गया है उसकी उपलब्धि अंसुवनहार या धार मानने से ही होगी।

इस प्रकार विचार करते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हकायके हिंदी में वे शब्द संग्रहीत किये गये हैं जो हिंदी के गीतों और काव्यों में प्रचुरता से प्रयुक्त होते रहे हैं। गाने बजाने के प्रेमी सूफी मुसलमानों में ये गीत और काव्य बहुत लोकप्रिय थे परन्तु कट्टरतावादी कानोंमें ये कटु जँचते थे जिससे कारण सूफियों ने इन हिंदी शब्दों का सांकेतिक अर्थ बताना आरंभ किया। १५६६ ई० तक जितने शब्दों का सूफी दृष्टिकोण से अर्थ निश्चित हो गया था उन सबका संग्रह कर मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत बड़ा काम किया। मीर साहब के इस ग्रंथ का हिंदी अनुवाद प्रस्तुत कर डाक्टर सैयद अतहर अब्बास रिजवी ने भी हिंदी की जो सेवा की है उसके लिये वे भी बधाई और धन्यवाद के पात्र हैं। आचार्य हजारी प्रसाद जी द्विवेदी का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने प्राक्कथन लिखकर मेरा बोझ बहुत हलका कर दिया। अपनी सहज उदारता के कारण वे मुझ पर यदाकदाचित कृपा करते रहते हैं।

उन्हें शिष्टाचारगत कोरा धन्यवाद देकर उसका महत्त्व घटाना नहीं चाहता। पुस्तक में मुद्रण सम्बन्धी भूलों के लिए मैं पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ। इसी स्थल पर डाक्टर रिजवी से भी निवेदन है कि यदि वे अगले संस्करण में नागरी अक्षरों में मूल पाठ भी दे दें तो पाठकों को अधिक सुविधा होगी। बिडला ग्रंथमाला में मेरे सहायक श्री कल्पनाथ सिंह ने जिस निष्ठा के साथ अपने कर्तव्य का निर्वाह किया है उसके लिए उन्हें साधुवाद। साथ ही सर्वाधिक धन्यवादार्ह हैं वे सूफी मुसलमान जिन्होंने सार्वदेशिक और सार्वकालिक 'प्रेम की पीर' का अलौकिक अनुभव किया और गोस्वामी तुलसीदास जी के इस कथन का प्रमाण उपस्थित कर दिया कि—

उरबी परि फलहीन होइ,
ऊपर फला प्रधान
तुलसी देखु कलाप गति
साधन घन पहिचान ॥

दीपमालिका, सं० २०१४ वि०
वाराणसी

—रुद्र काशिकेय
प्रधान संपादक
बिड़ला ग्रंथमाला

दो शब्द

हकाएके हिंदी मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी की उस समय की कृति है जब अकबर पाखंडी आलिमों के चगुल से निकल न सका था और उसके शासन काल के केवल १० वर्ष ही व्यतीत हुए थे अतः इस पुस्तक को समकालीन बादशाह की देन नहीं अपितु समय की पुकार समझना चाहिए जब कि मुसलमान सूफियों को इस बात का विश्वास हो गया था कि हिंदू धर्म के सिद्धात समझना तथा दूसरों को समझाना परमावश्यक है। शेख अब्दुल नबी तथा मखदूमुलमुल्क मुल्ला अब्दुल्ला सुल्तानपुरी के जोर के आगे, जो संकीर्ण विचार से सुन्नी मुलमानों के अतिरिक्त हिंदुस्तान में किसी को भी जीवित रहने देना नहीं चाहते थे, मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी जैसे सूफियों का यह प्रयास हिंदुओं और मुसलमानो के एक दूसरे के साहित्य एवं धर्म से अत्यंत प्रभावित होने का बहुत बड़ा प्रमाण और हिंदी की लोकप्रियता का साक्षी है।

यह पुस्तक जिसकी किसी अन्य प्रति का कोई पता नहीं, मुझे प्राप्त हो सकी, इसके लिये मै अपने आप को बड़ा भाग्यशाली समझता हूँ। मै काशी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी के विशेष रूप से आभारी हूँ जिनके सतत प्रयत्नो के फलस्वरूप यह पुस्तक काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुई। इस पुस्तक का प्राक्कथन भी डाक्टर साहब की महती कृपा का फल है। उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री डा० संपूर्णानंद की सेवा में जब मैंने यह पुस्तक प्रस्तुत की और इस बात की आशा चाही कि मै उसे उनके चरणों में अर्पित कर सकूँ तो डाक्टर साहब मेरे प्रोत्साहन हेतु इस बात पर विशेष आपत्ति प्रकट न की। मैं डा० साहब के प्रति जितनी भी कृतज्ञता प्रकट करूँ, कम है।

कहा जाता है कि अब्दुर रहीम खानेखानाँ कहीं यात्रा को जा रहे थे। एक भिखारी अपनी ताँबे की पतीली लिए उनके पास घुसा ही जा रहा था। लोगों ने उसे रोका किंतु खानेखानाँ ने उसे अपने पास बुलाकर उसके विषय में पूछा। उसने उत्तर दिया मैंने सुना है कि महान व्यक्तियों के स्पर्श मात्र से ताँबा सोना हो जाता है। मैं इसकी परीक्षा करना चाहता था।

खानेखानाँ ने उसे पतीले के बराबर सोना तुलवा दिया। कथन सत्य ही निकला। मुझे भी विश्वास है कि डा० साहब के चरणों में पहुँचकर यह तुच्छ प्रयास भी बहुमूल्य हो जाएगा।

सैयिद अतहर अब्बास रिज़वी
(एम० ए० पी एच० डी०
यू० पी० एजूकेशनल सर्विस)

लखनऊ
६-२-५७

प्राक्कथन

मेरे मित्र डा० सैयद अतहर अब्बास रिजवी ने फ़ारसी के बहुमूल्य आकर ग्रंथों का हिंदी भाषांतर प्रकाशित करने का बड़ा स्तुत्य प्रयास आरंभ किया है। अबतक 'खलजी कालीन भारत' 'आदि तुर्क कालीन भारत', 'तुगलक कालीन भारत'—जैसे महत्त्वपूर्ण अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। जिस लगन और उत्साह के साथ डा० रिज़वी ने इस काम को हाथ में लिया है उसे देखते हुए यह आशा होती है कि बहुत शीघ्र ही फ़ारसी भाषा में लिखा हुआ वह पूरा साहित्य, जो हमारे मध्यकालीन भारतीय इतिहास का प्रधान स्रोत माना जाता रहा है, प्रामाणिक रूप में हिंदी पाठकों के सामने आ जाएगा। इन ऐतिहासिक ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य अनेक फारसी ग्रंथों का भी अनुवाद आपने प्रस्तुत किया है। मीर अब्दुल वाहिद की 'हक़ाएक़े हिंदी' उन्हीं महत्त्वपूर्ण पुस्तकों में एक है। मीर अब्दुल वाहिद का जन्म सन् १५०६ ई० के आसपास हुआ था अर्थात् ये सूरदास के समकालीन थे। ये हरदोई जिले के प्रसिद्ध बिलग्राम नामक स्थान के निवासी थे जिसके बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि 'यहाँ अच्छे अच्छे विद्वान मुसलमान होते आए हैं। अपने नाम के आगे 'बिलग्रामी' लगाना एक बड़े सम्मान की बात वहाँ के लोग समझते थे'। सन् ईस्वी की १८ वीं शताब्दी के मध्य भाग में मीरगुलाम अली आज़ाद बिलग्रामी ने 'मआसिरुल केराम' नाम की एक पुस्तक लिखी थी जिसमें बिलग्राम के सूफ़ियों और कवियों का इतिहास है। हिंदी के रससिद्ध कवि सैयद मुबारक अली बिलग्रामी (जन्म सन् १५८३ ई०) इसी बिलग्राम के निवासी थे जिनकी 'अलक शतक' और 'तिलक शतक' नामक पुस्तकें काफी प्रसिद्ध हैं। फिर सैयद गुलाम अली 'रसलीन' (रचनाकाल सन् १७३७ ई०) भी यहीं के निवासी थे जिनका 'अंग दर्पण' और 'रस प्रबोध' सहृदयों में बहुत समादृत है।

'हक़ाएक़े हिंदी' बहुत महत्त्वपूर्ण रचना है। मीर अब्दुल वाहिद ने इस पुस्तक में हिंदी ध्रुपद और विष्णुपद गानों में लौकिक शृंगार के वर्ण्य विषयों का आध्यात्मिक रूप में समझने की कुंजी दी है। रिज़वी साहब ने लिखा है कि "इन हिंदी कविताओं में भारतीय तथा हिंदू संस्कार मूल रूप से

विद्यमान रहते थे। हकाएके हिंदी के अध्ययन से पता चलता है कि ध्रुपद तथा विष्णुपद को सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त थी। श्रीकृष्ण तथा राधा की प्रेमकथायें सूफियों को भी अलौकिक रहस्य से परिपूर्ण ज्ञात होती थीं। इन कविताओं का 'सभा' में गाया जाना आलिमों को तो अच्छा लगता ही न होगा कदाचित् कुछ सूफी भी इन हिंदी गानों की कटु आलोचना करते होंगे, अतः इन कविताओं का आध्यात्मिक रहस्य बताना भी परम आवश्यक सा हो गया। अब्दुल वाहिद सूफी ने 'हकाएके हिंदी' में उन्हीं शब्दों के रहस्य की बड़ी गूढ़ व्याख्या की है जो उस समय हिंदी गानों में प्रयोग में आते थे।"

वैसे तो लौकिक प्रतीकों की आध्यात्मिक रूप में व्याख्या करना ससार के सभी धर्मग्रथों में मिल जाता है परतु मध्यकाल में लौकिक प्रतीकों से आध्यात्मिक तत्त्वों की ओर इगित करना विशिष्ट रूप में प्रकट होता है। भारतवर्ष के धार्मिक साहित्य में सन् ईस्वी की पाँचवीं-छठीं शताब्दी में तत्र प्रभाव व्यापक रूप से दिखाई देने लगता है, और ऐसी साधनाओं का प्रवेश होता है जो धर्मशास्त्रीय दृष्टि से बहुत अच्छी नहीं समझी जातीं। धीरे धीरे उनकी आध्यात्मिक व्याख्या शुरू होती है और लौकिक प्रतीकों का आध्यात्मिक अर्थ किया जाने लगता है। योगियों, सहजयानियों और शाक्ततान्त्रिकों के ग्रथों में साधना को गुह्य रखने की प्रवृत्ति बढ़ने लगती है। बौद्ध तान्त्रिकों में "सध्या भाषा" या "सधा भाषा" के नाम से इस गूढ़ भाषा को स्मरण किया जाता है। परवर्ती काल में नाथ योगियों और कबीर-दास आदि निर्गुणमार्गी योगियों में उलटबासियों का जो स्वरूप प्राप्त होता है वह इसी सध्या भाषा का परवर्ती रूप है। मैंने अपनी कबीर नामक पुस्तक में दिखाया है कि लौकिक प्रतीकों की आध्यात्मिक व्याख्या करने में टीकाकारों ने काफ़ी स्वतंत्रता का परिचय दिया है। कुछ प्रतीक तो सप्रदायों में रूढ़ हो गए हैं। परतु अधिकाश के बारे में अर्थ करते समय मूल सिद्धात को दृष्टि में रखकर स्वाधीनतापूर्वक अर्थ कर लिया गया है। एक ही पद में आए हुए एक ही शब्द को भी कभी कभी भिन्न भिन्न टीकाकारों ने भिन्न-भिन्न अर्थों में ग्रहण किया है। सहजयानी सिद्धों, नाथपथी योगियों और निर्गुण सतों के साकेतिक अर्थों का विचार करने पर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि जिन साकेतिक अर्थों में प्रस्तुत अर्थ का अप्रस्तुत अर्थ द्वारा निगिरण हो गया होता है वहाँ धर्म ही सकेत का कारण होता है, धर्मी नहीं। दूसरे

शब्दों में कहा जाय तो जब सिद्ध योगी लोग मन को मच्छ या हरिण कहते हैं तो चाचल्य धर्म की ही ओर संकेत होता है। यथा-प्रसग कोई भी चाचल्य धर्मी अप्रस्तुत उसका लक्ष्य हो सकता है। इस प्रकार यही चाचल्य-धर्मी हरिण या मच्छ अन्य साधर्म्य वश (जैसे भीरुत्व) किन्हीं अन्य वस्तुओं के द्योतक भी हो सकते हैं। 'हरिण' या 'मच्छ' शब्द के साधर्म्य के प्रसगवश कई पदार्थ ग्रहण किए जा सकते हैं इसीलिये प्रतीकों की व्याख्या करते समय मूल सिद्धात को ध्यान में रखना आवश्यक है।

सूफी साधना का केंद्रबिंदु प्रेम है। वह प्रेम भी लौकिक नहीं बल्कि लोकोत्तर प्रेम। वैष्णव साधकों में भी यह बात पाई जाती है। वस्तुतः जगत् के समस्त लौकिक क्रियाकलाप का चिन्मुखीकरण ही वैष्णव साधकों का, और सूफी साधकों का भी, प्रधान लक्ष्य है। चिन्मुखीकरण वैष्णवों का पारिभाषिक शब्द है। ससार के जितने भी सबंध हैं वे सभी जड़ोन्मुख न होकर चिन्मुख हो जायँ तो मनुष्य के सर्वोत्तम पुरुषार्थ के साधक हो जाते हैं। जड़ोन्मुख प्रेम प्रेमी को समस्त बाह्य जगत् से अलग कर देता है और उसमें पृथक्त्व-बुद्धि उत्पन्न कर देता है। अपने को समस्त जगत से पृथक् समझने की बुद्धि अहंकार की देन है जो वस्तुतः जड़प्रकृति का चित्संपर्क से उत्थित सक्षोभ मात्र का परिणाम है। इसीलिये जहा पृथक्त्व बुद्धि है वहा जड़िमा का प्राधान्य है। पुत्र, कलत्र, धन-सम्पत्ति आदि के बारे में जो राग है वह भगवत् प्रेम से बहुत भिन्न नहीं परंतु फिर भी यदि वह पृथक्त्व बुद्धि उत्पन्न करता है तो जड़ोन्मुख हो जाता है अर्थात् जड़ वस्तुओं की ओर उसकी प्रवृत्ति हो जाती है। जब वह चेतन की ओर उन्मुख होता है तो वह विश्वजनीन प्रेम के रूप में प्रकट होता है और धन्य हो जाता है। भागवत में कहा है कि जो प्रेम पुत्र कलत्र धन इत्यादि में पृथक्त्व बुद्धि से किया जाता है वह असत् होता है किंतु उसी प्रेम को यदि अपृथक्त्व बुद्धि से किया जाय तो वह सत् हो जाता है क्योंकि वह सबका मूल-निषेचन करता है—

यद् युज्यतेऽसुवसुकर्ममनोवचोभिर्देहात्मजादिषु नृभिस्तदसत् पृथक्त्वात्।
तैरेव सद्भवति यत् क्रियतेऽपृथक्त्वात् सर्वस्य तद्भवति मूल-निषेचनं यत्॥
८-९-२९॥

यह अपृथक्त्व बुद्धि जिस प्रक्रिया से उत्पन्न होती उसीका नाम चिन्मुखी-करण है। भाव यह है कि मनुष्य अपनी समस्त रागात्मक वृत्तियों को जड़

आए हुए प्रतीकों के आध्यात्मिक संकेतों का विस्तारपूर्वक विवरण दिया है। मुहसिन फैज काशानी प्रतीकों से तुलना करने पर इनमें कहीं कहीं अंतर दिखाई देगा। जैसे नेत्र के लिये मीर अब्दुल वाहिद ने तीन आध्यात्मिक अर्थ बताए हैं प्रथम (१) तो उस नाम की ओर संकेत होता है जो दो रूपी संसार को प्रकट करता है तथा ऐसे विशेषणों का योग है जो एक दूसरे के विरुद्ध हैं फिर (२) कभी बसीर (द्रष्टा, ईश्वर) के नाम के अर्थ की ओर संकेत होता है और कभी कभी (३) मोमिन (धर्म निष्ठ) की बुद्धि और ज्ञान तथा उससे शिक्षा ग्रहण करने वाले नेत्रों की ओर संकेत होता है। किंतु काशानी ने इसी शब्द का संकेत परमात्मा का अपने दासों और उनकी स्वभाव की ओर देखने को बताया है। इसी प्रकार और शब्दों के अर्थ में भी थोड़ा बहुत अंतर खोजा जा सकता है। इसका मतलब यह हुआ कि प्रसंगवश एक ही शब्द को भिन्न-भिन्न अर्थ में लिया जा सकता है। जो आध्यात्मिक संकेत बताए गए हैं वे साधर्म्यवश किसी अन्य प्रसंग में अन्य अर्थ को भी ध्वनित कर सकते हैं।

मीर अब्दुल वाहिद की यह पुस्तक कई दृष्टियों से बहुत ही महत्वपूर्ण है। उससे सोलहवीं शताब्दी के पूर्व की ब्रज भाषा और उसके साहित्य का आभास तो मिलता ही है, सूफी साधकों की उस उदार दृष्टि का भी पता चलता है जिससे उन्होंने हिन्दू और मुसलमान धर्म की मूलभूत एकता को खोज निकाला था। मीर अब्दुल वाहिद ने कुरआन और हदीस से प्रमाण देकर अपने आध्यात्मिक संकेतों की प्रामाणिकता सिद्ध की है। उनका यह प्रयास बहुत ही उत्तम और श्लाघ्य हुआ है। इससे उनकी गंभीर निष्ठा, अद्भुत भक्ति और अत्यंत उदार दृष्टि का संधान मिलता है। उन्होंने केवल शब्दों के आध्यात्मिक संकेत बताकर ही विश्राम नहीं लिया बल्कि इन शब्दों को आश्रय करके जो विचार बन सकते हैं और बनते हैं उनको भी समझाने का प्रयत्न किया है। हिंदी के सूफी साहित्य के अध्ययन के लिये यह पुस्तक महत्वपूर्ण सिद्ध होगी और साथ ही उस उदार भावधारा को प्रत्यक्ष कराएगी जिसके अभाव में हमारा देश खंडित और विच्छिन्न होता जा रहा है।

इस पुस्तक को पढते समय मुझे ऐसा लगा कि ब्रजभाषा के कई शब्द फारसी प्रतिलिपिकारों ने ठीक न समझने के कारण अशुद्ध लिख दिए हैं, या यह भी सम्भव है कि वे ठीक ठीक पढे न जा सके हों। कई शब्दों के बारे में तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उनके स्थान पर मूल शब्द क्या

रहा होगा किंतु कई के बारे में कुछ साफ समझ में नहीं आया। पृष्ठ ३८ पर 'भुवनायक' शब्द है जो वस्तुतः बहुनायक रहा होगा। तानसेन के भजनों में 'तानसेन के प्रभु बहुनायक' कई बार आया है। इसी तरह उसी पृष्ठ पर 'वेनी' शब्द है जो संस्कृत के वैदिक का रूप जान पड़ता है। मिर्ज़ा खान ने अपने 'तुहफ़तुल हिंद' में 'बेदिक' लिखा है जो संस्कृत 'वैदिक' शब्द का ब्रजभाषा रूप है (मौलाना ज़ियाउद्दीन संपादित ए ग्रामर आफ दि ब्रज भाषा, पृ० २२)। पृ० ४० पर बारगह शब्द आया है जो लिलार और माथा के प्रसंग में है। इसके पहले जूड़ा का उल्लेख आया है और बाद में टीका और तिलक का। 'बारगह' शब्द का अर्थ दरबार इस प्रसंग में ठीक नहीं जँचता। संभवतः यह बारगुहे या मालगुही लट जैसा कोई शब्द होगा। ब्रजभाषा कविता में शिरोभूषण के प्रसंग में 'गुहेबार' या 'मालगुही लट' का प्रयोग मिल जाता है। 'कविप्रिया' में 'बेनी बिरचैनी की बनाइ गुही कंचन कुसुम बनि लोचननि पोहिये' (कविप्रिया १५।८१) में गुही बेनी का उल्लेख है। इसी तरह ब्रज भाषा के अन्य कवियों ने भालगुही लट का वर्णन किया है। मीर अब्दुल वाहिद के समकालीन कवि ब्रह्म ने ललाट की बेंदी का वर्णन करने के प्रसंग में गुहे केशों का उल्लेख इस प्रकार किया है—

> "बेंदी जराव ललाट दिये, गुहि डोरी दोऊ पटिया पहिनाई।
> ब्रह्म भनै रिपु जाति मनौं रवि की दुहुकें बन राहु चढ़ाई॥

ऐसा जान पड़ता है कि इसी प्रकार के किसी शब्द से यहाँ अभिप्राय है। पृ० ५५ पर अंगुरी या उंगलियों की चर्चा करने के बाद तटस्थ का उल्लेख है जो 'तलहथ' जान पड़ता है। पृ० ५२ पर आंचर और पल्लू का उल्लेख करने के बाद 'मृगाजिन बाँकी' की चर्चा है और यह बताया गया है कि इससे पान से मिश्रित खिरके की ओर संकेत किया जाता है क्योंकि वहाँ हिजाब (आवरण) का अस्तित्व है। फिर यह भी बताया गया है कि कभी कभी इससे 'वजूदे मुतलक' अर्थात् परमेश्वर के अनुचित वस्तुओं में प्रकट होने का संकेत होता है। इस बात को और भी स्पष्ट करने के लिये एक पद्य दिया गया है जिसका भावार्थ यह है—

अज्ञानि मनुष्य का हृदय नहीं बना सकती। कारण कि हक़ (सत्य, ईश्वर) कभी कभी बातिल (असत्य) की ज़बान में प्रकट हुआ करता है।

'मृगाजिन' संस्कृत का शब्द है। इस शब्द का व्रज भाषा में प्रयोग असंभव तो नहीं है, पर बहुत अधिक नहीं होता। और यदि हो भी तो इस पुल्लिंग शब्द का विशेषण 'बाकी' नहीं बन सकता। ऐसा जान पड़ता है कि यहाँ 'मृगाजिन' पाठ ठीक नहीं है, 'मरगजनि बाकी' होना चाहिए। 'मरगज' या 'मरगजा' मसले हुए के अर्थ में व्रजभाषा में प्रयुक्त होता है। बिहारी सतसई में आया है,

तुम सौतन देखत दई, अपने हिय के लाल।
फिरति सबन में डहडही, वही मरगजी माल॥

यहाँ 'मरगजी माल' मसली हुई माला के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इसी प्रकार जायसी ने रत्नसेन और पद्मावती के संभोगवर्णन के प्रसग में कहा है:—

पुहुप सिंगारि सवारि जो, जोबन नवल बसंत।
अरगज ज्यों हिय लाइ कै, मरगज कीन्हे कंत॥

अर्थात् उस बाला ने यौवन के नवल वसत में पुष्पों का जो शृंगार किया था उसे पति ने हृदय में अरगजे की भाँति लगाकर मसल डाला।

'हकाएके हिंदी' में आचर और पल्लू के बाद जो 'मरगजनि बाँकी' है वह सभोग कालीन दली मली साड़ी का ही वाचक होगा। प्रसग भी वैसा ही है और इसके आध्यात्मिक सकेत के साक्ष्य के लिये जो पद्य लिखा गया है वह इसी ओर संकेत करता है। शृंगारशतिका में मरगजी का अर्थ 'रतिमृदिता' दिया है। इसलिये 'मरगज' का अर्थ हुआ संभोगकालीन मर्दन जिससे साड़ी में संरोट या सिलवट पड़ जाती है। बाकपन से इन्हीं सरोटों की ओर इंगित जान पड़ता है जिसे बिहारी ने इस प्रकार कहा है:—

नट न सीस सावित भई, लुटी सुखन की मोट।
चुप करि ए चारी करति सारी परीं सरोंट॥

इसी पृष्ठ पर 'मृगाजिन' के बाद पुष्टिवाक् की चर्चा है जो विचारों की आकुलता और मस्तिष्क की उद्विग्नता की ओर सकेत करने वाला बताया गया है। न तो संस्कृत के शृंगारी साहित्य में इस प्रकार के किसी शब्द का पता चलता है और न व्रज भापा के। मैं ठीक ठीक नहीं समझ सका कि मूल रूप में यह शब्द क्या रहा होगा। परतु प्रसग वही 'मरगजनि' का है।

इसलिये यह भी 'सिलवट -वाफ' अर्थात् मसली- हुई वस्तु की टेढी मेढी सिलवटों की चर्चा असंभव नहीं है। फारसी लिपि में इसे प्रतिलिपिकारों ने जरा विकृत करके लिख दिया होगा। पृष्ठ ६१ पर बताया गया है कि यदि एक सखी को मध्यस्थ बनाकर किसी को सन्मार्ग पर लाने के लिये भेजें कि वह उस मानमती को प्रियतम के मिलन की ओर बुलाए और सजाए और इस प्रकार की रचनाएँ मध्य में रखे और कहे 'उठ चल बेग करन लाई व्यास ही चतुर्दस विद्यानिधान' और कहे 'तुम मान छाड़ दई कत हेत हे मानमती' तथा इसी प्रकार की अन्य कोई रचना हो तो इससे सन्मार्ग पर लानेवाला एव बुलानेवाला समझा जाता है तथा रसूलिल्लाह (मुहम्मद साहब) तथा उनके अनुयायी जो तत्सबधी 'खिलअत' पहने हैं, समझे जाते हैं। यहाँ 'उठ चल बेग' वाला पद कुछ विकृव रूप में प्राप्त हुआ है, ऐसा जान पड़ता है। लगता है कि यह पद कुछ इस प्रकार का रहा होगा—उठ चल देर कर न, लाई बेसाहि चतुर्दश विद्यानिधान' भाव यह है कि ए मानवती ! उठ चल देर न कर तू तो ऐसी बातें करती है जैसे चौदहों विद्या का निधान खरीदकर ले आई हो। 'व्यास ही', 'बेसाहि' का विकृत रूप जान पड़ता है। इसका अर्थ मोल लेना या खरीदना होता है। आगे मानमती की व्याख्या में बताया गया है कि बुद्धि का पर्दा वास्तविकता पर रुक जाता है। 'चतुर्दस विद्या बिसाहने' में उसी बुद्धि के पर्दे की ओर संकेत जान पड़ता है।

पृष्ठ ६२ पर दो बार 'रैन मानुस' का उल्लेख है। एक जगह बताया गया है कि इससे असावधानी की अवधि अथवा युवावस्था की अवधि की ओर संकेत होता है। फिर कभी मनुष्य की अवस्था और कभी भौतिक ससार की ओर सकेत होता है। दूसरे स्थान पर बताया गया है कि संभव है कि 'रैन मानुस' से उस समय की ओर संकेत करें जब सृष्टि की रचना न हुई थी और 'बासर' 'भोर' से सृष्टि रचना की ओर सकेत करे। दोनों प्रसगों से यह जान पड़ता है कि 'रैन मानुस' मूलतः (रैन मॉवस) अर्थात् अमावस्या की रात्रि, रहा हो। 'मावस' फारसी लिपि में लिखे जाने पर 'मानुस' की भ्राति पैदा कर सकता है।

पृष्ठ ८१ पर लार जवान कोंही है जिसे अनुवादक डा० रिज़वी ने भी सदेहास्पद समझा है। यह अस्पष्ट वाक्य है। इसके बाद 'काहू की बाँह मरोरी, काहू के कर चूरी फोरी, काहू की मटकिया ढारी, काहू की कचुकी फारी', है, जिससे अनुमान किया जा सकता है कि इसी भाव से मिलता

हुआ कोई वाक्य रहा होगा। मूल शब्द क्या था, यह मैं ठीक नहीं समझ सका किंतु समकालीन या ईषत् पूर्ववर्ती प्रसिद्ध गवैयों के भजनों में 'रार जब रच्यो कन्हाई' जैसे वाक्य मिल जाते हैं, सभवतः ऐसे ही किसी वाक्य का यह विकार है।

पृष्ठ ८७ पर है यदि हिंदवी में सयाला (?) व माँह 'व पाला' अथवा उनसे सबंधित शब्दों का प्रयोग हो तो उनसे इस विषय की ओर सकेत होता है •।' यहाँ 'सयाला' और 'माँह' शब्द सदेहास्पद हैं। सयाला, 'सियाल' (सं० शीतकाल) और 'माँह', (स० माघ) जैसा कुछ होना चाहिए। हिंदी में 'सियरा' 'सीयरा' और 'सियाला' शब्द शीतकाल के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं और माघ का महीना तो शीतकाल है ही।

पृष्ठ ८८ पर 'पौन झनमका सीव जनाया' में 'सीव' शब्द स० शीत का ही प्राकृत रूप है। 'झनमका', 'झोंका' है।

पृष्ठ ९६ पर 'अष्टुनहार वनस्पति' भी सदेहास्पद है। इसका मूल रूप क्या रहा होगा यह मैं ठीक नहीं समझ सका। इसी प्रकार पृष्ठ ९७ का 'लेकवाह' शब्द भी सदेहास्पद है। यदि यह शब्द 'लौकाह' हो तो उसका अर्थ बिजली का कौंधना हो सकता है जो 'झकोर' शब्द के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

डा० रिजवी ने इस बहुमूल्य ग्रथ का हिंदी में रूपातर करके हिंदी साहित्य की बहुत बड़ी सेवा की है। इस पुस्तक से केवल सूफी साधकों के आध्यात्मिक सकेतों का ही ज्ञान नहीं होता, सूरदास के पूर्ववर्ती ब्रज भाषा-साहित्य की एक समृद्ध परपरा का भी आभास मिलता है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हिंदी के सहृदय पाठक इस पुस्तक का हार्दिक स्वागत करेंगे। डा० रिजवी ने बडे परिश्रम से इस पुस्तक का पाठोद्धार और अनुवाद किया है। वे सभी सहृदय साहित्यप्रेमियों के हार्दिक धन्यवाद के उचित पात्र हैं। परमात्मा उन्हें उत्तम स्वास्थ्य और दीर्घायु प्रदान करें ताकि वे दीर्घ काल तक अमूल्य ग्रथों का उद्धार कर के साहित्य को समृद्ध करते रहें।

हजारी प्रसाद द्विवेदी,

भूमिका

(१)

तसव्वुफ

सन्तो तथा आध्यात्मवाद का किसी भी देश-काल मे अभाव नहीं रहा। सत सभी देशों मे, सभी कालों में तथा सभी के लिये सर्वदा सुलभ रहे। भगवत्कृपा किसी विशेष देश अथवा काल के मनुष्यो की ही सपत्ति नहीं। इसके लिये तो मनुष्य की निष्काम भावनाए, जिज्ञासा, तथा भक्ति को ही विशेष महत्व दिया गया है।

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष में ऐसे संत होते आए हैं जो अपनी अमृतमयी वाणी द्वारा सद्भावो एव सद्विचारों के प्रचारक रहे हैं। इस वातावरण मे इस्लामी तसव्वुफ अथवा सूफ़ीमत का रगरूप और भी उज्ज्वल हो गया और सूफ़ियों ने मानवकल्याण के क्षेत्र मे विशेष योग दिया।

बारहवीं शताब्दी ई० के अत मे भारतवर्ष में तुर्कों का राज्य स्थापित होने के समय इस्लामी धर्मशास्त्र के सभी नियमो की पूर्णरूपेण व्याख्या हो चुकी थी तथा सुन्नी धर्मशास्त्र मे समय की आवश्यकतानुसार भी कोई परिवर्तन न हो सकता था। तसव्वुफ़ के विख्यात लेखको ने भी तसव्वुफ़ तथा शरीअत अथवा इस्लामी धर्मशास्त्र के समन्वय द्वारा सूफ़ीमत का मार्ग निर्धारित कर लिया था। कुशेरी (मृत्यु १०७२ ई०), हुजवेरी (मृत्यु १०७६ ई०), गजाली (मृत्यु ११११ ई०), अब्दुल कादिर जीलानी (मृत्यु ११६६ ई०) तथा शिहाबुद्दीन सुहरवर्दी (मृत्यु १२३४ ई०) अपने प्रसिद्ध ग्रंथों की रचना कर चुके थे, और अपनी प्रभावमयी वाणी द्वारा सूफ़ी मत का मार्ग निर्धारित कर चुके थे। कवियों ने भी सूफ़ी-मत की बड़ी रहस्यमयी व्याख्या की। हकीम सनाई (मृत्यु ११३१ ई०) ने हदीके की रचना की जिसमे तसव्वुफ़ की विभिन्न समस्याओं का कविता मे समाधान किया। मौलाना जलालुद्दीन रूमी (मृत्यु १२७३ ई०) ने अपनी मसनवी द्वारा सूफ़ीमत की बड़ी गूढ व्याख्या की। स्पेन निवासी शेख मुहीउद्दीन इब्ने अरबी (मृत्यु १२३९ ई०) ने अत्यधिक ग्रंथो की रचना की। आकलमान

ने उनकी लगभग १५० रचनाओं का उल्लेख किया है किंतु उनके ग्रथों में फ़तूहाते मक्किया तथा फ़ुसूसुल हेकम को बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। उन्होने अद्वैतवाद की व्याख्या नवीन ढग से दर्शन शास्त्र एव आध्यात्मवाद के आधार पर की। उन्होंने इस सिद्धात का प्रचार किया कि परमेश्वर के अतिरिक्त ब्रह्माड में कुछ भी वर्तमान नही अथवा जो-कुछ भी वर्तमान है वह सब परमेश्वर का ही रूप है। उनकी गूढ व्याख्या से सभी सूफ़ी प्रभावित हुए। इसके द्वारा धार्मिक सकीर्णता कम हो गई और बाद के सूफ़ी जो शरीअत के बाह्य आडबरों से प्रभावित थे, वे भी किसी-न-किसी प्रकार से शेख की शिक्षा को इस्लामी शरीअत से समन्वित कर लेते थे। कुरान के जो वाक्य शरीअत के कट्टर अनुयायी तथा शरीअत के क्षेत्र से बाहर न निकलनेवाले सूफ़ी प्रमाण रूप में प्रस्तुत करते थे, उन्हीं वाक्यों पर अवलबित मुहीउद्दीन इब्ने अरबी के शिष्य तथा उनसे सहमत सूफ़ी अपने सिद्धातों का ताना बाना खड़ा कर देते थे। आध्यात्मिक साधनाओं के लिये शरीअत (इस्लामी धर्म की नियमावली) का निर्धारित पथ साधकों को ईश्वर के ज्ञान के मार्ग में अधिक दूर नहीं ले जा सकता, अतः मुहीउद्दीन इब्ने अरबी की ख्याति तथा उनके सिद्धातों का पालन करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक ही है और उस पर कोई आश्चर्य न होना चाहिए।

इनके बाद के सूफ़ियों ने अधिकतर इन्हीं सूफ़ियों की रचनाओं को अपने पथ-प्रदर्शन के लिये अपने समक्ष रखा और उनके निर्धारित किए हुए नियमों का पालन किया। उन्होंने अनेक ग्रथोंकी रचनाए कीं किंतु वे सबकी सब अधिकाशतः पत्र, समीक्षाएँ तथा टीकाएँ आदि ही हैं, और उन्होने पिछले ग्रथों की व्याख्या एव स्पष्टीकरण ही किया है। कभी कभी कवियों ने तो अपने स्वतत्र भाव कविता मे अवश्य प्रकट किए किंतु वे भी अधिकाशत. शास्त्रीय तसव्वुफ़ से प्रभावित थे और शेख मुहीउद्दीन इब्ने अरबी के मार्ग पर अग्रसर हुए हैं।

इस प्रकार तसव्वुफ़ का प्रारभिक आधार अल्लाह की वार्ता (कुरान) तथा मुहम्मद साहब की वाणी (हदीस) अथवा इस्लामी शरीअत ही है। प्रारभिक काल के एक सूफ़ी शेख अबू बक्र तमिस्तानी का प्रवचन है "मार्ग खुला हुआ है और किताब (कुरान) हमारे समक्ष वर्तमान है[1]।

---

१ रिसालये कुशेरिया, लेखक कुशेरी (मिस्र में प्रकाशित), पृ० ३४

क़ुरान में लिखा है कि "अपने परमेश्वर का नाम जप तथा प्रत्येक वस्तु से पृथक् होकर उसीकी ओर हो जा।"

अब्बासी, खलीफ़ाओं के राज्य काल (७४६ ई०–१२५८ ई०) में अनुवादों द्वारा सभी प्रसिद्ध धर्मों एवं दर्शनों की समीक्षा होने लगी और इस्लाम का उनके सिद्धांतों से सीधा संपर्क स्थापित हो गया। मुहम्मद साहब (मृत्यु ६३२ ई०) स्वयं किसी पूर्णतया नवीन धर्म के चलाने का दावा न करते थे। क़ुरान का वचन है, '(हे मुहम्मद) तुझसे (इस पुस्तक में) वही कहा गया है जो तुझसे पूर्व पैग़म्बरों (ईश्वर के दूतों) से कहा गया।' तथा 'हे मुसलमानो, कहो कि हम अल्लाह पर तथा जो हमारी ओर उतरा एव जो इब्राहीम पर, इस्माईल पर तथा इसहाक़ पर, या क़ूब पर एवं उनकी संतान पर उतरा, एव जो मूसा को या ईसा को तथा सब पैगम्बरों को उनके परमात्मा की ओर से प्रदान हुआ (सब पर) ईमान लाएँ। हम उनमें से किसीमें कुछ भेदभाव नहीं करते और हम उसी परमात्मा के आज्ञाकारी हैं। यदि ये इसी प्रकार स्वीकार करें जिस प्रकार तुमने स्वीकार किया तो उन्होंने सीधा मार्ग पा लिया, और जो इससे बाज रहे हैं वे केवल जिद पर हैं।'

अरब विजेताओं ने ईरान भारत तथा यूरोप के भिन्न भिन्न भागों को अधिकृत तो कर लिया किंतु वहाँ के दर्शन तथा संस्कृति को पराजित न कर सके। इस्लामी अध्यात्मवाद तथा सूफ़ीमत पर भी नव-अफ़लातूनवाद, बौद्धों के विज्ञानवाद तथा वेदांत की अमिट छाप लग गई। जब भारत में सूफ़ी सिलसिले का प्रचार प्रारम्भ हुआ तो तसव्वुफ़ अरबी, भारतीय तथा ईरानी स्रोतों के मिश्रण से इतना गूढ़ बन चुका था कि प्रत्येक उससे अपनी आध्यात्मिक तृप्ति कर सकता था। किन्तु तसव्वुफ़ की सब से बड़ी देन मानव के प्रति सद्भावना तथा सद्विचार है।

अबुल हसन हुजवेरी[1] की पुस्तक कश्फ़ुल महजूब को सूफ़ी मत के सिद्धांतों की व्याख्या एवं विस्तृत उल्लेख के लिये बड़ा मान प्राप्त है। भारतवर्ष में इसे तसव्वुफ़ की पहली पुस्तक समझना चाहिए। उन्होंने

---

१. वे ग़ज़नी के हुजवेर नामक ग्राम के निवासी थे और अपने अंतिम जीवन काल में लगभग सभी इस्लामी राज्यों की यात्रा के उपरांत लाहौर में निवास करने लगे थे।

इस पुस्तक के तीसरे अध्याय में तसव्वुफ के विषय में इस प्रकार लिखा है—"लोगों ने इस नाम की छानबीन में अत्यधिक तर्क वितर्क किया है और इस विषय पर अनेक पुस्तकों की रचना की गई है। लोगों का विचार है कि वे ऊनी वस्त्र (सूफ़) धारण करने के कारण सूफ़ी कहलाते हैं। कुछ लोगों का मत है कि वे प्रथम पक्ति (सफ[1]) मे हैं। कुछ लोगों का विचार है कि वे असहावे सुफ्फा[2] से सबधित हैं। कुछ लोगो का कथन है कि यह शब्द सफा (शुद्धता) से लिया गया है, किन्तु शब्द-व्युत्पत्ति के अनुसार इनमें से कोई व्याख्या भी सतोषजनक नहीं, यद्यपि सभी मतों की पुष्टि में प्रमाण दिए गए हैं। सफ़ा (शुद्धता) की सभी प्रशसा करते हैं और यह कदर (अशुद्धता) का उल्टा है। अतः जब इस मत के अनुयायी अपने चरित्र तथा स्वभाव को सुव्यवस्थित कर लेते हैं और आपत्तियों तथा कष्टों से अपने मन को शुद्ध कर लेते हैं तो इनका नाम सूफ़ी पड़ जाता है। " यदि तुझे सच्चे सूफी की खोज है तो इसको देख ले कि सफा (शुद्धता) की एक जड़ तथा एक शाखा है। इसकी जड़ हृदय से पराये (ग़ैर) का विचार निकाल देना है और इसकी शाखा इस छली ससार (माया) से अपने हृदय को रिक्त कर देना है। यह दोनों गुण सिद्दीके अकबर (अबूबक्र, प्रथम खलीफा, मृत्यु ६३४ ई०) में विद्यमान थे। वे ही इस तरीके (साधना) वालों के इमाम (नेता) हैं।"

"सूफी ऐसा नाम है जो बड़े बड़े वलियों (सतों) तथा महात्माओं के लिये प्रयुक्त होता है। एक शेख ने कहा है कि जो कोई प्रेम द्वारा साफ हो जाता है वह शुद्ध हो जाता है और जो कोई प्रियतम में लीन होकर उसके अतिरिक्त सर्वस्व त्याग देता है वह सूफी होता है। तसव्वुफ़ का अर्थ सूफियों को सूर्य से अधिक स्पष्ट होता है और उसके लिये व्याख्या अथवा किसी सकेत की आवश्यकता नहीं होती। इस मत के अनुयायी तीन प्रकार के होते हैं—(१) सूफी, (२) मुतसव्विफ, (३) मुसतसविफ। (१) सूफ़ी वह है जो अपने व्यक्तित्व के लिये मृत्यु को प्राप्त हो चुका हो और जो हक

---

१. वे लोग, जो मुहम्मद साहब के समय में सदैव प्रथम पक्ति में नमाज़ पढ़ने का प्रयत्न करते थे।

२. मुहम्मद साहब के समय के कुछ बुज़ुर्ग जो नबी की मस्जिद में प्रत्येक समय ईश्वर की उपासना किया करते थे।

(सत्य, ईश्वर) के साथ वर्तमान हो। वह अपनी इद्रियों के दासत्व से मुक्त हो चुका हो तथा सत्य (ईश्वर) तक पहुँच चुका हो। मुतसव्विफ़ वह है जो मुजाहदे (दमन) द्वारा इस श्रेणी को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा हो और अपनी जिज्ञासा मे अपने व्यवहार को उन लोगों (सूफियों) के उदाहरण द्वारा सन्मार्ग पर लाता हो। मुतसव्विफ वह है जो अपने आप को सासारिक वैभव तथा सम्मान हेतु उन (सूफ़ियों) के समान बनाता हो और इन दोनो वस्तुओ अर्थात् सफ़ा एव तसव्वुफ़ के विषय मे कुछ ज्ञान न रखता हो। कहा गया है कि मुसतसविफ़ सूफ़ियो की दृष्टि मे मक्खियों से भी तुच्छ हैं और उसके कार्य लिप्सा के अधीन होते हैं। कुछ अन्य उसे भेड़िये की भॉति समझते हैं। उसकी वाणी पर कोई रोक टोक नहीं होती, कारण कि वह एक ग्रास सडे हुए गदे मांस का अभिलाषी होता है। अत. सूफ़ी साहिवे वुसूल (सभोगवाला), मुतसव्विफ़ साहिवे उसूल (सिद्धात वाला), मुसतसविफ़ साहिवे फ़ज़ूल (बकवादी) होता है। जिसे कुछ भी (ईश्वर का) सभोग प्राप्त हो वह अपनी महत्वाकाक्षा को प्राप्त करके अपने लक्ष्य तक पहुँचने के उपरात किसी बात की चिंता नहीं करता। जिसे मूल का थोड़ा-सा भी भाग प्राप्त हो जाता है वह तरीकत (सूफियों का मार्ग) मे दृढ हो जाता है और तरीकत के रहस्यों में दृढतापूर्वक सलग्न रहता है। किंतु जिसे बकवाद का कोई अश प्राप्त हो जाता है वह सब वस्तुओं से वचित होकर रस्म (आडबर) के द्वार पर बैठ जाता है।"

'इस प्रकार तसव्वुफ़ वासनाओ को त्याग देने का नाम है। यदि कोई वासनाओ को त्यागकर इस त्याग मे आनद लेने लगता है तो यह एक साधारण त्याग है किंतु यदि वासना भी उसे त्याग दे तो वासना का अत हो जाता है और यह स्थिति वास्तव में मुशाहदे (साक्षात्कार) की होती है। वासना का त्याग मनुष्य की कृति है किंतु वासना का अत ईश्वर की देन है। मनुष्य का कार्य साधारण तथा लाक्षणिक होता है किंतु ईश्वर का कार्य यथार्थ होता है। सूफ़ी वे लोग हैं जिनकी जीवात्मा मनुष्यता के अधकार से मुक्त है और जो वासनाओ के कष्टो से तथा कामनाओं से छुटकारा पाकर प्रथम श्रेणी तथा उच्च स्थिति में ईश्वर का साक्षात्कार करके अन्य वस्तुओ से भागते हैं (अबुल हसन 'नूरी'[1] का कथन है कि सूफ़ी वह है

१. जुनैद बग़दादी [मृत्यु ६११ ई०] का समकालीन एक सूफ़ी।

जिसके वश में कोई वस्तु न हो और जो स्वय किसी वस्तु के वश मे न हो। यही फना (ईश्वर में विलीन होना) का सार है। इसका अर्थ यह हुआ कि सूफी इस लोक की सपत्ति तथा वैभव से कुछ लाभ नहीं उठाता क्योंकि वह अपने जीवात्मा के वश अथवा अधिकार में नहीं होता। वह दूसरो पर अधिकार करने से वचता है जिससे अन्य लोग भी उसको अपने वश में करने की कामना न कर सकें।'

इब्नुलजल्ला[1] का कथन है, 'तसव्वुफ हकीकत (वास्तविकता) है, आडम्बर नहीं क्योंकि आडम्बर प्राणियों के कार्यों से सबधित है और हकीकत ईश्वर से। जब तसव्वुफ प्राणियों से सबध न रखने का नाम है तो यह अवश्य ही बिना आडबर के होने के समान है। जुनैद (मृत्यु ९११ ई०) का कथन है कि तसव्वुफ़ की आत्मा परमेश्वर का गुण है और इसका वाह्य रूप मनुष्य का गुण है। सच्चे एकेश्वरवाद में किसी भी मानव-गुण की आवश्यकता नहीं क्योंकि मनुष्य के गुण स्थायी नहीं अपितु रसमी (साधारण) हैं और ईश्वर ही, कर्ता है।' अबू हफ़स[2] हद्दाद नीशापुरी का कथन है कि 'तसव्वुफ सब-का-सब अनुशासन (अदब) है क्योंकि प्रत्येक समय तथा स्थान एव दशा के लिये अनुशासन का विधान है।' अबुलहसन का प्रवचन है कि 'तसव्वुफ न तो आडबर (रस्म) है और न विज्ञान, किंतु वह नैतिकता का नाम है क्योंकि यदि यह आडम्बर होता तो मुजाहदे (दमन) द्वारा प्राप्त हो जाता, यदि तसव्वुफ़ विज्ञान होता तो शिक्षा द्वारा प्राप्त हो जाता। अतः तसव्वुफ़ केवल नैतिकता ही है। मुरतइश[3] का कथन है 'तसव्वुफ़ उत्कृष्ट स्वभाव का नाम है। यह तीन प्रकार का होता है, (१) ईश्वर की ओर अर्थात् निष्ठा के साथ उसके आदेशों का पालन (२) मनुष्य की ओर—बड़ों के प्रति आदर सम्मान, छोटोंपर कृपा तथा बराबरवालों से समानता का व्यवहार और किसा से बदले तथा न्याय की आशा न रखना। (३) अपनी ओर—शैतान तथा वासना के वश मे न रहना। जो भी इन तीनों अर्थों के अनुसार अपने आप को ठीक कर लेता है वही उत्कृष्ट स्वभाववाला समझा जाता है।'

---

१ प्रारंभिक काल का एक सूफ़ी।

२. जुनैद का समकालीन एक सूफ़ी।

३ प्रारंभिक काल का एक सूफ़ी।

अबूअली करमीनी का कथन है कि "तसव्वुफ़ उत्कृष्ट नैतिकता का नाम है और उत्कृष्ट कार्य वह है जिसमें बदा (दास) सभी दशाओं में ईश्वर को पर्याप्त समझता हो अर्थात् ईश्वर की इच्छा से सतुष्ट होता हो।" अबुल हसन नूरी का यह भी कथन है कि "तसव्वुफ़ स्वतन्त्रता है और इस प्रकार मनुष्य समस्त कामनाओं से मुक्त हो जाता है। पौरुष यह है कि मनुष्य पुरुषत्व को त्याग दे। तकल्लुफ़ (शिष्टाचार) का त्याग इस प्रकार है कि अपने सबधियों के विषय में कोई प्रयत्न न करे और उदारता यह है कि ससार को ससारवालों के लिये छोड़ दे[1]।"

तरीकत के ज्ञानियों के मध्य में फ़क़् (फ़कीरी) तथा सफ़्वत (शुद्धता) के प्रश्न पर भी मतभेद है। कुछ का विचार है कि फ़कीरी शुद्धता से बढ़कर है। उनलोगों का विचार है कि फ़क़ (फकीरी) पूर्ण रूप से ईश्वर में विलीन होने का नाम है। इसमें किसी विचार का भी अस्तित्व नहीं रहता और शुद्धता केवल फकीरी का एक मुकाम (आध्यात्मिक लक्ष्य) है। जब फ़ना (ईश्वर में विलीन होना) प्राप्त हो जाती है तो सभी मकामों का अंत हो जाता है। जो लोग शुद्धता को फकीरी से बढ़कर बताते हैं, उनका मत है कि फक़् एक ऐसी वस्तु है जो वर्तमान है और इसका नाम रखा जा सकता है किंतु सफ्वत समस्त वर्तमान वस्तुओं से शुद्ध हो जाने (त्याग देने) का नाम है। सफा, ईश्वर में विलीन होने का सार है और फकीरी बका (अस्तित्व) का सार है। अस्तु फ़कीरी मुकाम का नाम है किंतु सफ़्वत (शुद्धता) पूर्ण होने की दशा का नाम है[2]।

अबुल हसन नूरी का कथन है कि "सूफ़ी बारह गिरोहों में विभाजित हैं जिनमें से दो गिरोह (ईश्वर द्वारा) रद्द कर दिए गए हैं और दस गिरोहों को ईश्वर द्वारा मान्यता प्राप्त है। इनमें से दसों के बड़े ही उत्कृष्ट नियम तथा सिद्धांत हैं। यद्यपि इनके मुजाहदे तथा रयाजतें (दमन तथा तपस्या) भी भिन्न हैं किन्तु तौहीद (एकेश्वरवाद) एव शरा के नियमों पर सभी सहमत हैं[3]।' शरीअत के आदेशों का पालन मनुष्य इस भय से करता है कि इसके न करने से क़यामत में दंड भोगना पड़ेगा किंतु तसव्वुफ़ में मनुष्य

---

(१) कशफुल महजूब (लाहौर प्रकाशन १९२३) पृ० २२–२२।

(२) वही, पृ० ४२।

(३) ,, पृ० १२७।

पर ऐसी दशा छा जाती है कि वह उन आदेशो का पालन करने के लिये विवश हो जाता है। वह नमाज इसलिये नहीं पढता कि बिना नमाज पढे उसे दड भोगना पडेगा अपितु इस कारण पढता है कि न पढना उसके वश में ही नहीं। सूफ़ियो का ईश्वर से प्रेम किसी लोभ के कारण नहीं अपितु ईश्वर के लिये होता है। इस प्रकार मुसलमानो के साधारण एकेश्वरवाद से सूफ़ियों का एकेश्वरवाद भिन्न है। सूफी केवल यह नहीं कहता कि ईश्वर के अतिरिक्त कोई भगवान नहीं अपितु उसका सिद्धात है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी भी वस्तु का अस्तित्व नहीं। दृष्टि विषय तथा चेतना सबधी ससार केवल मृगतृष्णा हैं। जल में सूर्य की प्रतिच्छाया मेघ द्वारा पूर्णतया समाप्त हो सकती है, वायु का तीव्र झोंका उसमें विघ्न डाल सकता है। वह पूर्णतया सूर्य पर अवलबित होता है किंतु सूर्य किसी प्रकार प्रतिच्छाया के अधीन नहीं। सूर्य का प्रकाश एक है किंतु दर्पण में, जल में, कण में, उसके रूप परिवर्तित हो जाते हैं। वह कहीं तीव्र हो जाता है कहीं मध्यम और कहीं इतना तेज हो जाता है कि आँखें चौंधियाँ हो जाती हैं। यदि दर्पण जल या कण नष्ट हो जाए तो प्रकाश को कोई हानि नहीं पहुँचती। समस्त ब्रह्माड एक शरीर के समान है। उसके लाखों करोड़ों भाग हैं। सभी के रूप भिन्न हैं, किन्तु इस बडे शरीर मे भी एक जान है। और वही सब कुछ कर रही है। वह कण कण में विद्यमान है। वह प्रत्येक स्थान पर है और कहीं नहीं है। वह निराकार है, वह किसी विशेष दिशा मे नहीं फिर भी सर्वत्र है। सूफियो का अद्वैतवाद यही है।

जब इस सिद्धात का मनुष्य के हृदय पर पूर्ण रूपेण प्रभाव हो जाता है तो वह आनद-विभोर हो उठता है। मित्र, शत्रु, मुसलमान, काफिर किसी मे भी उसे अतर नही देख पड़ता[1]। सादी ने बोस्तान में इब्राहीम

---

(१) सनाई ने अपनी प्रसिद्ध फारसी रचना हदीके, में इस भाव का एक छद लिखा है: कुफ्र, तथा इस्लाम दोनों "उसी" के मार्ग की ओर अग्रसर हैं, और (दोनों ही) कहते है वह एक है और कोई भी (उसके राज्य में) उसका साझी नहीं।

इस छन्द को अबुल फज़्ल (मृत्यु १६०२ ई०) ने एक पूजागृह पर जो अकबर के समय में काश्मीर में तैयार कराया गया था, लिखवाया था।

तथा एक अग्नि पूजक की कहानी इस प्रकार लिखी है[२]—"इब्राहीम ने एक अग्निपूजक को भोजन पर से इस कारण हटा दिया कि वह अग्निपूजक था। उसी समय ईश्वर की ओर से फरिश्ते ने आकर ईश्वर का यह सदेश पहुँचाया कि मैने उसे १०० वर्ष तक जीविका तथा जीवन प्रदान किया और तुम क्षण भर भी उसके साथ न रह सके।" सूफियो का आलिमों (इस्लाम के पडितों) से सर्वदा विरोध रहा करता था। राज्य के पद अधिकाश आलिमो को प्राप्त होते थे। सूफी सासारिक अधिकार से कोई सबध न रखते थे। उन्हें आलिमो के हाथों बडे कष्ट भोगने पड़ते थे। प्रेम के उन्माद मे वे जो कुछ भी कह जाते उस पर कड़ी रोक टोक की जाती। मनसूर हल्लाज (मृत्यु ९१६ ई०) को अनहलक (अह ब्रह्म) कहने पर मृत्यु दड भोगना पड़ा किंतु सूफी इससे भयभीत न हुए। उन्होंने यह सिद्धात प्रस्तुत किया कि मसूर ने दैवी रहस्य प्रकट कर दिया, अतः उसे यह दड भोगना पड़ा। उनका मोरचा आलिमों के विरुद्ध चलता रहा। भारतवर्ष मे भी सूफियों को अपने स्वतंत्र भावो के कारण कष्ट भोगने पडे। तुर्कों के राज्यकाल के आरभ

इस स्थान पर सभी धर्मवाले अपने धर्म के अनुसार पूजा कर सकते थे। फारसी के प्रसिद्ध सूफी कवि जामी (मृत्यु १४९२ ई०) के एक छद का भाव इस प्रकार है—

हमने कभी तुझे मदिरा के नाम से और
कभी प्याले के नाम से पुकारा।
कभी दाने के नाम से और कभी जाल के नाम से पुकारा।
ससार के पट पर तेरे नाम के अतिरिक्त कुछ भी नहीं॥
अब हम तुझे किस नाम से पुकारें।

दारा शिकोह (मृत्यु १६५९ ई०) ने भी इसी प्रकार लिखा है।

मैंने एक कण भी सूर्य से पृथक् नहीं देखा।
प्रत्येक जल की बुद स्वयं ही समुद्र है॥

ईश्वर को किस नाम से पुकारने का साहस किया जा सकता है? जो कोई नाम भी है, वह ईश्वर ही का नाम है।

(२) सादी, गुलिस्ताँ तथा बोस्ताँ के प्रसिद्ध लेखक तथा एक बहुत बडे सूफी (मृत्यु १२९२ ई०)

में भारतवर्ष के चिश्ती सूफियों ने शासन प्रबंध से अधिकांशतः पृथक् रहने का ही निश्चय कर लिया था किंतु आलिम उन्हें कब शांति से बैठने दे सकते थे। सूफियों की गोष्ठियों का संगीत तथा नृत्य[1] सर्वदा विवाद का विषय रहा। सूफियों को दरबारों में भी बुलाया जाता और उनसे इस विषय पर वाद विवाद करके इस प्रथा को रुकवाने का प्रयत्न किया जाता सूफी भी प्रतिकार के लिये सदैव ही कटिबद्ध रहते थे। वे आलिमों के रोजे नमाज़ तथा अपने रोजे नमाज़ तक में बड़ा अंतर समझते थे।

शेख निज़ामुद्दीन औलिया (मृत्यु, देहली १३२५ ई०) ने शेख जलालुद्दीन तबरेजी की कहानी का उल्लेख करते हुए एक दिन कहा कि जब शेख जलालुद्दीन बदायूँ पहुँचे तो कुछ समय तक वहाँ ठहरे। एक दिन किसी कारण से बदायूँ के हाकिम काजी कमालुद्दीन जाफरी के घर पहुँचे। जो सेवक द्वार पर बैठे थे उन्होंने कहा कि 'काज़ी इस समय नमाज़ पढ रहे हैं।' शेख मुस्करा कर लौट गए और चलते समय कह गए कि 'काजी नमाज पढना जानता है?' शेख के लौट जाने पर लोगों ने यह समाचार काजी को पहुंचाया। दूसरे दिन काजी कमालुद्दीन शेख की सेवा में पहुँचे और क्षमा याचना करके यह बात पूछी कि, 'आपने यह किस प्रकार कहा कि 'काजी नमाज पढना जानता है? मैंने नमाज़ तथा उसके नियमों के विषय में अनेक पुस्तकों की रचना की है।' शेख ने कहा, 'निःसंदेह फकीरों की नमाज दूसरी होती है तथा आलिमों की दूसरी।' काज़ी ने पूछा कि 'क्या फकीर रुकू[2] तथा सिजदा[3] किसी दूसरे ढंग से करते हैं अथवा कोई अन्य कुरान पढते हैं।' शेख ने उत्तर दिया कि 'आलिमों की नमाज इस प्रकार है कि वे अपनी दृष्टि काबे पर रखते हैं और नमाज पढते हैं। यदि काबा दृष्टि के समक्ष न हो तो उस ओर मुख कर लेते हैं। आलिमों का किबला (काबा) इसके अतिरिक्त नहीं किंतु फ़कीर जब तक

---

१. कट्टर आलिमों के अनुसार इस्लाम में इसका पूर्णतया निषेध किया गया है किंतु सूफ़ी इसे बड़ा आवश्यक समझते थे। मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने भी हकायके हिंदी में संगीत के महत्व का बड़ा मार्मिक वर्णन किया है।

२ रुकू—नमाज में झुककर ईश्वर की प्रशंसा के वाक्य पढ़ना।

३. सिजदा—माथा भूमि पर रखकर ईश्वर की प्रशंसा के वाक्य पढ़ना।

अर्श (ईश्वर का स्थान) न देख लें नमाज नहीं पढते।' काजी कमा-लुद्दीन को यद्यपि यह बात बहुत बुरी लगी किंतु उसने कुछ न कहा और वहा से लौट गया। रात्रि में क़ाजी को स्वप्न मे दिखाया गया कि शेख जलालुद्दीन अर्श पर नमाज पढ रहे हैं। दूसरे दिन दोनो आदमी एक सभा में मिले। शेख जलालुद्दीन ने कहा, 'आलिमों के कार्य का महत्त्व तथा उनका सम्मान ज्ञात है। उनमे केवल पाठ पढाने की योग्यता होती है। वे चाहे मुदर्रिस हो जाय अथवा काज़ी अथवा सद्रेजहाँ[1] उनको इससे अधिक संमान नहीं प्राप्त हो सकता किंतु दर्वेशो का संमान इससे कहीं अधिक होता है। प्रथम श्रेणी तो वह थी जिसका दर्शन पिछली रात्रि मे काजी को कराया गया।[2]

इस प्रकार सूफ़ियों ने शरीअत के समानातर .कुरान तथा शरीअत की आध्यात्मिक व्याख्या तैयार कर ली। वे बुद्धि की भी बड़ी निंदा करते थे और इश्क के महत्त्व पर बडा जोर देते थे। शेख निजामुद्दीन औलिया का कथन है कि आलिम बुद्धि के समर्थक हैं तथा दर्वेश इश्क के। आलिमो की बुद्धि उनके इश्क को वश में कर लेती है और फ़कीरो का प्रेम बुद्धि को वश मे रखता है[3]। सूफ़ी न.फ्स (वासना) को वश मे करने को बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य समझते हैं। नफ्स मनुष्य का सबसे भयकर शत्रु कहा जाता है और उसके छल को सभी सूफ़ियो ने बडे स्पष्ट शब्दो मे व्यक्त किया है। न.फ्स पर अधिकार पा लेने के उपरात ही सूफ़ी अपनी आध्यात्मिक यात्रा मे अग्रसर होता है और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर पाता है।

सूफ़ी ऐसे कार्यो को भी अच्छा न समझते थे जिनसे उन्हें प्रसिद्धि प्राप्त हो। शेख फ़रीदुद्दीन गजशकर (पाकपटन अथवा अजोधन, मुल्तान के प्रसिद्ध संत. मृत्यु १२६५ ई०) के गुरु शेख कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी

---

१. देहली के सुल्तानों के राज्य का सबसे बड़ा धार्मिक अधिकारी। क़ाजी (न्यायाधीश) उसके अधीन होते थे।

२. फ़वायदुलफ़ुवाद--(शेख़ निजामुद्दीन औलिया की वाणी, सक-लन कर्त्ता--अमीर हसन, शेख के प्रसिद्ध शिष्य (मृत्यु १३२७-२८ ई०) फ़खरुलमतावे १२७२ हि० १८५५-५६ ई०) पृ० २४९

३. फ़वायदुलफ़ुवाद पृ० १४६

(मृत्यु, देहली १२३५ ई०) ने उन्हे चिल्ला[1] खीचने से भी रोक दिया था क्योंकि कुतुबुद्दीन का विचार था कि इससे भी प्रसिद्धि प्राप्त होती है।[2]

इस प्रकार सूफियों ने अपना मार्ग पृथक् निर्धारित कर लिया। यह मार्ग तरीकत कहलाता है। मनुष्य के जीवन की उपमा यात्रा से दी जाती है और सूफी अथवा साधक की उपमा यात्री से दी जाती है।

तरीकत के मार्ग में सूफियों को विभिन्न आध्यात्मिक स्थानो को पार करना पड़ता है। तसव्वुफ़ की यह अनेक मजिलें अथवा लक्ष्य मकाम कहलाते हैं। साधकों के लिये तोबा[3], जुहद (सयम) सब्र, रिज़ा (प्रसन्नता पूर्वक सतोष), तवक्कुल (ईश्वर की इच्छा के अधीन होना) कनाअत (सतोष) आदि विभिन्न मकाम बताए गए हैं। तसव्वुफ की पुस्तकों मे प्रत्येक की बड़ी रहस्यमयी व्याख्या की गई है। सनाई ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'हदीका' में इन सब पर सविस्तार लिखा है। हुजवेरी के अनुसार मकाम उन चीजों को कहते हैं जो ईश्वर के मार्ग मे रुकावट के रूप में होती हैं। सूफ़ी को उस रुकावट से सबद्ध सभी आदेशों का पालन करना होता है और वह इसके बिना उस स्थान को नहीं छोड़ सकता। इसके विपरीत हाल (दशा) वह है जो ईश्वर की ओर से मनुष्य के अत.करण में प्रविष्ट हो और वह न उसे आने से रोक सकता हो और न उसके निकल जाने की दशा मे उसे बुला सकता हो। मकाम मनुष्य के प्रयत्न पर निर्भर है और हाल वरदान है।[4]

मारेफ़त का तथ्य यह है कि ईश्वर को ही समस्त अधिकार प्राप्त हैं। जब कोई ईश्वर को ही सर्वाधिकार-सपन्न स्वीकार कर लेता है तो उसे मनुष्य से कोई सबध नहीं रहता[5]। सूफियो के निकट मारेफ़त हृदय को ईश्वर के अतिरिक्त सभी वस्तुओं से हटा लेने का नाम है। सूफ़ियों के निकट इल्म उस प्रत्येक जानकारी का नाम है जिसमें आध्यात्मिक तथ्य न हो। इस

---

१. चालीस दिन तक एकातवास करके की जानेवाली एक प्रकार की विशेष उपासना।

२. फवायदुल फवाद पृ० २९।

३. भविष्य में अनुचित कार्य न करने की दृढ प्रतिज्ञा।

४ कश्फुल महजूब, पृष्ठ १८१। ५. वही, पृष्ठ २१३।

६. वही, पृ० २०८।

प्रकार का ज्ञान रखनेवाले को वे आलिम कहते हैं। जो कोई किसी बात के तथ्य से परिचित होता है उसे वे आरिफ कहते हैं।[1]

शरीअत तथा हकीकत मे भी अतर बताया गया है। सासारिक आलिम दोनों मे कोई अतर नहीं समझते। कुछ मुलहिदो (विधर्मी) के गिरोह एक दूसरे का अस्तित्व एक दूसरे के बिना सभव समझते हैं। उनका विचार है कि हकीकत के दृष्टिगत होने के उपरात शरीअत की आवश्यकता नहीं। हकीकत उस तथ्य का नाम है जिसमे आदम से लेकर ससार के नष्ट होने तक कोई परिवर्तन संभव नहीं, जैसे ईश्वर की मारेफ़त। किंतु शरीअत में परिवर्तन होता रहा। इस प्रकार शरीअत मनुष्य का कर्म है तथा हकीकत ईश्वर की रक्षा है। अतः शरीअत हकीकत के बिना असंभव है और हकीकत का अस्तित्व शरीअत की रक्षा के बिना संभव नहीं।[2]

यात्री (साधक) का परम कर्तव्य है कि वह ब्रह्म के पूर्ण ज्ञान (मारेफ़त) की चेष्टा करता रहे। मनुष्य की आत्मा अपने प्रियतम से पृथक् हो जाने के कारण सर्वदा महामिलन का प्रयत्न करती हुई बताई गई है। तसव्वुफ द्वारा हुई आत्मा अपने लक्ष्य को प्राप्त करने मे सहायता पाती है। प्रत्येक मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति का नाम सूफ़ी लोग नासूत रखते हैं। इस स्थिति में मनुष्य का यह कर्त्तव्य है कि वह शरीअत के आदेशों का पालन करता रहे। आध्यात्मिक यात्रा की यह सब से निम्न श्रेणी है। प्रत्येक जिज्ञासु का यह कर्त्तव्य है कि वह अपनी आध्यात्मिक यात्रा मे अग्रसर होता रहे। इस यात्रा की विभिन्न मजिलें हैं जिन्हे सूफ़ियो के भिन्न-भिन्न समुदाय अपने-अपने ढंग से व्यक्त करते रहते हैं। साधारणतया सभी सूफ़ी नासूत को प्रथम श्रेणी बताते हैं। दूसरी मंजिल फरिश्तों की अवस्था है जिसे मलकूत या 'देवलोक' कहते हैं। इसके लिये तरीकत के पथ पर चलना होता है। तीसरी मजिल ऐश्वर्य की है जिसके लिये मारेफत की आवश्यकता होती है जिसे आलमे

---

१. वही, पृ० २०९।

२. मकतूबाते शरफुद्दीन यहया मुनेरी (कुतुबखान-ए इस्लामी-पंजाब), पृष्ठ ७२—७४। शेख शरफुद्दीन बिहार प्रांत से मुनेर कस्बे के निवासी थे। इनकी मृत्यु १२७९ ई० में हुई। इनके पत्रों को बड़ा मान प्राप्त है।

जबरूत कहते हैं। चौथी दशा फना की है जिसमें साधक ईश्वर मे लीन हो जाता है। इसके लिये हकीकत की अवस्था बताई गई है।

एक प्रसिद्ध सूफ़ी अजीज़ इब्ने (पुत्र) मुहम्मद नसफी ने अपनी पुस्तक मकसदुल अकसा मे सालिक (साधक) की आध्यात्मिक यात्रा के पथ का इस प्रकार उल्लेख किया है, "सर्व प्रथम जिज्ञासु ईश्वर के ज्ञान के लिये उसकी उपासना में प्रयत्नशील होता है। यह लक्ष्य अथवा मकाम उबूदियत अथवा दासत्व कहलाता है।"

उपासना करते करते जब उसमें दैवी प्रेम उत्पन्न हो जाता है तो वह इश्क अथवा परम प्रेम की श्रेणी को प्राप्त हो जाता है। इश्क के कारण समस्त कामनाओं एव वासनाओं का अत हो जाता है। यह श्रेणी जुहद अथवा त्याग की है। इस लक्ष्य को प्राप्त हो जाने के उपरान्त ईश्वर के ध्यान में लीन रहने के कारण जिज्ञासु मारेफ़त (दैवी ज्ञान) का लक्ष्य प्राप्त कर लेता है। इस श्रेणी को प्राप्त हो जाने के उपरान्त भी जिज्ञासु की तृष्णा की तृप्ति नहीं होती। वह निरतर इस पथ पर उन्नति की चेष्टा करता रहता है। वह एक विचित्र उत्तेजना की अवस्था में रहता है। यह अवस्था वज्द अथवा उन्माद की अवस्था कहलाती है। इससे बढकर उसे दैवी प्रकाशन द्वारा ईश्वर का ज्ञान प्राप्त हो जाता है और वह हकीकत को प्राप्त हो जाता है। इस लक्ष्य में अग्रसर होकर उसे वस्ल अथवा संभोग प्राप्त होता है। यह अतिम श्रेणी है। इसके उपरात जिज्ञासु फ़ना अथवा ईश्वर मे लीन हो जाता है।

शरीअत, तरीकत, मारेफत तथा हकीकत का वर्गीकरण कर्म, भक्ति तथा ज्ञान मार्ग के समान नहीं किया जा सकता अपितु शरीअत सूफ़ी के लिये तरीकत मारेफत तथा हकीकत सभी मार्गों में आवश्यक होती है। हकीकत प्राप्त करने के लिये प्राय. सभी साधनाओं की आवश्यकता नहीं होती। कभी कभी किसी जिज्ञासु को किसी वली (सत) की साधारण कृपा तुरत अतिम श्रेणी तक पहुँचा देती है। कभी कभी जीवन पर्यंत उपासना करने से भी कुछ प्राप्त नहीं होता। उन्माद की अवस्था में साधक बाह्य रूप से शरा की अवहेलना करता हुआ दीख पड़ता है किंतु सूफ़ियों के अनुसार वह ऐसे रहस्य मे परिचित हो जाता है कि ईश्वर के निकट वह अवहेलना अवहेलना नहीं रहती।

हुजवेरी ने मुरीद (चेला) बनने के नियमों पर विस्तार से लिखा है। वह लिखता है 'जब कोई मुरीद होना चाहता है तो उसे तीन वर्ष तक तीन आध्यात्मिक अनुशासनों का अर्थ सिखाया जाता है। यदि वह इस अनुशासन पर दृढ रहा तो ठीक है अन्यथा उसे तरीकत (तसव्वुफ का मार्ग) के लिये नहीं स्वीकार किया जाता। प्रथम वर्ष उसे प्राणियों की सेवा करनी पड़ती है। दूसरा वर्ष उसे ईश्वर की सेवा में व्यतीत करना पड़ता है और तीसरे वर्ष अपने मन पर नियन्त्रण रखना पडता है। प्राणियों की सेवा वह उसी समय कर सकता है जब वह अपने आपको दास और अन्य प्राणियों को स्वामी समझे अर्थात् वह उन्हें बिना किसी भेद भाव के अपने आप से उत्कृष्ट समझे और सभी की समान रूप से सेवा करना अपना कर्तव्य समझे और किसी भी प्रकार से वह जिन लोगों की सेवा करता है उन्हें अपने आपसे घट कर न समझे। ईश्वर की सेवा वह उसी समय कर सकता है जब वह इस लोक के एवं परलोक संबंधी सभी स्वार्थ त्याग दे और ईश्वर की उपासना केवल उसी के लिये करे। कारण कि जो कोई किसी अन्य वस्तु के लिये ईश्वर की उपासना करता है वह अपनी ही पूजा करता है, ईश्वर की नहीं। अपने हृदय की रक्षा वह उसी समय कर सकता है जब उसके विचार संगठित हों और इच्छाएँ उसके हृदय से पूर्णतया निकल चुकी हों। जब वह अपने हृदय की असावधानी की समस्त दशाओं से रक्षा कर लेता है और जब उसमें (मुरीद में) यह तीनों गुण उत्पन्न हो जाते हैं तभी वह सच्चे सूफी की भाँति खिर्का (गुदड़ी) धारण करने योग्य हो जाता है।

मुर्शिद (गुरु) को मुरीद (चेला) के विषय में पूर्ण ज्ञान होना परम आवश्यक है। यदि वह जानता हो कि वह किसी दिन पृथक् हो जायगा तो उसको पहले ही से मुरीद न करे और यदि वह समझे कि यह दृढ रहेगा तो फिर उसे आध्यात्मिक भोजन प्रदान करे। सूफी शेख मनुष्य की आत्मा के उपचारक होते हैं। यदि उपचारक रोगी के रोग से अनभिज्ञ होता है तो वह अपने उपचार द्वारा उसकी हत्या कर देता है।

———

(२)

भारतवर्ष में तसव्वुफ

भारतवर्ष में तुर्कों का राज्य स्थापित होने के पूर्व (१२०६ ई०) सूफियों के भिन्न भिन्न सम्प्रदाय अथवा सिलसिले बन चुके थे जिनमें सिलसिल-ए-ख़्वाजगान, कादिरिया, चिश्तिया तथा सुहरवर्दिया मुख्य थे। सिलसिल-ए-ख्वाजगान के सबसे प्रसिद्ध प्रचारक ख्वाजा मुहम्मद अताएसवी थे जिनकी मृत्यु ११६६ ई० मे हुई। ख्वाजा बहाउद्दीन नक्श बन्द (मृत्यु १३८९ ई०) ने इस सिलसिले को विशेष उन्नति दी और उनके पश्चात् यह सिलसिला नक्शबन्दिया कहलाने लगा। भारतवर्ष में इसका प्रचार ख़्वाजा बाकी बिल्लाह (मृत्यु १६०३ ई०) द्वारा हुआ। कादिरिया सिलसिला शेख़ मुहीउद्दीन, अब्दुल कादिर जीलानी (मृत्यु ११६६ ई०) ने चलाया। चिश्तिया सिलसिले का श्रीगणेश शेख़ अबू इसहाक शामी (मृत्यु ९४० ई०) द्वारा हुआ किन्तु ख्वाजा मुईनुद्दीन सहन सिजज़ी (मृत्यु १२३५ ई०) ने इसका प्रचार भारतवर्ष में किया। सुहरवर्दिया सिलसिले के सबसे बडे प्रचारक शेख़ शिहाबुद्दीन सुहरवर्दी (मृत्यु १२३४ ई०) हैं। अवार फुल मआरिफ़ इन्हींकी रचना है। उनके बहुत से चेले हिन्दुस्तान पहुँचे किन्तु शेख़ बहाउद्दीन जकरिया (मृत्यु १२६६ ई०) के प्रयत्नों से इस सिलसिले की भारतवर्ष में बड़ी उन्नति हुई। भारतवर्ष मे तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी ईस्वीमे चिश्तिया और सुहरवर्दिया सिलसिलों ने ही मुख्य कार्य किया।[1]

हिन्दुस्तान मे कार्य करने के कारण इन्हें यहाँ की हिन्दू जनता के भी सम्पर्क मे आना पडता था। यद्यपि इनका कार्य-क्षेत्र अधिकतर सुन्नी मुसलमानों तक ही सीमित था, किन्तु हिन्दू लोग भी इनसे मिलते जुलते थे और इनकी उदारता के कारण इन्हे भी इस्लाम के समझाने का अवसर मिलता था। सूफ़ी भी योगियों के सम्पर्क मे आते थे। शेख़ मुईनुद्दीन चिश्ती के विषय मे प्रसिद्ध है कि उन्होने स्थानीय भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया

---

१. इन दोनों सिलसिलों का इतिहास हिन्दी में इस पुस्तक के लेखक द्वारा तैयार हो चुका है और आशा है कि शीघ्र ही प्रकाशित हो सकेगा।

था। शेख़ हमादुद्दीन नागौरी (मृत्यु १२७३ ई०) को अरबी फ़ारसी के साथ साथ हिंदी का भी अच्छा ज्ञान था। शेख़ फरीदुद्दीन मसऊद गंज शकर (मृत्यु १२६५ ई०) की सेवा में जिन्होने पंजाब में चिश्तिया सिलसिले का प्रचार किया, हिंदू योगी भी आते थे। शेख़ निजामुद्दीन औलिया ने एक अवसर पर किसी योगी से न.फ्स के विषय में उसके धर्म के आदेशों पर विचार विमर्श किया था।[1] एक अन्य अवसर पर शेख़ निजामुद्दीन औलिया शेख़ फ़रीदुद्दीन की सेवा में उपस्थित थे। वहा एक योगी भी विद्यमान थे। इस विषय पर वार्ता होने लगी कि इस युग के बहुतसे पुत्र बिना किसी ज़ौक (आस्वादन) के उत्पन्न होते हैं क्योंकि लोगों को मैथुन के विषय में कोई ज्ञान नहीं। तत्पश्चात् योगी ने कहा कि एक मास में ३० दिन होते हैं और प्रत्येक दिन की विशेषता पृथक् है जैसे पहले दिन के मैथुन के परिणाम-स्वरूप ऐसा पुत्र पैदा होता है और दूसरे दिन के मैथुन से एसा। इसी प्रकार उसने प्रत्येक दिन की विशेषता की चर्चा की। शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया ने प्रत्येक दिन के विषय में पूछ कर वे बातें याद कर लीं। तत्पश्चात् उन्होंने योगी से कहा 'अच्छा मैंने जो कुछ याद कर लिया है उसे सुनो'।[2] 'अमीर ख़ुसरो (मृत्यु १३२५ ई०) ने भी हिंदुओं के धर्म तथा उनकी विशेषता के विषय मे नुह सिपेहर में बड़े विस्तार से लिखा है।[3]

शेख़ निजामुद्दीन औलिया अमीर ख़ुसरो के साथ अपनी खान काह की छत पर टहल रहे थे। आपने देखा कि पास ही कुछ हिंदू मूर्ति-पूजा कर रहे हैं। आपने कहा "प्रत्येक कौमवालों का एक मार्ग, धर्म तथा किबला होता है"।[4]

फ़वायदुल फ़वाद के लेखक अमीर हसन को कुछ समय तक वेतन न मिला। वे व्याकुल होकर शेख़ निजामुद्दीन के पास गए। शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया ने उन्हें समझाने के लिये एक ब्राह्मण की कहानी सुनाई कि एक ब्राह्मण

---

(१) फ़वायदुल फ़वाद, पृ० ९७

(२) वही, पृ० २५७-५८

(३) नुह सिपेहर (ख़लजी कालीन भारत, १९५५ ई०), तीसरा सिपेहर, पृ० १७८-१८०

(४) तुज़ुके जहांगीरी (गाज़ीपुर, १८६३ ई०), पृ० ८१

बड़ा धनी था। उसके नगर के हाकिम ने उसकी धन-सम्पत्ति जब्त कर ली। तत्पश्चात् वह ब्राह्मण निर्धन हो गया। एक दिन वह एक मार्ग पर जा रहा था। उसके एक मित्र ने आगे बढ कर पूछा, 'तेरी क्या दशा है?' उसने कहा, 'बहुत अच्छी'। उस मित्र ने कहा कि 'तेरा सब कुछ तो छिन गया, अब प्रसन्नता किस बात की? उसने कहा, 'मेरा जनेऊ मेरे पास है'। अमीरहसन ने इससे यह शिक्षा ग्रहण की कि वेतन के न मिलने अथवा धन-सम्पत्ति के प्राप्त न होने का चिंता न करनी चाहिए। यदि समस्त ससार भी हाथ से निकल जाय तो भी कुछ चिंता नहीं। ईश्वर से सदैव प्रेम करना चाहिए।[1] इब्ने बतूता ने मुहम्मद तुगलक की योगियों के प्रति रुचि एव उनके कर्तव्यों का बडे विस्तार से उल्लेख किया है।

धीरे धीरे एकातवास तथा रियाजत (तपस्या) मे योगियों के सिद्धातों का भी प्रयोग होने लगा। शेख मुहम्मद गौस ग्वालियरी (मृत्यु १५६२ ई०) ने चुनार की पहाड़ियों के अचल मे १२ वर्ष तक घोर तपस्या (रियाज़त) की। वे गुफाओं मे निवास करते थे और वृक्षों के पत्तों के भोजन करते थे। दावते अस्मा (भूत प्रेत का अपसरण) में उन्होंने बड़ी दक्षता प्राप्त कर ली थी। हुमायूँ बादशाह (मृत्यु १५५६ ई०) उनका बहुत बड़ा भक्त था। ६६६ हि० (१५५८-५९ ई०) में मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी ने आगरे में उन्हें दूर से देखा। वे सवार थे और लोगों की भीड़ उनके चारों ओर एकत्रित थी। किसीके लिये भी उस भीड़ का पार करना सभव न था दाहिने और बॉयें लोगो के सलाम का उत्तर देते देते उनके सिर को क्षणभर के लिये आराम न मिलता था। उस दशा में उनकी पीठ झुकने के कारण घोडे की काठी से मिल जाती थी। वे जिस किसी को भी देखते उसी का सम्मान करते। यहाँ तक कि काफ़िरों का भी अत्यधिक सम्मान करते थे। ९७० हि० (१५६२ ई०) में ८० वर्ष की अवस्था पार करके उनका देहावसान आगरे में हो गया।[2]

बहरुल हयात[3] शेख मुहम्मद गौस की बड़ी ही महत्वपूर्ण कृति है। वास्तव मे यह "अमृत कुड" का अनुवाद है। शेख गौस ने इस पुस्तक

---

(१) फवायदुल फ़वाद, पृ० ६५

(२) मुन्तखब तवारीख, भाग ३ (कलकत्ता १८६४-६९), पृ० ४-६

(३) यह पुस्तक रजवी मुद्रणालय, देहली से १३११ हि० (१८९४ ई०) में प्रकाशित हुई थी।

की प्रस्तावना में लिखा है कि मुसलमानों में इस पुस्तक के प्रचार का यह कारण है कि जब सुल्तान अलाउद्दीन[1] ने बंगाल में प्रदेश विजित किया और वहाँ इस्लाम का प्रचार हुआ तो इसकी सूचना कामरूप पहुँची। उस प्रदेश का एक प्रसिद्ध ज्ञानी जिसका नाम मकामा योगी था और जो योग मे बड़ा दक्ष था आलिमों से शास्त्रार्थ करने के लिये लखनौती गया। शुक्रवार को वह जामा मस्जिद पहुँचा और वहाँ लोगों से आलिमों की गोष्ठियों का पता लगाया। सभी ने काजी रुक्नुद्दीन समरकदी की गोष्ठी का नाम बताया। वह उस गोष्ठी मे पहुँचा और उससे पूछा "तुम किस की पूजा करते हो ?" उन लोगों ने उत्तर दिया, "हम निर्दोष ईश्वर की पूजा करते हैं" उसने पूछा, "तुम्हारे इस्लाम धर्म का चलाने वाला कौन है ?" उत्तर मिला "मुहम्मद" योगी ने पूछा तुम्हारे इमाम (धर्म चलानेवाले) ने आत्मा के विषय मे क्या बताया है ?" आलिमों ने कहा, आत्मा को ईश्वर का आदेश बताया गया है" योगी ने कहा, "निस्सदेह मैंने ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश की पुस्तकों मे इसी प्रकार देखा है।' तत्पश्चात् वह मुसलमान हो गया और इस्लाम का ज्ञान प्राप्त करने में व्यस्त हो गया। थोडे समय में वह सभी बातो मे दक्ष हो गया। इसके उपरात उसने इस पुस्तक अमृत कुड के ज्ञान को काजी को बताया। उन्होंने इसका हिंदी (सस्कृत) से अरबी में भाषान्तर किया और इसे ३० अध्यायों मे विभाजित किया। किसीने इसका फ़ारसी भाषातर दस अध्यायों में किया था किंतु टूटे फूटे शब्द हिंदी से इस प्रकार मिला जुला कर लिखे थे कि किसी की समझ मे कुछ न आता था। हजरत ग़ौसुद्दीन (ग्वालियरी) ने कामरूप में स्वय कुछ दिन रहकर इस ज्ञान की खोज की थी। कस्बा भड़ौंच के निवासियों के आग्रह पर इस दास (कदाचित् शेख ग़ौस के भाई शेख बहलोल, मृत्यु १५३७ ई०) को उनका यह आदेश हुआ है कि इस पुस्तक में बहुतसे ज्ञानों का उल्लेख हुआ है किन्तु इसके वाक्यो मे कोई सबंध नहीं। अत. इसे पुनः लिखो। इस कारण जो कुछ वे बोलते जाते थे वह सब लिख लिया गया और इस पुस्तक का नाम 'बहरुल हयात" रखा गया। इस पुस्तक की विषय सूची इस प्रकार है।

प्रस्तावना—वजूद (ईश्वर के अस्तित्व) के अनादि होने की विशेषता।

अध्याय १—आलमें सगीर (मनुष्य) का परिचय तथा नक्षत्रों का प्रभाव।

---

(१) अली मर्दान अलाउद्दीन खलजी १२०८–१२१२ ई०

अध्याय २—आलमों की विशेषता का परिचय। इस अध्याय में दम (प्राणायाम) का सविस्तार वर्णन किया गया है। श्वास तथा इंद्रियों को वश में रखने की चर्चा की गई है। मनुष्य के स्वास्थ्य, विभिन्न उपचारों तथा संतानोत्पत्ति की भी चर्चा की गई है।

अध्याय ३—अंतः करण का परिचय तथा उसमें आनेवाली प्रेरणाओं एवं विचारों का उल्लेख।

अध्याय ४—रियाजत (तपस्या) का परिचय तथा विभिन्न आसनों की विधि।

अध्याय ५ – मनुष्य के जन्म का परिचय तथा दम (प्राणायाम) की किस्में और उनकी विशेषता।

अध्याय ६—शरीर का परिचय तथा उसकी विशेषता।

अध्याय ७—वहम (कल्पना) का परिचय।

अध्याय ८—शरीर के रोग तथा उनका परिचय।

अध्याय ९—तसखीरात (पराजय)।

अध्याय १०—ब्रह्मांड की उत्पत्ति, सत्त्व, रजस्, तमस्, इन तीन गुणों का परिचय।

इस पुस्तक के अध्ययन तथा शेख निजामुद्दीन औलिया एवं योगी की इस विषय पर जो वार्ता हुई उससे पता चलता है कि आरंभ ही से सूफी कुछ विषयों में योगियो के ज्ञान तथा योग की क्रियाओ को बड़ा महत्त्व देने लगे थे और योग को बड़ा उच्च कोटि का ज्ञान समझते थे।

सूफियों ने हिंदी को जिसे हिंदवी कहा जाता था बड़ा प्रोत्साहन दिया। जन साधारण से अधिक संपर्क रहने के कारण उन्हें हिंदी दोहे आदि सुनने का भी अधिक अवसर मिलता था। अमीर खुसरो ने (खड़ी बोली) हिंदी मे भी कविता की। खालिकबारी की रचना द्वारा उन्होंने फारसी अरबी तथा हिंदी के पर्यायवाची शब्दों का कोष प्रस्तुत किया। पहेलियों मुकुरियों तथा दो-सखुनो द्वारा उन्होने कौतूहल तथा विनोद की सृष्टि की है। डा० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि "चारण कालीन रक्तरंजित इतिहास में जब पश्चिम के चारणों की डिंगल कविता उद्धत स्वरों में गूंज रही थी और उसकी प्रतिध्वनि और भी उग्र थी, पूर्व में गोरखनाथ की धार्मिक प्रवृत्ति आत्म-शासन की शिक्षा दे रही थी, उस काल मे अमीर खुसरो की विनोदपूर्ण कविता हिंदी

साहित्य के इतिहास की एक निधि है। मनोरंजन और रसिकता का अवतार यह (कवि अमीर खुसरो) अपनी मौलिकता के लिये सदैव स्मरणीय रहेगा[१]।'

खुसरो के अतिरिक्त लगभग इसी समय में अब्दुर्रहमान तथा मुल्ला दाऊद नामक दो अन्य मुसलमान कवि हुए जिन्हें सधि-काल के उत्तर काल के महान् कवियो की उपाधि दी जा सकती है। भक्ति काल के कवियो की वाणी तथा सूफ़ियो की ग़ज़लों में भाषा के अतिरिक्त कोई अंतर न था। दोनो दो भिन्न-भिन्न स्रोतो से चलीं किंतु मार्ग एक ही था और परिणाम भी भिन्न न था। चौदहवीं शताब्दी ईसवी के अंत के तथा पद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के सूफ़ी हिंदी कविता में विशेष आनद लेते थे।

समा (सगीत) को चिश्ती सूफ़ियों की साधना मे बड़ा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था इस प्रश्न पर वह कट्टर आलिमों तथा राज्य के अधिकारियों से भी टक्कर लेने मे न डरते थे। यद्यपि शेख़ शिहाबुद्दीन सुहरवर्दी तथा हुजवेरी ने अपनी पुस्तकों मे समा के नियम निर्धारित कर दिए थे और बाद के सूफ़ियो ने भी उन नियमो के पालन करने तथा कराने का प्रयत्न किया किंतु भावावेश में किसी नियम का पालन करना या कराना कठिन है। अमीर खुसरो ने हिंदी रागों का भी आविष्कार किया और प्रचलित रागों में भी संशोधन किए। इस प्रकार समा मे भी हिंदी गानों को प्रविष्ट कर दिया गया। कभी-कभी हिंदी राग तो फ़ारसी गजलों से कहीं अधिक प्रभावशाली हो जाते थे। क़ुरान की आयतें भी हिंदी रागों मे गाई जाने लगी थीं[२]।

किसी ने शुक्रवार १६ रमजान ८०२ हि० (१४ मई १४०० ई०) को ख़्वाजा गेसू दराज,सैयिद मुहम्मद हुसेनी (मृ० १४२२ ई०) से प्रश्न किया कि "क्या कारण है कि सूफ़ियो को हिंदवी मे अत्यधिक आनद आता है और ग़ज़ल मे उतना आनद नहीं प्राप्त होता ?" गेसू दराज ने उत्तर दिया कि प्रत्येक की विशेषता पृथक् होती है और वह दूसरे में नहीं पाई जाती। हिंदवी बड़ी ही कोमल तथा स्वच्छ होती है और उसमें खोल कर बात कही जा

---

(१) हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, (प्रयाग, १९४८) पृ० १८७।

(२) मआसेरुल केराम, लेखक मीर गुलाम अली आज़ाद (आगरा १९१० ई०), पृ० ३८–३९।

सकती है। इसका सगीत भी बड़ा कोमल तथा स्वच्छ होता है जिससे विलाप उत्पन्न होता है और मनुष्य की दीनता, नम्रता तथा दोषों की ओर सकेत होता है। इसी कारण आवश्यकता वश सूफियों को उस ओर अधिक आकर्षण हुआ[1]।

इन हिंदी कविताओं में भारतीय तथा हिंदू सस्कार मूल रूप से विद्यमान रहते थे। हकायके हिंदी के अध्ययन से पता चलता है कि ध्रुवपद तथा विष्णुपद को सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त थी। श्री कृष्ण तथा राधा की प्रेम कथायें सूफ़ियों को भी अलौकिक रहस्य से परिपूर्ण ज्ञात होती थीं। इन कविताओं का "समा" में गाया जाना आलिमों को तो अच्छा लगता ही न होगा, कदाचित् कुछ सूफी भी इन हिंदी गानो की कटु आलोचना करते होंगे, अत इन कविताओं का आध्यात्मिक रहस्य बताना भी परम आवश्यक-सा हो गया। अब्दुल वाहिद सूफी ने हकाएके हिंदी में उन ही शब्दों के रहस्य की बड़ी गूढ व्याख्या की है जो उस समय हिंदी गानो में प्रयोग मे आते थे।

———

(१) जमावे उल क्लिम—ख्वाजा गेसू दराज सैयिद मुहम्मद अकबर हुसेनी की वाणी, इन्तिज़ामी प्रेस, उस्मानगज द्वारा मुद्रित। १३५६ हि० (१९३७-३८ ई०) पृ० १७२-७३।

मीर अब्दुलवाहिद बिलग्रामी

मीर अब्दुल वाहिद बिलग्राम के निवासी थे। इनके पिता का नाम सैयिद कुतुबुद्दीन था। सैयिद कुतुबुद्दीन सैयिद माहरू के पुत्र तथा सैयिद शाहबुद के पौत्र थे। सैयिद बुढ को मआसिरुल केराम[1] में एक बहुत बड़ा सूफ़ी लिखा गया है[2] और इस पूरे वंश को सूफ़ी सम्प्रदाय में बड़ा ही प्रतिष्ठित बताया गया है। सैयिद माहरू बिलग्राम से मरा कस्बे को चले गए और वहीं निवास करने लगे। इन्हें अपने समकालीन बादशाह से मरा तथा १४ अन्य ग्राम इनाम[3] में प्राप्त हो गए। कुछ समय उपरात उनका वहां के जमींदारों से युद्ध हो गया और सैयिद तथा उनकी कुछ संतान मार डाली गई। वे मरा में दफ़न हैं। उन्होंने माहरू खेड़ा बसाया और वहा एक छोटा-सा क़िला निर्माण किया। उनके अन्य आश्रित मरा से गौ घाट पहुँच कर वहीं निवास करने लगे किंतु उन लोगों का वहा भी रहना संभव न हो सका और वे बाडी में जो बिलग्राम से १४ कोस दूर है निवास करने लगे। सैयिद माहरू की संतान में से किसी ने सांसारिक शिक्षा प्राप्त की और समकालीन बादशाह ने उन्हें बाडी कस्बे का काजी नियुक्त कर दिया। वे लोग बाड़ी में पहुँच कर वहीं निवास करने लगे और अकबर (१५५६ ई०–१६०५ ई०) के राज्यकाल में बाडी क़स्बा उन्हें इनाम में प्राप्त हो गया।

मीर अब्दुल वाहिद, तीसरे पुत्र की, जो बाडी में रह गए थे, संतान हैं। इनका जन्म ९१५ हि०(१५०९–१० ई०) के लगभग हुआ था।[4] बिलग्राम

(१) मआसिरुल केराम, लेखक मीर गुलाम अली आज़ाद बिलग्रामी (मृत्यु १७८६ ई०)। इस पुस्तक में बिलग्राम के सूफ़ियों तथा कवियों का इतिहास है।

(२) मआसिरुल केराम, मुफ़ीदआम मुद्रणालय आगरा (१९१० ई०) पृ० २२–२४

(३) वह भूमि जो आलिमों आदि को सहायता के रूप में प्रदान की जाती थी।

(४) ९३३ हि० में जब उन के गुरु की मृत्यु हुई तो उनकी अवस्था १८ वर्ष की थी (मआसिरुल केराम पृ० २६)।

में अपनी पुत्री का विवाह होने के पश्चात् मीर अब्दुल वाहिद भी बिलग्राम चले गए और वहीं निवास करने लगे। सर्वप्रथम मैदान पुरा मुहल्ले मे निवास प्रारम्भ किया, तत्पश्चात् सलहदाताल के तट पर पहुँच कर निवास करने लगे।

मीर का विवाह कन्नौज में हुआ था और कुछ समय तक उन्होने वहीं निवास किया। मुल्ला अब्दुल कादिर की भेंट उनसे (९७७ हि० १५६९-७० ई०) कन्नौज ही मैं हुई थी। नफ़ायसुलमआसिर[1] के लेखक मीर अलाउद्दौला, मीर यहया सैफी कजवीनी तथा गुलजोर अबरार[2] के लेखक शेख़ मुहम्मद गौसी शत्तारी ने मीर को कन्नौज का सैयिद बताया है।

सर्वप्रथम मीर ने शेख़ सफीउद्दीन साईपुरी से बैअत (दीक्षा) प्राप्त की। शेख उनसे बड़ा स्नेह करते थे। जब मीर १८ वर्ष के थे तो शेख़ सफी मृत्यु को प्राप्त हो गए। तत्पश्चात् वे शेख़ हुसेन के मुरीद हो गए शेख हुसेन मीर के पिता के बहुत बडे मित्र थे। वे मीर पर बड़ी कृपा दृष्टि रखते थे और कहा करते थे कि यह मेरे मित्र का पुत्र है। शेख़ ने मीर को अपना खलीफ़ा भी बनाया।[3]

मीर के गुरु—शेख़ सफी अपने समय के बहुत बडे सूफ़ी थे और शेख सादुद्दीन खैराबादी के मुरीद थे। उन्होंने अपने गुरु की अत्यधिक सेवा की। वे उनके प्रत्येक आदेश का बड़ी सलग्नता से पालन करते थे। अब्दुल वाहिद ने लिखा है, "शेख साद की ख़ानकाह मे सफया नामक एक गुलाम बच्चा था। जब कभी उसे कोई पुकारता, शेख़ सफी उत्तर देते और उपस्थित हो जाते और कभी यह न सोचते कि उन्हें कोई भी सफया के नाम से न पुकारेगा।[4]

---

(१) इस पुस्तक की रचना लगभग १५८९ ९० ई० में हुई। इस बहुमूल्य पुस्तक की एक प्रति अलीगढ़ विश्वविद्यालय और एक प्रति रामपुर रिज़ा पुस्तकालय में है। लेखक ने इसका फारसी संस्करण तैयार किया है।

(२) इस पुस्तक की रचना जहाँगीर के राज्यकाल (१६०५ ई० १६२७ ई०) में हुई।

(३) सब-ए-सनाबिल, मआसेरुल केराम, पृ० ३६-३९

(४) सब-ए-सनाबिल, मआसेरुल केराम, पृ० ३३-३६

शेख सफ़ी की मृत्यु १६ मुहर्रम ६३३ हि० (१५२६ ई०) को हुई। मीर अब्दुल वाहिद द्वारा कहे गए "शेख पाक"[१] शब्द के अक्षरों से इस तिथि का पता चला है।

शेख हुसेन शेख सफ़ीउद्दीन साईपुरी के सबसे बड़े खलीफ़ा (उत्तराधिकारी) थे। सर्वप्रथम वे अपने समय के बड़े प्रतिष्ठित धनी लोगों में से थे और अत्यधिक दान किया करते थे। धनुर्विद्या, गेंद खेलना आदि की दक्षता जो सैनिकों, अमीरों तथा बादशाहों के लिये आवश्यक है, उन्हें प्राप्त थी। उन्होंने ईश्वर-प्रेम से विवश होकर सब कुछ त्याग दिया और सासारिक बंधनों से मुक्त हो गए। समस्त संपत्ति लुटा दी और एक वृक्ष के नीचे पहुँचकर मूर्च्छा की अवस्था में पड़े रहने लगे। इसी दशा में हज के लिये चल खड़े हुए। एक रात्रि में स्वप्न में मुहम्मद साहब से हिंदुस्तान लौटने तथा शेख सफ़ी से दीक्षा (बैअत) प्राप्त करने का आदेश पाकर हिंदुस्तान वापिस हुए और शेख सफ़ी के द्वार पर पहुँचे। शेख सफ़ी के सेवक ने निकल कर पूछा "शेख हुसेन कौन है?" शेख हुसेन ने उत्तर दिया, "मेरा नाम हुसेन है किंतु मैं शेख नहीं हूँ।" सेवक ने लौट कर शेख सफ़ी को सूचना दी। शेख सफ़ी ने कहा 'वही हैं'। सेवक वापस आकर शेख हुसेन को शेख सफ़ी की सेवा में ले गया। शेख सफ़ी ने बड़े स्नेह से अपनी टोपी (कुलाह) शेख हुसेन को पहनाई और अपनी खानकाह में रहने को स्थान दिया।[२]

मीर अब्दुल वाहिद ने सब-ए-सनाबिल में लिखा है कि शेख हुसेन को समस्त धन संपत्ति त्याग कर ईश्वरोपासना में इस सीमा तक लीन देख कर लोग आश्चर्य किया करते थे। शेख कहा करते थे कि यदि ईश्वर दीनों पर इतनी कृपा दृष्टि न रखता होता तो इस दीन को उस मुर्दार (संसार) से मुक्ति क्यों दिलाता और संतोष की संपत्ति क्यों प्रदान करता। कुछ लोगों को वे उत्तर देते, "मुझे ईश्वर का बड़ा ही कृतज्ञ होना चाहिए कि उसने मेरा नाम धनी लोगों की सूची से निकाल कर फ़क़ीरों की सूची में लिख

(१) शीन=३०१, ये=१०, खे=६००, पे=२, अलिफ़=१, काफ़=२०=९३३

(२) गुलज़ारे अबरार।

मुआस्सिरुल कराम, पृ० ३६–३७।

दिया है। जब वे अपनी अवस्था के अंत को प्राप्त होने लगे तो वे कभी-कभी कहा करते थे कि मेरी अभिलाषा यह है कि कोई अच्छे स्वर वाला यह आयत कोरी अथवा जैतश्री राग में जो कि हिंदी राग है, गा दे और मैं प्राण त्याग दूँ।"

कहा जाता है कि जब शेख का मृत्यु-काल निकट आ गया तो वे कोरी मस्जिद मे चले गए और वहाँ एक भवन निर्माण कराने लगे। वे मित्रों से विदा हुआ करते थे, इससे लोगों को आश्चर्य होता था। जब भवन पूरा हो गया तो उन्होंने प्रसन्न मुद्रा में प्राण त्याग दिए। उनकी मृत्यु ८७६ हि० (१५६८-६६ ई०) मे हुई[1]।

शेख हुसेन के गुरु शेख सफी उद्दीन ने भी मीर अब्दुल वाहिद के जीवन को बड़ा प्रभावित किया। अब्दुल वाहिद ने अपनी पुस्तक हक्के शुबहात में लिखा है, "आरभ में मै शरीअत तथा तरीकत की कुछ समस्यायें बडे बडे आलिमो तथा सूफियों से पूछा करता था किंतु सतोपप्रद उत्तर न मिलता था। मैंने सोचा कि ससार का भ्रमण करूँ। कदाचित् किसी ऐसे पुरुष से भेंट हो जाय जो इन समस्याओं का समाधान कर सके। जब रवाना हुआ तो प्रथम पड़ाव पर दोपहर के विश्राम के समय पीर दस्तगीर मखदूम (गुरु) शेख सफी को स्वप्न में देखा। उन्होंने अत्यधिक कृपा दृष्टि प्रकट की। मेरे मन में आया कि इस सयय मखदूम उपस्थित हैं और यात्रा की आवश्यकता नहीं। अत. पुन वजू करने के विचार से मखदूम की सेवा से पृथक् हुआ। मखदूम के एक मुरीद काज़ी इलाहदाद किदवाई ने मेरे पीछे से आकर कहा कि तुझे मखदूम बुला रहे हैं और कह रहे हैं कि मेरा दिल नही चाहता कि अमुक व्यक्ति किसी अन्य स्थान को जाय। फ़क़ीर तुरत वापिस होकर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ और कहा कि 'काज़ी इलाहदाद ने आपकी शुभ जिह्वा से प्रकट की गई यह बात मुझ तक पहुँचाई है।' उन्होंने कहा, 'ऐसा ही है'। जब मै जागा तो ठहरने तथा यात्रा के विषय में असमजस मे पड गया। अत मे यह निश्चय किया कि यदि फिर यही स्वप्न देखूँगा तो यात्रा न करूँगा। पुन. यही स्वप्न देखा और लौट पड़ा। शेख की खानकाह में उनकी कब्र के पैरों की ओर चालीस दिन तक एतकाफ़ (एकात वास) मे

(१) मआसेरुल केराम, पृ० ३८-३९।

रहा। मेरी उन सब समस्याओं का पूर्ण रूपेण समाधान हो गया और इस पुस्तक में मैंने उन प्रश्नो तथा उत्तरों को लिखा है[1]।"

९७७ हि० (१५६९-७० ई०) में जब मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी लखनऊ, बिलग्राम पहुँचा उस समय वह अस्वस्थ था। एक रात को मीर उसे देखने आए। यह दोनो की पहली भेंट थी और इसने मलहम् का काम किया। मीर ने कहा, 'यह प्रेम के फूल हैं[2]'।

मीर अब्दुल वाहिद की प्रसिद्धि के विषय मे जब अकबर बादशाह को ज्ञात हुआ तो अकबर ने अपने एक विश्वासपात्र को मीर के पास भेजकर उनसे भेंट करने की इच्छा प्रकट की। मीर शाही दरबार की ओर रवाना हुए। जब वे दरबार मे पहुँचे तो बादशाह ने उनका बड़ा आदर सम्मान किया और ५०० बीघे भूमि सियूरग़ाल (सहायता के रूप मे भूमि) मे प्रदान की[3]। इस भूमि के प्राप्त होने पर जो पत्र मीर ने एक अधिकारी को लिखा उससे ज्ञात होता है कि मीर इसे अपने लिये एक बंधन समझते थे।

---

(१) मुआसेरुल केराम, पृ० १५।

(२) मुन्तख़बुत्तवारीख़, भाग २, पृ० ६६।

मुल्ला अब्दुल कादिर ने यह भेंट ९७७ हि० में लिखी है किंतु ९७९ हि० के हाल में अपने इतिहास के दूसरे भाग में लिखा है कि "फकीर कात गोला से शाह लदार के मजार (समाधि स्थान) की जेयारत को (दर्शनार्थ) मकनपुर पहुँचा और प्रेम के जाल में फँस गया। ईश्वर ने प्रियतम की कौम वालों में से कुछ लोगों को मेरे ऊपर अधिकार प्रदान कर दिया। सिर हाथ तथा कंधे पर तलवार के ९ घाव लगे। सभी खाल कट गई किंतु सिर का घाव हड्डियों को तोड़ता हुआ, भेजे तक पहुँचा। भेजे तक घाव लगा और नीचे नस कुछ कट गई। दूसरे लोक का भ्रमण करके लौटा किंतु कुशल रहा बांगर मऊ में एक बड़ा ही योग्य जर्राह (शल्य चिकित्सा करनेवाला) मिल गया और उसने एक सप्ताह में घाव ठीक किए। मीर अब्दुल वाहिद की उपर्युक्त वार्ता से पता चलता है कि कदाचित् इसी घटना की ओर संकेत है और मुल्ला अब्दुल कादिर ने ९७९ हि० के स्थान पर ९७७ हि० लिख दिया है। ऐसी अशुद्धियां बदायूनी के इतिहास में बहुत बड़ी संख्या में हैं।

(३) मआसेरुल केराम (१), पृ० ३२।

मीर अब्दुल वाहिद की दृष्टि मुतखबुत्तवारीख की रचना के समय बह
खराब हो गई थी ।[1] और वे उस समय कन्नौज ही में निवास करते थे । बा
में वे बिलग्राम चले आए और उनका देहावसान शुक्रवार की रात्रि में
रमज़ान, १०१७ हि० (११ दिसम्बर, १६०८ ई०) को हुआ[2] । उनक
अवस्था लगभग १०२ वर्ष की थी ।

मीर के चार पुत्र तथा दो पुत्रियां थीं । इनमें से ज्येष्ठ अब्दुल जलील
जो बहुत बड़े सूफ़ी हुए हैं । उनका जन्म गुरुवार, २० रजब ९७२ हि
(२१ फर्वरी, १५६५ ई०) को हुआ । अपनी युवावस्था में वे १२ वर्ष त
पागलों की भांति जंगलों में घूमते रहे । उनकी मृत्यु सोमवार ८ सफ़र, १०५
हि० (१५ मार्च, १६४७ ई०) को हुई[3] ।

उनके दूसरे पुत्र मीर सैयिद फ़ीरोज थे । उनकी मृत्यु ५ मुहर्रम, १०६
हि० (४ नवम्बर, १६५५ ई०) को हुई[4] । उनके तीसरे पुत्र मीर सैयि
यहिया थे । उनका जन्म २ ज़ीकाद, ९८५ हि० (११ जनवरी, १५७८ ई०
को हुआ था[5] । उनके चौथे पुत्र मीर सैयिद तैयिब थे । उनका जन्म ९ रब
उल आखिर, ९८६ हि० (१५ जून १५७८ ई०) को हुआ । वे अपने पित
के शिष्य थे । अपने पिता के उपरांत उन्हें बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त हुई । शेख
अब्दुल हक मुहद्दिस[6] देहलवी उनके बड़े मित्र थे और उनके सम्मान हेतु उन्
शेख तैयिब कहते थे । मीर तैयिब की मृत्यु ५ रबीउल अव्वल, १०६६ (
जनवरी, १६५६ ई०) को हुई[7] ।

---

(१) मुतखबुत्तवारीख (३), पृ० ९९ ।
(२) मआसिरुल किराम (१), पृ० ३३ ।
(३) वही, (१), पृ० ४५–४६ ।
(४) वही, (१), पृ० ४५–४६ ।
(५) वही, (१), पृ० ४६–४७ ।
(६) शेख अब्दुल हक एक बहुत बड़े आलिम तथा सूफी थे । इनकी
मृत्यु १६४२ ई० में हुई ।
(७) मआसिरुल किराम (१) पृ० ४७–५१ ।

मीर अब्दुल वाहिद की रचनायें

मीर अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने तसव्वुफ के विषय में कई पुस्तकों की रचना की। इनकी पुस्तकों में सब-ए-सनाबिल[1] अथवा सनाबिल बड़ी प्रसिद्ध। इसमें तसव्वुफ़ के पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या है। यह पुस्तक प्रकाशित भी हो चुकी है। मीर ग़ुलाम अली आजाद ने लिखा है कि एक बार रमजान ११३५ हि० (जून—जुलाई १७२३ ई०) में, इन पृष्ठों के सकलन कर्त्ता की भेंट शाहजहानाबाद (देहली) में शेख कलीमुल्लाह चिश्ती[2] से हुई। मीर अब्दुल वाहिद की भी चर्चा हो गई। शेख कलीमुल्लाह मीर के गुणों का बहुत देरतक वर्णन करते रहे और कहा कि 'एक रात्रि मे मैं मदीने में सो रहा था। मैंने स्वप्न में देखा कि मैं तथा सैयिद सिबगतुल्लाह बुरुर्जी मुहम्मद साहब की सभा में उपस्थित हुए। बहुत-से सहाबी (सहचर) उम्मत (इस्लाम) के वली (सूफ़ी) उपस्थित थे। उनमें से एक से मुहम्मद साहब मुसकराकर वार्तालाप कर रहे थे और उन पर बड़ा स्नेह प्रकट कर रहे थे। जब सभा का अन्त हो गया तो मैंने सैयिद सिबगतुल्लाह से पूछा कि 'ये कौन हैं जिनसे मुहम्मद साहब को इतना स्नेह है?' उन्होंने उत्तर दिया कि 'ये मीर अब्दुलवाहिद बिलग्रामी हैं और

---

(१) सनाबिल का अर्थ अनाज की बाली है। सबा का अर्थ सात है। इसमें सात अध्याय हैं। अतः इसका नाम सब-ए-सनाबिल रखा गया।

(२) इनका जन्म २४ जमादि उस्सानी, १०६० हि० (२३ जून, १६५० ई०) में हुआ। इनके पिता नूरुल्लाह ने देहली की जामा मस्जिद के निर्माण में विशेष भाग लिया। बहुत से कतबे (खुदी हुई इबारतें) इन्हींके हाथ की हैं। कलीमुल्लाह के चाचा लुतफ़ुल्लाह भी बहुत बड़े गणितशास्त्रज्ञ थे। ताज महल लालकिला तथा जामा मस्जिद के निर्माण में इस वंश का बहुत बड़ा भाग था। शाह कलीमुल्लाह बहुत बड़े सूफी थे। इनकी सबसे अधिक प्रसिद्ध पुस्तक कशकोले कलीमी है। इसकी रचना शाह साहब ने ११०१ हि० (१६८९–९० ई०) में की। इनकी मृत्यु २४ रबीउल अव्वल, ११४२ हि० (१७ अक्तूबर, १७२९ ई०) में हुई।

उनके इतने सम्मान का कारण यह है कि उन्होंने सनाबिल की रचना की और इसे मुहम्मद साहब ने बड़ा पसन्द किया।[1]"

मीर अब्दुलवाहिद की एक अन्य पुस्तक हल्ले शुबहात है। इसमें मीर अब्दुल वाहिद ने तसव्वुफ़ के विषय में बहुत सी शंकाओं का समाधान किया है और इस्लाम से सबंधित बहुत-सी बातों के उत्तर लिखे हैं। इस पुस्तक की एक हस्तलिखित प्रति अलीगढ विश्वविद्यालय में विद्यमान है। इसकी नकल रजब १२२० हि० (१८०५ ई०) मे हुई थी[2]।

कलेमातेचन्द एक और छोटी सी हस्तलिखित पुस्तक अलीगढ विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में विद्यमान है। इसमें तसव्वुफ़ सबधी कुछ समस्याओं का समाधान किया है[3]। इनको एक अन्य पुस्तक शरहे नुज़हतुल अरवाह[4] है नुजहतुल अरवाह की टीका की चर्चा मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी ने की है[5]। मीर गुलाम अली आजाद ने 'किस्स ए चहार बेरादर (चार भाइयों की कहानी), शरहे मुसतले होते दीवाने ख्वाजा हाफिज (दीवाने ख्वाजा हाफ़िज के पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या) आदि कई ग्रंथों को मीर की रचना बताया है।[6]

मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी ने लिखा है 'मीर को कविता करने का बड़ा ही उत्कृष्ट ढग प्राप्त है। एक रूपवान सलोने प्रियतम के लिये लिखा है —

---

(१) म आसेरुल किराम पृ० ३०

(२) एहसन कलेकशन २९७˙७।२१

(३) „ „ २९७˙७।१२

(४) यह तसव्वुफ की बड़ी प्रसिद्ध पुस्तक है और इसकी रचना रुक्नुद्दीन हुसेन (फ़रख़े सादात हुसैनी ने) १११२–१२ ई० में की। उन्होंने अधिकतर मुल्तान तथा हेरात में निवास किया। इनकी मृत्यु ७२९ हि० (१३२८ ई०) के लगभग हुई।

(५) मुन्तखबुत्तवारीख, भाग ३, पृ० ६५

(६) मआसेरुल केराम, पृ० २९

(छंद)

तेरे ध्यान ने मेरे हृदय मे स्थान प्राप्त कर लिया है।
तेरे अतिरिक्त मेरे दिल मे कदापि किसी के लिये स्थान नहीं।

(छद)

निस्सदेह उसने युद्ध के उपरात जो पहली बार सधि कर ली है,
कुछ समय के लिए प्रेम से बैठ जिससे मै अपने आपको त्याग सकूं।

मीर अब्दुल वाहिद का एक दीवान (ग़ज़लों का सग्रह) अलीगढ विश्वविद्यालय के पुस्तकालय मे विद्यमान है। इसकी प्रतिलिपि (नक्ल) ११११६ हिं० (१७०४–५ ई०) मे तैयार हुई थी[1]। मीर अब्दुल वाहिद एक बहुत बडे कवि भी थे। मीर ग़ुलाम अली आजाद ने लिखा है 'कभी कभी वे कविता भी करते थे'।

हल्ले शुबहात मे लिखा है, 'मै गज़ल में ख्वाजा हाफ़िज शीराजी[1] का शिष्य हूँ और ख्वाजा ने भी मुझे अपना शिष्य बनाना स्वीकार कर लिया है मानो इस तुच्छ से यह सकेत किया हो—

(छंद)

जिस किसीने भी गजल मे हाफ़िज का रहस्य सीख लिया
वह मेरी मधुर विचित्र शैली में मेरा मित्र है'[2]

मीर अलाउद्दौला कजवीनी ने भी मीर अब्दुल वाहिद की कविता की प्रशसा की है।[3]

हकाएके हिंदी की रचना मीर अब्दुल वाहिद ने जमादिउल अव्वल ९७४ हि० (नवम्बर-दिसम्बर १५६६ ई०) मे की। इसमें उन शब्दों की व्याख्या की गई है जो हिंदी गानो मे प्रयुक्त होते थे। यह पुस्तक तीन अध्यायों मे विभाजित है—

---

(१) एहसन कलेक्शन ८९१ ५५।११।८

(१) ख्वाजा शमसुद्दीन मुहम्मद हाफिज़ शीराज़ी ईरान के सबसे बडे ग़ज़लों के कवि माने जाते है। ग़ज़लों द्वारा तसव्वुफ़ की गूढ़ व्याख्या ख्वाजा की ग़ज़लों में मिलती है। इनकी मृत्यु शीराज में १३८९ ई० में हुई।

(२) मआसिरुल केराम (भाग २), पृ० २४७–२४८

(३) नफायसुलमआसिर

(१) उन वाक्यों के अर्थ के सकेत के विषय में जिनका प्रयोग ध्रुपद में होता है ।

(२) उन सकेतो तथा वाक्यों की व्याख्या में जो विष्णुपद में आते हैं।

(३) ध्रुपद एव विष्णुपद के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर आनेवाले शब्दों की व्याख्या ।

इस पुस्तक की एक प्रति अलीगढ विश्वविद्यालय मे विद्यमान है। लेखक को इस पुस्तकका पता १९५० ई० में अलीगढ विश्वविद्यालय की फारसी पुस्तकों की सूची तैयार करते समय चला ।

यह पुस्तक सैयिद अली एहसन मारहरा निवासी के सुपुत्र सैयिद मुहम्मद एहसन (असिस्टेंट रजिस्ट्रार) अलीगढ वि-वविद्यालय द्वारा विश्व-विद्यालय को प्रदान की हुई पुस्तकों में बहुत बुरी दशा मे थी । ससार के विभिन्न भागों की हस्त-लिखित पुस्तकों का प्रकाशित सूचियों मे इस पुस्तक का कहीं कोई उल्लेख नहीं । भारतवष में जिन लोगों के पास अथवा जहाँ जहाँ फारसी की हस्तलिखित पुस्तकें वर्तमान हैं और जिनकी कोई सूची अभी तक प्रकाशित नहीं हुई है विशेषकर बिलग्राम, हरदोई, साडी, लख-नऊ तथा उन्नाव में विशेष प्रयत्न तथा खोज करने पर भी इस पुस्तक की किसी अन्य प्रति का कोई पता नहीं लग सका । सभव हैं कि अब इस पुस्तक की कोई प्रति कहीं वर्तमान न हो । सैयिद अली एहसन साहब की पुस्तकों में इस पुस्तक के वर्तमान होने का कारण यह है कि सैयिद साहब मारहरे के एक सूफ़ी वश के बडे प्रतिष्ठित व्यक्ति थे और उस वश का बिल-ग्रास के सैयिदों के वश से विशेप सबध था । मीर अब्दुल वाहिद के ही वश के एक व्यक्ति सैयिद इमाम शाह गदा ने ११६६हि० (१७५६ ई०)मे इसकी नकल करवाई थी, किसी प्रकार मारहरा पहुँच गई और सैयिद अली एहसन के वशवालों के विद्याप्रेम के कारण सुरक्षित रह गई । सैयिद अली एहसन साहब उर्दू तथा फ़ारसी के बहुत बडे विद्वान, लेखक तथा कवि थे । इनकी रचनायें बड़ी प्रसिद्ध हैं। ये अलीगढ विश्वद्यालय मे उर्दू के अध्यक्ष थे और इनकी मृत्यु १९३९ ई० मे हुई ।

इस पुस्तक मे ३६ पृ० हैं और पूरी पुस्तक फ़ारसी लिपि मे बड़ी असावधानी से लिखी गई है। हिंदी शब्द लाल स्याही से फ़ारसी लिपि में

लिखे हैं। शेष पुस्तक काली स्याही से लिखी गई है। फ़ारसी लिपि में लिखे हुए हिंदी शब्दों का पढना यों ही बड़ा कठिन होता है। और असावधानी से फ़ारसी लिपि में लिखे हुए शब्दों का पढना तो बड़ी ही टेढी खीर है विशेषकर उस अवस्था में जब कि पुस्तक दीमकों के प्रकोप द्वारा चलनी हो गई हो। किसी अन्य प्रति के विद्यमान न होने से कोई और भी सहायता न मिल सकी। ऐसी दशा में इस संस्करण में हिंदी के कुछ ऐसे शब्द रह गए हैं जो किसी प्रकार न पढे जा सकते थे। उन्हें मूल प्रति के अनुसार जो सबसे उचित रूप हो सकता था उसी रूप में लिख दिया गया है। उनकी शुद्धि का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।

हक़ाएक़े हिंदी

(हिंदी अनुवाद)

हे ईश्वर ! तूने मुझे राज्य (मनुष्यता) प्रदान किया तथा मुझे हदीस[1] के अर्थ के समझाए ।

तू भूमि तथा आकाश का जन्मदाता है । तू लोक तथा परलोक में मेरा स्वामी है । मेरी मृत्यु मुसलमान के रूप में कर तथा पवित्र लोगों से मुझे मिला दे ।

ये सिद्धांत वास्तविक अर्थ के सूचक हैं एवं कुछ हिंदवी वाक्यों तथा रागों में आते हैं ।

मसनवी[2]

सितार तथा सरोद (बाजे) की आवाज एवं उतार चढ़ाव निरतर ग़ैब[3] (परोक्ष) से इश्क[4] (परम प्रेम) का रहस्य बताती हैं ।

यदि तेरे अंतःकरण में परमप्रेम की ध्वनि आ जाय, तो हृदय के परदों को भी खोल देगी ।

तू देख कि दोनों लोक परम प्रेम की ध्वनि हैं और खल्क (प्राणी) तथा अम्र[5] (ईश्वर का आदेश) परम प्रेम के बाजे के परदे हैं ।

ईश्वर के नामों[6] के ज्ञान का रहस्य क्या है ? दोनों लोकों को इश्क की एक आवाज समझो ।

ससार के लिये उसका जीवन तथा मरण क्या है ? इश्क के कानून (बाजे) का मुख तथा उसकी आवाज ।

तार तथा सितार क्या हैं ? आध्यात्मिक रहस्य हैं । नदी शुष्क कर दे, जिससे तू उस रहस्य को सुन सके ।

सूखी नदी, सूखी लड़की तथा सूखी खाल[7] प्रत्येक बड़ी परोक्ष से परम प्रियतम के छिपे हुए रहस्य बताती हैं ।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि शुष्क तारों तथा लकड़ियों से किस यह ध्वनि निकलती है । इसे समझ ।

तू ऐमन[८] की घाटी मे जाकर वृक्ष से यह आवाज़ सुनता है कि वास्तव में "मैं ही अल्लाह हूँ"।

इसी प्रकार वृक्ष की डाली के भी जिह्वा होती है और वृक्ष तथा डाली समाचार पहुँचाते रहते हैं।

केवल वृक्ष से अल्लाह से वातें करनेवाले मूसा[९] ही आवाज़ सुन सकते हैं, किंतु सत्यवादी मनुष्य डाली से भी आवाज़ सुन सकते हैं[१०]।

जिबरील[११] तथा उनके परों की दशा को याद करो[१२]। यही आवाज़ अल्लाह की वार्ता का भी प्रमाण है।

यदि आरभ ही से "अर्श आजम"[१३] न हिले तो तार से राग की ध्वनि किस प्रकार उचित रूप से निकल सकती है?

स्मरण रहे कि किसी वाक्य का ज्ञाननिष्ठ लोगो को परिभाषा में कोई पूर्ण नियम तथा सिद्धात नहीं बनाया जा सकता, कारण कि उनके अनुसार प्रत्येक वाक्य की एक ध्वनि होती है और उसकी एक सीमा है चाहे वह किसी कारण से निर्धारित कर ली गई हो। प्रत्येक शब्द का एक अर्थ होता है जो उसके बोलने के अनुसार निश्चित होता है। उसका कारण चाहे जो कुछ भी हो। सीमा निर्धारण तथा कारण, सबंध के अनुसार होते हैं।

छद

वजूद (ईश्वर का अस्तित्व) अपने कमाल (निपुणता) में घूम रहा है और उसकी सीमायें केवल एक सबंध से हैं।

सबध तथा लगाव की कोई सीमा अथवा अत नहीं। आवश्यकतानुसार प्रत्येक रूप (शब्द) के अनेक अर्थ होते हैं एव प्रत्येक अर्थ के अनेक रूप होते हैं। इसी कारण किसी वाक्य का कोई निश्चित सिद्धात नहीं हो सकता।

वास्तविकता अक्षरों मे कदापि नहीं आ सकती, कारण कि अथाह समुद्र पात्र मे नहीं समा सकता।

किंतु जो कुछ लिखा गया सादिक (साधक, सूफ़ी) के लिये ज्ञान की कुंजी है तथा रहस्यों के ज्ञानियो के लिये जलता हुआ दीपक है। जो अनुपयुक्त राग सुननेवाले के हृदय को व्याकुल कर देते हैं, उनका सबध इन लोगों (सूफ़ियों) से नहीं होता।

छंद

—इस कारण कि प्रेम की बातें पहेली हैं न उनका सिर होता है और न पैर।

जो बात तेरे चित्त को सत्य न ज्ञात हो और जिसे तू नहीं जानता, उसे त्रुटिपूर्ण न कह। स्मरण रहे कि श्रोता बहुत हैं किंतु ज़ाएक (आस्वादयिता अर्थात् परमेशर-सबधी बातों के रसिक) बहुत थोड़े हैं, जो जाएक नहीं, वह इन ज्ञान सबधी बातों के सुनने की योग्यता नहीं रखता। जिसे बहार (बसत) तथा उसकी कलिया प्रभावित न कर सके और सगीत तथा उसके तार उत्तेजित न कर सकें. उसका चित्त दूषित है और उसका कोई उपचार सभव नहीं।

छंद

हे मित्र, ज्ञाननिष्ठ डींग नहीं मारते उनको कश्फ़[14] (दैवी प्रकाश) अथवा तसदीक (प्रामाणिकता) चाहिए।

प्रथम अध्याय

उन वाक्यों के अर्थ के सकेत के विषय में जो ध्रुव पद मे आते हैं, हे जाएक, समझ ले।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **सर्सुती** (सरस्वती) अथवा **सुर** (स्वर) आए तो **सरस्वती** से ईश्वर की दया के निरतर तथा लगातार पहुँचने एव परमेश्वर के वुजूद (अस्तित्व) की ओर सकेत होता है, जो अनत है। **स्वर** से उस देन की ओर सकेत होता है जो तालिबों (साधकों, सूफियों) के चैतन्य हृदय को प्राप्त होती रहती है जिनमें वारदात (उन्माद) जज़बात (भावावेश) तथा इलहाम[15] (दैवी प्रेरणा) सम्मिलित होते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **ताल** तथा **बंधन** की चर्चा हो तो इससे दृढता की ओर सकेत होता है और यह करामात (चमत्कार) से भी बढ कर है। यदि हिंदवी वाक्यों में **अनागत** **अतीत** तथा **सम** का प्रयोग हो तो **अनागत** से उस जज़बे (भावावेश) की ओर सकेत किया जाता है जिनके उपरात सुलूक (साधना) होता है। **अतीत** से उस सुलूक (साधना) की ओर सकेत किया जाता है जिनके पूर्व जज़बा होता है और **सम** द्वारा जज़बे (भावावेश) तथा सुलूक (साधना) की बराबरी की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **पात्र** का उल्लेख हो तो इस शब्द द्वारा उस सालिक (साधक) की ओर संकेत होता है जो मजज़ूब[17] हो जाए, अथवा उस मजज़ूब की ओर संकेत होता है जो सालिक (साधक) हो जाय, या केवल सालिक की ओर भी संकेत होता है।

यदि हिंदवी में **नायक** के गुणों की चर्चा हो तो इस शब्द द्वारा पीरे तरीकत[18] तथा मुर्शिदे हकीकत[19] की ओर संकेत होता है। संक्षेप में जिसे भी धर्म की चौखट से लाभ प्राप्त हो जाय, इस शब्द का तात्पर्य उसी से होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **भुवनायक** की चर्चा हो तो इसका तात्पर्य इस आयत[20] से होता है 'नित्य वह एक नई शान से होता है। हे ईश्वर, प्रत्येक हृदय से (में) तेरे रहस्य दूसरे ही होते हैं'।

यदि हिंदवी वाक्यों में **बहुरूपी** का उल्लेख होता है तो इसका संकेत इस ओर होता है कि जमीले हकीकी[21] (परमेश्वर) का सौंदर्य संसार के कणों में से प्रत्येक कण में माशूक (प्रिय) के समान नई छवि तथा रमणीयता दिखलाता है, और आशिक (प्रेमी) के समान नई अभिलाषा तथा आकांक्षा प्रकट करता है। प्रत्येक समय में माशूक की सुन्दरता तथा रमणीयता नये रूप में प्रकट होती है, और आशिक की अभिलाषा एवं आकांक्षा नित नये प्रेम तथा आनंद का प्रदर्शन करती है, और इसकी कोई सीमा नहीं।

छंद

इस कारण कि उसका जमाल (माधुर्य) सहस्रों रूप रखता है, अतः प्रत्येक कण में एक नवीन दर्शन होता है।

अतः यह आवश्यक था कि उसने प्रत्येक कण को अपने जमाल (माधुर्य) द्वारा एक नये कपोल के रूप में प्रदर्शित किया।

यदि हिंदवी वाक्यों में **सुढंग** के गुणों की चर्चा हो तो उससे उस मुकाम[22] (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जहाँ समस्त कमालात (निपुणता) एकत्र हैं और जहाँ समस्त हालात[23] पाए जाते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **वेसी (वेशी)** के गुणों की चर्चा हो तो इससे संकेत होता है कर्म तथा वचन की बराबरी की ओर तथा अंतरंग एवं बहिरंग की समानता की ओर, जैसे कि बुजुर्गों ने कहा है 'जैसा तू अपने को दिखाता है वैसा ही हो जा' तथा 'तू जैसा है वैसा ही अपने को दिखा।'

यदि हिंदवी वाक्यों में जमनिका (यवनिका) का उल्लेख हो तो इसका सकेत ऐश्वर्य की चादर की ओर होता है कि ऐश्वर्य मेरी चादर है।'

यदि पात्र की विशेषता में रूप रंग तथा गुन (गुण) का प्रयोग हो तो रूप द्वारा आरिफ़ (ज्ञानी) के आकाश (ईश्वर) की ओर तथा रंग द्वारा परम प्रेम की निपुणता एवं परम प्रियतम के अतिरिक्त किसी अन्य ओर आकर्षित न होने की ओर सकेत होता है। गुन (गुण) का तात्पर्य निष्ठा एव सत्यता से होता है।

छद

यदि तू खास बदा होना चाहता है तो निष्ठा तथा सत्य के लिये तैयार हो जा।

यदि पात्र के गुणों में चतुराई का उल्लेख हो तो मकामे कनूनत तथा मुकामे बेनुनत की ओर सकेत होता है अर्थात् बहिरङ्ग में खल्क (सृष्टि) के साथ होना तथा अन्तरङ्ग में ब्रह्म के साथ होना, इस प्रकार कि सृष्टि ब्रह्म की ओर से असावधान न कर दे तथा ब्रह्म (का ध्यान) सृष्टि की ओर से असावधान न बना दे।

यदि हिंदवी वाक्यों में माग का उल्लेख हो तो उसके द्वारा सिराते मुस्तकीम (सीधे मार्ग) की ओर सकेत किया जाता है और बालों की कालिमा का तात्पर्य अधकार पाप तथा भ्रष्टाचार की दिशाओं से होता है। अल्लाह ने कहा है 'सत्य यह है कि मेरा यह मार्ग सीधा है। इसी पर चलो और दूसरे मार्ग पर न चलो। वे तुम्हे अल्लाह के मार्ग से हटा देंगे।'

यदि हिंदवी वाक्यों में भरी माग अथवा बिथरी माग अथवा इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इससे सालिक (साधक) के नफ़्स (वासना) के मार्गभ्रष्ट होने को तथा खुदी (अहभाव) अथवा हृदय की मार्ग भ्रष्टता की ओर एव अहभाव के अभाव की प्रशंसा की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यो मे घूंघट की चर्चा हो तो इसके द्वारा आशिक की पवित्रता के आवरण की ओर सकेत किया जाता है। प्रेम जुलैखा[२५] की पवित्रता के परदे के बाहर ले आता है।

यदि हिंदवी वाक्यो में सेंदुर (सिन्दूर) तथा इसी प्रकार के शब्दो का, जिनका सम्बन्ध मांग के केश कर्म से है, प्रयोग होता है, तो इसका तात्पर्य ईश्वर की स्वीकृति से होता है।

यदि हिन्दवी वाक्यों में **अलक** अथवा इसी प्रकार के शब्दों अथवा **तिल** का उल्लेख होता है तो इसका तात्पर्य उन वस्तुओं से होता है जिनके द्वारा आरिफों (ज्ञानियो) को व्यग्रता, तालिबों (अभिलाषियों) को उद्विग्नता तथा आसक्तों को दीनता प्राप्त होती है। कभी उनकी उस व्याकुलता की ओर सकेत होता है जो उन्हें परमेश्वर के आवरण में होने के कारण प्राप्त होता है। कभी इसका अर्थ पाप होता है। कभी कभी असावधानों की आयु की ओर भी सकेत किया जाता है।

छद

यदि तुझे अपने बालों के एक तार का भी मूल्य ज्ञात हो तो अपने मृगमद की सुगन्ध वाले केश-पाश को कभा नष्ट न होने दे।

यदि हिन्दवी वाक्यों में **जूडा** का प्रयोग हो तो इसके द्वारा अहभाव तथा आडम्बर के अधकार की ओर सकेत किया जाता है, कारण कि वही समस्त अधकारो का योग है।

यदि हिन्दवी वाक्यों में **लिलार** तथा **माथा** एव इसी प्रकार के शब्द आएँ तो सिर से (ईश्वर) के लिखे (हुए आदेशो) की ओर तथा **बारगह** से प्रथम तअय्युन (निर्दिष्ट) की ओर सकेत होता है। यदि इनके आभूषणों का उल्लेख हो तो इनसे ईश्वर के उत्कृष्ट नामों की ओर सकेत होता है, जिनका प्रयोग ईश्वर के लिये ही होता है और जिनकी सीमा पहले से निर्धारित है। पूर्व निर्दिष्ट जात (सत्ता) मुहम्मद (उन पर दुरुद और सलाम हो) की हकीकत (वास्तविकता) है। परमेश्वर के बहुत-से उत्कृष्ट नाम हैं।

छद

जो कुछ भी सर्वप्रथम गैब (परोक्ष) से दृष्टिगत हुआ, वह नि.सन्देह उसी की जात (सत्ता) का नूर (ज्योति) था।

यदि **टीका** तथा **तिलक** की चर्चा हो तो इससे उपकार की ज्योति की ओर सकेत होता है जो किसीके मुख द्वारा स्पष्ट होता है "उनके मुखो मे सिजदो के चिह्नो के कारण चमक है।

"प्रेमियो के चिन्ह दूर ही से प्रकट होते हैं।"

यदि हिंदवी वाक्यो मे **नासिका** अथवा **बेसर** एव इसी प्रकार के शब्दो की चर्चा हो तो इससे हृदय की सुगधि की ओर सकेत होता है, जो प्रेम की सुगध मे मिश्रित होती है।

"यदि तू मुझे मूर्ख वृद्ध न समझे तो मैं यूसुफ[२७] की सुगध का अनुभव कर रहा हूँ।

छंद

मनुष्य को चाहिए कि वह सुगध का अनुभव करना जाने क्योंकि समस्त संसार शीतल पवन से परिपूर्ण है।

यदि हिंदवी वाक्यो में **लोचन** तथा **नेत्र** एव इसी प्रकार के शब्दो का उल्लेख हो तो इसके द्वारा उस नाम की ओर संकेत होता है जो दोरूपी समार को प्रकट करता है तथा ऐसे विशेषणों का योग है जो एक दूसरे के विरुद्ध हैं।

छद

कदाचित् मुझे तेरे काले नेत्रों ने यह कार्य सिखा दिया है अन्यथा मस्ती तथा गोपनीयता प्रत्येक द्वारा सम्भव नहीं।

और कभी बसीर (देखने वाला, ईश्वर) के नाम के अर्थ की ओर सकेत होता है और कभी मोमिन (धर्मनिष्ठ) की बुद्धि तथा ज्ञान की ओर और कभी उसके शिक्षा ग्रहण करनेवाले नेत्रों की ओर संकेत होता है। हदीस मे आया है कि मोमिन के ज्ञान से भय करो, क्योंकि वह ईश्वर की ज्योति से देखता है।

यदि हिंदवी में **बाके नयन, छबीले नेत्र** अथवा **अलसाने नैन** या इसी प्रकार के नेत्रो के गुणों की चर्चा हो तो उससे उस आख की ओर सकेत होता है, जिसके सम्मुख ज्योति तथा अधकार दोनो के आवरण हट जाए।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **भौंहों, बरुनी** तथा **कटाक्ष** का उल्लेख हो तो उसका अर्थ इस छद से स्पष्ट होता है।

छंद

भृकुटियो तथा कटाक्ष मे मैंने दोनों लोकों को शिकार कर लिया है, तू इस बात पर ध्यान न दे कि धनुषबाण दृष्टिगत नहीं होते।

कभी कभी इस छद की ओर संकेत किया जाता है।

उसके नेत्रों से प्राणो की रक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि मैं जिस ओर देखता हूँ, वह एक कोने मे घात लगाए बैठा है और बाण धनुष में जोडे है। कभी भृकुटि से काबा कौसैन का स्थान समझा जाता है और कभी कभी

महराब (समरभूमि*) अर्थात् युद्ध के स्थान एव युद्ध के हथियार की ओर सकेत करते हैं, अर्थात् युद्ध क्योंकि वहीं जेहादे अकबर (सर्वोच्च निरोध) होता है।

छंद

दृष्टि के छिपने के स्थान में मेरे घायल हृदय से युद्ध हो रहा है। उसकी भृकुटि तथा कटाक्ष के धनुष बाण मुझे ला दो।

यदि आंख के बन्द होने, रोने अथवा जागने के गुणों का उल्लेख हो तो उसका तात्पर्य वे गुण हैं जिनकी चर्चा इस हदीस में है—

'अग्नि तीन आखों का हराम[२१] है। वह एक आख जो परमेश्वर के मार्ग में जागे। दूसरी आख वह जो ईश्वर द्वारा हराम की हुई वस्तुओं से बचे। तीसरी वह आख जो भगवान के भय से रोए। कभी नींद के गुणों से इस आयत के इस अर्थ की ओर सकेत किया जाता है 'उसको ऊघ अथवा निद्रा नहीं आती'।

छंद।

उसके दोनो नेत्रो मे सृष्टि का कोई मूल्य नहीं, तो फिर उसमें निद्रा एव मस्ती किस प्रकार आ सकती है।

हमारा तथा सृष्टि का अस्तित्व एक स्वप्न है। मिट्टी का ब्रह्म से क्या सबध हो सकता है?

यदि नेत्रो के साथ काजल का उल्लेख हो तो उससे इस (आयत) का सुरमा समझा जाता है—'आख न झपकी' और कभी इस छद से तात्पर्य होता है।

छंद

भाग्य के सँवारनेवाले ने कौन कौन-सी आपत्तिया उत्पन्न की। उसने उसके चञ्चल नरगिस (नेत्र) को नाज के सुरमे से काला कर दिया।

यदि अँखियाँ फड़कीं कहा जाय तो उससे (ईश्वर से) सभोग की आशा तथा शुभ शकुनो की ओर सकेत होता है।

यदि अँखिया मटकी कहा जाय तो माशूक के नेत्रों के कृत्रिम भावों की ओर सकेत किया जाता है, क्योंकि वह अजली (अनादि) सौंदर्य तथा माधुर्य की नदी का स्रोत है।

---

* यहा युद्ध की समरभूमि से नहीं अपितु आध्यात्मिक निरोध से तात्पर्य है।

छंद

तेरा कृत्रिम भाव अंत मे संसार के लिये कयामत बन जाता है। फिर तेरे चेहरे, मुखडे, केशपास एवं शरीर का तो कहना ही क्या है ?

यदि हिंदवी वाक्यों में सरवन (श्रवण) कर्णफूल अथवा तरौना या इसी प्रकार के शब्दो का उल्लेख हो जिनका संबध कान के आभूषणों से होता है, तो इसका सकेत हृदय के, गैबी (परोक्ष संबधी) इलहामों (दैवी प्रेरणा) अथवा धार्मिक वाजों (प्रवचन) अथवा कुरान की शिक्षा सुनकर, खुल जाने से होता है। 'इस कुरान मे उन लोगों के लिये शिक्षा है, जिनके पास हृदय है अथवा जो लोग (इसे) सुनकर प्रमाणित समझ लेते हैं।' इसका सकेत वस्तुओ (भूत) के तस्बीह (सुमिरन) की ओर होता है।

छंद

जो कुछ तू देखता वह उसके जिक्र[31] में शोर गुल कर रहा है किंतु इस अर्थ को वही हृदय समझ सकता है जो कान बना हो।

यदि हिंदवी में कपोल अथवा इसी प्रकार के इसके पर्यायो अथवा मुख या आनन की चर्चा हो तो उससे मुकाशर्फ (दैवी प्रकाशन) एवं मुशाहदे (अनुभूति) के नूर (ज्योति) का उल्लेख होता है। कभी उस अर्थ की ओर सकेत होता है जिसका पारिभाषिक रूप से ईश्वर के मुख से सबंध होता है और कभी अजल (अनादि) की सफ़ेद रूई (आदर-सम्मान) तथा जन्म-जन्मातर के सौभाग्य की ओर सकेत होता है। लोक तथा परलोक के कल्याण का सकेत उसी ओर होता है।

छंद

अजली सफ़ेद रू (अनादि काल से सम्मानित) मुहम्मद हैं क्योंकि उनके कारण ससार का शीश वृद्धावस्था के होते हुए भी काला है।

यदि हिंदवी वाक्यों में अधर एव उसकी लाली के गुणो का उल्लेख हो तो ईश्वर की अनादि काल से होने वाली अनुकम्पाओं की ओर संकेत होता है। यदि उसके साथ-साथ पान की लाली के गुणों की चर्चा हो तो ईश्वर की दया के, प्रकोप के पूर्व, दृष्टिगत होने की ओर सकेत किया जाता है जिसकी चर्चा इस प्रकार है, "वे, जो लोग उत्तम रूप से उत्कृष्ट कार्य करते हैं और अधिक करते हैं।"

उसकी **मुस्कान** से इस ओर संकेत होता है "वह सबसे अधिक हँसने वाला है।" कभी इस हदीस की ओर संकेत होता है कि "हमारा ब्रह्म हँसता हुआ ही दृष्टिगत हुआ।"

छंद

वह लावण्यमय मुख किसी को दृष्टिगत न होता था। तू हँसा और तूने संसार में एक कोलाहल मचा दिया।

उसके मुख के मेत्र पर जो उद्यान के समान है, हँसी है। यह हँसी स्वाभाविक है कृत्रिम नहीं, और ऐसी हँसी है, जिसका उल्लेख नहीं किया जा सकता।

मेरी हँसी से रहस्य के संसार मे उपवन खिल जाता है, कारण कि आत्मा संबंधी रहस्य मजाज[३२] की ज़बान से नहीं कहे जा सकते।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **रसना** की चर्चा हो तो उससे गैब (परोक्ष) की जबान की ओर संकेत किया जाता है जिसे वही[३३] तथा इलहाम (दैवी प्रेरणा) भी कहते हैं, किंतु वही की वार्ता से प्राचीन वार्ता (ईश्वर की इच्छा) स्पष्ट होती है "कोई मनुष्य अल्लाह से वही के द्वारा अथवा परदे के पीछे से वार्ता करने के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार की वार्ता नहीं कर सकता।" इलहामी वार्ता से नवीन वार्ता समझी जाती है और वह इस प्रकार जैसे वह प्राचीन को ओर से हो। यद्यपि सहस्रों आवाज़ें उठती हैं किंतु हकीकत के कानो से सुना जाय तो एक ही आवाज है।

छंद

सृष्टि एक नदी है और वार्ता की शक्ति उसका तट है, अक्षर सीपी हैं और बुद्धि तथा हृदय रत्न हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **कन** (कण्ठ) तथा **कटी** के विशेषण का उल्लेख हो अथवा **कंठमाला** या **रुद्राक्ष** आदि गले के आभूषणो की चर्चा हो तो उसके द्वारा सालिक (साधक) के ईश्वर के आदेशों का सम्मान करने की अथवा पालन करने की ओर संकेत होता है और कभी संकेत होता है सम्मानित फ़क़ीरों के आदर सत्कार की ओर, जो अपने उद्योग के कारण धनी होते हैं और कभी-कभी बड़ों के चुप रहने का तात्पर्य अल्लाह के जलाल (ऐश्वर्य) से होता है।

छंद

बंदे ने ईश्वर की आकांक्षा की अतः जब ईश्वर दृष्टिगत हुआ तो वह उसके जलाल (ऐश्वर्य) से चुप हो गया। भय के कारण नहीं अपितु उसके प्रभाव से तथा जमाल (माधुर्य) की रक्षा हेतु।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'कर' तथा इससे संबंधित शब्दों का उल्लेख हो अथवा उसके आभूषणों की चर्चा हो, तो इसका संकेत ईश्वर की आकांक्षा करनेवालों के प्रति उसकी 'दृढ रस्सी' से संबंध रखने की ओर होता है। कभी गैब (परोक्ष) के हाथों की ओर संकेत होता है। जिसकी ओर इस आयत में संकेत है—"बल्कि उसके दोनों हाथ फैले हुए हैं"।

यदि अंगुरी का उल्लेख हो तो ईश्वर की अंगुलियों की ओर संकेत किया जाता है। यदि तटस्थ (?) का उल्लेख हो तो उन अंगुलियों के प्रभाव की ओर संकेत होता है जैसा कि हदीस में आया है "अत. मैंने उसकी अंगुलियों की ठंडक का अपने हृदय में अनुभव किया और मैंने सर्व प्रथम तथा अंतिम विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लिया।"

यदि हिंदवी वाक्यों में उर तथा छाती का उल्लेख हो तो वुजूदे हकीकी (वास्तविक अस्तित्व) की ओर संकेत होता है जो इतना प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट है कि वह शून्य ज्ञात होता है और सर्व प्रथम इसी पर दृष्टि पड़ती है।

यदि छतिया मोटी अथवा कठिन का उल्लेख हो तो मनुष्य के अनजाने पापों एवं अज़ली (अनादि काल के) आदेशों की कठोरता की ओर संकेत होता है, जो बंदों की आशाओं के शीशे को चकनाचूर कर देते हैं।

छंद

पराजय स्वीकार कर लेने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं क्योंकि शत्रु के हाथ में पत्थर है और मेरे हाथ में शीशा है।

यदि इनके आभूषणों का उल्लेख हो तो ईश्वर की कृपा तथा दान की अधिकता की ओर संकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में दो थन तथा इस प्रकार के दूसरे नामों का उल्लेख हो अथवा सिर (स्तनमुख या चूचुक) और उसकी कालिमा की चर्चा हो तो इनका तात्पर्य दो चारक रहस्यों से होता है जिनके अनावरण की शीघ्रता

में आज्ञा नहीं। एक तो कदम (दैवी अधिकार) का रहस्य, दूसरे खुदाई का रहस्य। उसकी चर्चा कठोरता तथा सख्ती से इस कारण करते हैं कि ये दोनो रहस्य बुद्धि तथा ज्ञान दोनों के लिये सूक्ष्म और कठिन हैं। कभी दो थन से 'जब्र' (विवशता) व 'कदर' (अधिकार) की ओर सकेत करते हैं जो सूरत (प्रत्यक्ष) तथा मानी (वास्तविकता) से सबधित है।

छंद

वास्तव में जब्र (विवशता) है और प्रत्यक्ष में अख्त्यार (अधिकार) है अतः मानी (वास्तविकता) को न त्याग तथा सूरत (रूप) को भी नष्ट न कर।

यदि हिंदवी में इस प्रकार के वाक्य आ जाय कि **"खेलत चीर भरक्यो, उभर गये थन हार"** तो इसका सकेत इस बात की ओर होता है कि यह दोनों रहस्य जो शरा तथा बुद्धि की चादर के नीचे लिपट जाते हैं, तो जब खुदी (अहभाव) नीचे गिरी तो वे स्वय खुल जाते हैं।

रूबाई

जब अजली (अनादि काल के) भेद अबदाल[34] का भोजन बन जाता है तो यह समस्त वार्त्ता नष्ट हो जाती है। शरा का फ़तवा[35] देने वाले का कलेजा रक्त बन जाता है, बुद्धि के काज़ी की जिह्वा गूगी हो जाती है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **हार** का उल्लेख हो तो उसके द्वारा सच्चरित्रता एव नैतिकता के गले के आभूषण की चर्चा की जाती है, जो किसी एक योग्य व्यक्ति मे एकत्र हो जाते हैं। कभी उससे बदिगी (दासता) का तौक समझा जाता है।

यदि हिंदवी वाक्यो में **पीठ** का उल्लेख हो तो इससे उस प्रभाव की ओर सकेत होता है जो अस्तित्व के सामने दृष्टिगत होता है।

छंद

जो अस्तित्व ब्रह्म के साथ स्थापित है, वह अभाव है किंतु नाम रखता है।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **कटि** तथा उसकी सूक्ष्मता के गुणों का उल्लेख हो तो बर्ज़खे कुबरा[36] की ओर सकेत होता है जो वहदत (एकेश्वरवाद) है और वह 'अहदियत' (केवल) तथा 'वाहिदियत' (एक) का मध्य है।

छंद

बुद्धिमत्ता क्या है ? जीव तथा परम प्रियतम के मध्य की मंजिल है। एक बरजख़ जो सबको एक स्थान पर एकत्र करता है। एक काल्पनिक रेखा है तथा दूरी बतानेवाली सीमा है।

कभी अभिलाषा की पूर्ति हेतु चेष्टा तथा प्रयत्न द्वारा कटिबद्ध होने एव पूर्ण व्यवस्था करने की ओर सकेत होता है। इस आयत मे भी इसी की चर्चा की गई है—"अल्लाह के मार्ग में जेहाद (निरोध) करो।"

यदि हिंदवी वाक्यो से फुफुंदी व डोरी अथवा ऐसी वार्तों का उल्लेख हो जिनकी चर्चा सभव नहीं, ता उसके द्वारा वाहदत (एकेश्वरवाद) के निश्चित रूप मे होने की ओर कि जिसे 'साद'[३७] बताया गया है, सकेत होता है। कहा गया है कि 'साद' एक रस्सी है, जिसे अल्लाह, का अर्श रोके हुए हैं कभी इसे मीम[३८] बताया जाता है और इस ओर सकेत होता है "मैं अहमद बिला मीम हूँ[३९]।"

छंद

अहमद (मुहम्मद साहब) से अहद (ईश्वर) तक एक मीम का अतर है। समस्त ससार इसी एक मीम मे डूबा हुआ है।

कभी फुफदी तथा डोरी आदि से ईश्वर की अनुकपा के प्रभाव तथा उस (कृपा) के फल के दृष्टिगत होने की ओर सकेत होता है। इनके द्वारा लोग तोबा तथा ईश्वर की ओर आकर्षित होते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में जाँघ तथा चरण एव इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इनसे सालिक (साधक) के अल्लाह की मारेफ़त (ज्ञान) के मकामात (लक्ष्य) तथा तरीकत (तस-वुफ़ का मार्ग व शरीअत की इबादतों (उपासनाओं) पर दृढ रहने की ओर सकेत किया जाता है।

यदि पैर के आभूषणों का उल्लेख हो तो सालिक (साधक) के इबादतों (उपासनाओं) पर दृढ होने की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यो में सुस्त चाल का उल्लेख हो तो इस छंद के अर्थ की ओर सकेत होता है—

छंद

उस का सुलूक (साधना) इमकान (संभावना, जगत्) से वाजिब (अनिवार्य ईश्वर) के ओर सैर तथा ऐसा कश्फ़ (दैवी प्रकाशन) समझना चाहिए जिसमे कोई हानि न हो।

यदि हिंदवी वाक्यों में **झनकार** का उल्लेख हो तो इससे तोबा[४०] करने वालों के रोदन एव दुखी लोगों विलाप और आशिकों के नारों की ओर तथा मस्तों की विनति की ओर सकेत होता है।

(छंद)

यद्यपि शेख की तस्वीह (सुमिरन) के उच्च स्वर स्वीकार कर लिये जाते हैं किंतु कारागार के द.खी लोगों के विलाप में दूसरे प्रकार के स्वीकार होने की शक्ति होती है।

यदि **अभरण** (**आभरण**) का उल्लेख हो तारीकत (तसव्वुफ का मार्ग) की पवित्रता की ओर सकेत होता है और इसे ससार, नफ़स (कसवा) तथा खल्क (भूत) से पवित्रता कही जाती है।

ससार नितात अपवित्र है। खल्क (भूत) साधारण अपवित्रता तथा नफस (वासना) विशेष अपवित्रता हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **सिंगार** (**शृंगार**) की चर्चा हो तो उससे उस सज्जा की ओर सकेत होता है कि कुदरत के शृंगार करनेवाले हाथ ने दैवी रगाई के रग से उसको सजाया है और वह हज़रत महम्मद मुस्तफ़ा की सुदरता थी। "नि.सदेह ईश्वर माधुर्य है और मधुरता से प्रेम रखता है।" सभव है कि मोरफ़त (ज्ञान) का सजावट के कुछ मकामों (लक्ष्यो) की ओर सकेत हो अर्थात् तोबा इसतेगफ़ार[४१], ज़ुहद[४२], तवक्कुल[४३], तसलीम[४४], तकवा[४५], रिज़ा[४६] आदि।

यदि हिंदवी वाक्यों मे **मोती** तथा **मुक्ताहल** (मुक्ताफल, मुकुताहल) और इसी प्रकार के दूसरे के दूसरे नामों का उल्लेख हो तो इससे नबियों तथा[४७] वलियों[४८] के वाक्यो की ओर सकेत होता है जिनमें शिक्षा, उपदेश, एवं मार्ग-प्रदर्शन होता है। यदि किसीके गुणो में **मोती** प्रदान करने का उल्लेख हो तो नबियो के उन ज्ञानो के दान करने की ओर सकेत करते हैं जो आलिमो को उत्तराधिकार मे प्राप्त होते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में यह दुहरा अथवा इसीके समान दुहरा आए जो गवार्ट राग मे है:—

> साजन आवत देखि कै (हे) सखि तोरो हार।
> लोग जानि मुतिया चुने हौं नय करौं जुहार॥

इससे यह सकेत होगा कि भलाई के मोतियों का हार जो दृढता के सूत्र में गुथा है तथा कर्म के मोतियों का गर्दनबद जो संकल्प की लड़ी में गु था है उसे परम प्रियतम के दर्शन के सन्मुख एवं इच्छित मुकासफ़े (दैवी प्रकाशन) हेतु बनावट एव बहाना करके तोड डालूं, जिससे इस पद्य के भाव अनुकूल हो सके।

पद्य

यदि मस्ती में मैंने तेरा हार तोड़ डाला तो इससे सौ गुना मोल लेकर फिर भेज दूगा। नित्य दीनता का शीश तोबा तथा इसतेग़फ़ार द्वारा बनवाता रहूगा। तथा उन बिखरे हुए मोतियों को क्षमा याचना की अंगुलियों से चुनू गा कि 'हे परमेश्वर हमने अपने न.फ्स (वासना) पर अत्याचार किया है जिससे लोग यह समझ जाय कि यह समस्त दीनता दृढता के बिखरे हुए मोतियो को एकत्र करने की क्षमायाचना के लिये हैं और आगे की बात को न सोचें कि यह बदमस्तिया तथा वेढंगापन लज्जा एव हार्दिक कामना परमेश्वर की निकटता तथा उच्च श्रेणी प्राप्त करने का कारण बन जायगी। वह (ईश्वर) टूटे हुए दिलों के पास रहता है।

"नग्र करौं जुहार" का अर्थ परम प्रियतम के सम्मुख झुकना, नम्र एव लज्जित होना है, कारण कि प्रत्येक लज्जा में एक निकटता एव करामात (सतों का चमत्कार) है, तथा प्रत्येक अपमान मे समान और दृढता प्राप्त होती है।

छद

मे तेरे सुदर मुख के समक्ष मोतियों की लड़ी तोड़ डालूं और मोती चुनने के लिये सिर झुकाऊ और तेरे चरणों का चुंबन कर लूँ।

दुःख तथा क्लेश, पापो के लिये पवित्रता का साधन हो जाते हैं। ईश्वर दु.खी हृदय को अपना मित्र रखता है, अत. जुहार वही निकटता तथा श्रेष्ठता है जो अपमान एव लज्जा का फल है।

कुछ लोग यह कहते हैं "मुस्काय तोरो (तोड़ों) हार" तो इसका सकेत शौक दिलाने की मजिल के अधिक निकट होने (की ओर होता है) क्योंकि इस वाक्य में विचित्र भेद तथा अनूठे रहस्य हैं जिन्हें जौक४९ रखने वालों के अतिरिक्त कोई नहीं समझ सकता। व्याख्या करने वाले के छद*

* मीर अब्दुल वाहिद के छद।

छद

उसके मुखपर जो उपवन के समान है, मेरे लिये मद मुस्कान है। यह मद मुस्कान स्वाभाविक है कृत्रिम नहीं, किंतु इस मद मुस्कान का उल्लेख नहीं हो सकता।

रहस्य के ससार में मेरी हसी से उपवन खिल जाता है क्योंकि आध्यात्मिक रहस्य का उल्लेख मजाजी ज़बान द्वारा नहीं हो सकता।

प्रेम के मदाधो को ज्ञात होता है कि प्रियतम के आगमन के समय उसी को आज्ञा की शाखा, सिजदे तथा निकटता के बहाने से मद मुस्तकान के साथ तोड़ डालना कितना आनद दायक होता है।

छद

जो अर्थ जोक द्वारा उत्पन्न होते हैं, उन्हें शब्द किस प्रकार पा सकते हैं?

अब यह भी समझना चाहिए कि उपर्युक्त शब्दों तथा अन्य बहुत से शब्दों से लेख के अनुसार अन्य अर्थ भी समझे जा सकते हैं क्योंकि प्रत्येक वाक्य के अनेक अर्थ होते हैं तथा अनेक सकेत एव असख्य रूप हो सकते हैं। विश्वास रखनेवाले नेत्रों तथा शिक्षा ग्रहण करनेवाली आखों से ये रहस्य छिपे नहीं रहते।

छंद

शुभ समाचारों वाला वही व्यक्ति है जो सकेतों को जानता है। गूढ बातें बहुत-सी हैं किंतु रहस्य का ज्ञान रखने वाला कहा है।

किंतु अर्थ का प्रयोग श्रेणी के अनुसार करना चाहिए क्योंकि कही हुई बातें कर्म की कुजिया हैं तथा अहवाल (आध्यात्मिक दशाओं) का दीपक।

पद्य

जो वस्तु इस लोक मे दृष्टिगत होती है वह परलोक के सूर्य के प्रतिबिंब के समान है।

ससार केशपाश, तिल, रोम तथा भृकुटि के समान है। इनमे से प्रत्येक वस्तु अपने स्थान पर सुदर है। जब लोगों ने बुद्धि के ससार को देखा तो उस स्थान मे शब्द नकल कर लिए। बुद्धिमान ने जब शब्द के लिये अर्थ नकल किए तो उसने अनुपात को ध्यान मे रखा, किंतु पूरी-पूरी उपमा सभव नहीं। उसकी खोज मे चुप रहना अच्छा है।

किसी विशेष कारण से उपमा का प्रयोग करो तथा अन्य कारणों से पृथक् हो जाओ।

यदि हिंदवी लेखो मे वस्त्रों का उल्लेख हो उदाहरणार्थ चौरी, चोला, सारी, लहगा, पग, पगा तथा इसी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हो तो इससे मनुष्य के चरित्र के वस्त्रों की ओर क्रमशः सकेत होता है, कारण कि मनुष्य अपने अतरग तथा वहिरग से मिलकर बनता है। उनमें से प्रत्येक का एक विशेष वस्त्र होता है जैसे मनुष्य का वहिरग उसका शरीर होता है और उसका वस्त्र कपड़ा है, जिसे शरीअत में उचित वताया गया है मनुष्य का अतरंग, क़ल्ब (हृदय) सिर (अत.करण) रूह (आत्मा) तथा ख़फी (अन्तराल-स्थित) है। नफ्स का वस्त्र शरीअत है, कल्ब का वस्त्र तरीकत है, सिर का वस्त्र हकीकत है, रुह का वस्त्र ईबूदियत (दासता) है और ख़फ़ी का वस्त्र महबूबियत (प्रेम) है। रिसाल-ए-मक्किया ५० में इसी प्रकार लिखा है। कभी इनका अभिप्राय उन वस्त्रों से होता है जिनकी चर्चा रसूल-ल्लाह ने की है और जैसा कि शेख़ अबुल हसन अली शाज़िली ने कहा है, "मैने रसूलल्लाह को स्वप्न में देखा। उन्होंने मुझसे कहा, 'हे अली अपने वस्त्र को मैल से, ख़ुदा की सहायता से, प्रत्येक समय साफ़ रक्खो।' मैने कहा 'हे रसूल मेरे वस्त्र कौन से हैं।' उत्तर मिला "खुदा ने तुझे पाच खिलअत पहनाये है। प्रेम का खिलअत, मारेफ़त का खिलअत, ईमान (विश्वास) का खिलअत तौहीद का खिलअत तथा इस्लाम का खिलअत।' शेख ने कहा तब मुझे अल्लाह के इन शब्दो का अर्थ ज्ञात हुआ 'तू अपने वस्त्रो को पाक कर।'

छंद

तरीक्त वालो का अभिप्राय वाह्य वस्त्र नहीं होते। सुल्तान की सेवा के लिये कटिबद्ध हो और सूफ़ी बन जा।

कभी वस्त्र से मजाज़ी वुजूद (अस्तित्व) की ओर सकेत करते हैं जो हकीकत का वस्त्र है।

यदि मेरा अस्तित्व पूर्णतया 'वह' बन गया है तो मै उसका वस्त्र हूँ।

यदि उस वस्त्र को किसी रग से रंगने का उल्लेख हो जैसे "राता चुन सिर तक चुनरी" या इसी प्रकार के शब्दो का उल्लेख हो तो इसका यह अर्थ हुआ कि वुजूद (अस्तित्व) के मजाजी वस्त्र ने प्रेम का रंग स्वीकार कर लिया है। कभी इस बात की ओर सकेत होता कि सालिक (साधक)

धर्म तथा इस्लाम के कार्य में सावधान रहे और अपनी यात्रा मे स्वतन्त्रता तथा स्वतन्त्रता की प्रेरणा से बचता रहे।

यदि हिन्दवी वाक्यों में **आँचर** अथवा **पल्लू** का उल्लेख हो तो इससे आशिक के अस्तित्व के गुणों की ओर सकेत होता है और कभी कभी इससे परम प्रियतम के गुणो के नाम भी समझे जाते हैं।

यदि हिन्दवी लेख में **मृगाजिन (मृग+अजिन) बाँकी** का उल्लेख हो तो इससे पाप से मिश्रित खिर्के (चीवर) की ओर सकेत किया जाता है कारण कि वही हिजाब (आवरण) का अस्तित्व है। कभी कभी इससे वुजूदे मुतलक (परमेश्वर) के नूर (ज्योति) के अनुचित वस्त्रों में प्रकट होने की ओर सकेत करते हैं।

पद्य

कामाग्नि मनुष्य का हृदय नहीं लुभा सकती कारण कि हक (सत्य, ईश्वर) कभी कभी बातिल (असत्य) की ज़बान से प्रकट हुआ करता है।

सत्य को सत्य ही के वस्त्र में देखो और सत्य को पहचानो। असत्य के वस्त्र में सत्य शैतानी कार्य है।

यदि हिन्दवी रचना मे **पुष्टि बाक** (वाक्य) तथा इसी प्रकार के शब्द बोले जाय तो इससे विचारों की आकुलता तथा मस्तिष्क की उद्विग्नता की ओर सकेत होता है और वह बात प्रेम अथवा मुराकबे (ध्यान) एव रेआजत (तपस्या) की अधिकता से उत्पन्न होती है।

तेरा प्रेम हमारे मस्तिष्क में घूम रहा है। तू ही देख कि आकुल मस्तिष्क में क्या क्या घूम रहा है?

छंद

हम आवारा हैं, सिर फिरे तथा मादक प्रेमी एव इधर उधर दृष्टि डालने वाले हैं। इस नगर मे कौन ऐसा है जो हमारे समान नहीं।

यदि हिन्दवी वाक्यो मे **अँगिया** तथा **कचुकी** एव इसी के समान शब्दो का प्रयोग हो तो इनमे अहवाल (आध्यात्मिक दशाओं) की ओर सकेत होता है जो कि दास तथा स्वामी (ईश्वर) के मध्य मे उत्पन्न होते हैं और दूसरो की दृष्टि से छिपे रहते हैं और कभी कभी तरीक्त के व्यवहार की ओर सकेत होता है।

यदि हिन्दवी रचना मे कटाओ की अंगियत तथा इस प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इससे मारेफ़त (ज्ञान) के मुकामात (लक्ष्य) की ओर सकेत होता है, यद्यपि इनसे तौहीद (एकेश्वरवाद) समझी जाती है। तौहीद उन वस्तुओ को छोड़ देने का नाम है, जो बढा ली गई हैं किंतु इन पर शरई प्रतिबंध के बेल-बूटे बने हैं।

छद

वही पूर्ण मनुष्य है जो सरदारी मे भी दासता का कार्य करे।

यदि हिंदवी रचनाओं मे सौंध भरा अँगिया का उल्लेख हो तो इस छद के अर्थ की ओर सकेत होता है।

छद

मैंने अपने वुजूद (अस्तित्व) के साथ प्रियतम के रूप को एक कर लिया है, तो फिर मैं नित्य अपने आपको किस कारण आलिंगन न करूँ।

यदि हिंदवी रचना मे 'अँगिया फाटी जोबन भार' कहे तो इससे बिना किसी क्रम के प्रकट होने वाले उन वाक्यों की ओर सकेत होता है जो हाल (मूर्छा) के प्रबल और क्षणिक वेग में अनायास उत्पन्न हो जाते हैं।

छंद

यह उचित नहीं कि रहस्य आवरण के बाहर आ जाय अन्यथा मादक प्रेमियो की सभा में कोई ऐसा समाचार नहीं जो वर्तमान न हो।

और यह भी समझ लो कि मारेफ़त (ज्ञान) प्राप्त किए हुए लोग, अन्य लोगो को विवश समझते हैं और कहते हैं।

छद

ऐमन की घाटी मे अकस्मात् एक वृक्ष कहता है, "मै ही अल्लाह हूँ।"

एक वृक्ष से "मै अल्लाह हूँ" की आवाज यदि उचित समझी जा सकती है तो फिर यह आवाज किसी अच्छे व्यक्ति[५१] द्वारा किस प्रकार अनुचित समझी जा सकती है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे तर्नी एवं वंद का उल्लेख हो तो इससे मनुष्य के मनुष्यता के गुणों की तथा मनुष्य के चरित्र के गुणों की ओर संकेत होता है कारण कि मनुष्य का अस्तित्व इन्हीं गुणों से संबधित है। इससे कभी शरीअत के प्रतिबंध की ओर संकेत होता है क्योंकि मनुष्य की बुद्धि तथा उसका नफ्स (वासना) इन्हीं प्रतिबंधों से घिरा है।

यदि हिंदवी रचना में कहें **"काढ कटारिहिं कब तन बौरी मूर्ख गवार"** तो इसका तात्पर्य यह होता है कि काटने वाली तलवार को शरीअत के सदेशों के मियान से निकाल, और इस वाक्य के अनुसार कि "अपने नफ्स (वासना) को मुजाहदों (दमन) तथा उसके विरोध की तलवार से मार डाल", मुजाहदे (दमन) की तलवार को नफ्स (वासना) के विरोध के मिआन से खींच ले तथा मनुष्यता के गुणों को एक ही बार काट डाल ।

छद

यदि तू सर्वदा प्रियतम का सभोग चाहता है तो अपने आप से तथा समस्त ससार से पूर्णतया पृथक् हो जा ।

चोला और ह्वै भौतिक बाध निवारि ।

इस लिये कि तेरे पास इस वुजूद (अस्तित्व) तथा इन गुणों से अधिक उत्कृष्ट वुजूद एव गुण उत्पन्न होने चाहिए, किंतु महबूब (प्रियतम) का सभोग इसके अतिरिक्त किसी अन्य उपाय से सभव नहीं, वह इस अवसर के अतिरिक्त, जब कि मनुष्यता वर्तमान है, पुनः प्राप्त न होगा ।

छद

इस समय उपचार ढू ढ ले, जब कि तेरा मसीहा (उपचारक) भूमि पर है । जब वह मसीहा आकाश पर चला गया तो उपचार हाथ से जाता रहेगा ।

यदि हिंदवी वाक्यों में **टूटे वंद** अथवा **छूटे वंद** अथवा **तरके** (तडके) **वंद** एव इसी प्रकार के शब्दो का प्रयोग हो तो इससे तौहीद (एकेश्वरवाद) वालो की बुद्धि एव शरा के प्रतिबध का विचार न रखने से मुक्ति की ओर सकेत होता है । तौहीद (एकेश्वरवाद) कर्म की देख-भाल छोड़ देने का नाम है न कि कर्म को छोड़ देने का । यह जो लोगो ने कहा है, कि तौहीद बटी हुई वस्तुओ को छोड़ देने का नाम है, इसका अर्थ यही है कि "तौहीद बढी हुई वस्तुओं के छोड़ने को कहते हैं न कि कर्म को छोड़ने को ।" यह काय बड़ा ही कठिन है । यह समझ लो कि इन दोनों मकामो (लक्ष्य) पर साथ ही साथ ठहरे रहना असभव है । मारेफ़त (ज्ञान) वाले विलायते इलाही (सत लोक) के बल से इन दोनो स्थानों पर खडे रह सकते हैं और वह बुद्धि का मैदान नहीं है ।

छंद .

इस पथ पर चलना बुद्धि तथा सावधानी के लिये सभव नहीं। हृदय का रहस्य मंजिल का पत्थर नहीं है।

इसीलिये कहा गया है कि "कटाचो की चोली दलमली होय।" इसका अर्थ यह है कि तरीक़त के मकामात (लक्ष्य) जो हकीकत की चित्रशाला थे, वे आपस मे उलझ गए तथा मारेफ़त के अहवाल (आध्यात्मिक दशाएँ) जो आरिफ़ (ज्ञानी) के होने तथा न होने पर अवलम्बित थे, एकत्र हो गए। रञ्ज मे राई न जाय अर्थात् जो सावधान व्यक्ति यह चाहता है कि बुद्धि के द्वारा इन दोनो मकामात (लक्ष्य) पर अधिकार पा ले तो उसने दोनो मकामो का ध्यान रखने के नियम को न जाना और वह दोनो श्रेणियों की रक्षा के मकाम पर न खड़ा हो सका।

रुबाई

यह तरीक़त का मार्ग बुद्धि के पैरो से तै नहीं होता। प्रेम के पैरो की धूल बुद्धि से बढ कर है। वह रहस्य, जो फरिश्तो को भी ज्ञात नहीं है। बुद्धि तू तो मूर्ख है, वहा बुद्धि (तू) किस प्रकार जा सकती है।

यदि हिंदवी वाक्यों में सुहागिन (सुहागिनि) का उल्लेख हो तो उससे इनसाने कामिल (महापुरुष) तथा मारेफ़त (ज्ञान वालो की ओर सकेत करते हैं, क्योंकि सृष्टि की रचना करने वाले ईश्वर ने जो जगत् उत्पन्न किया है, उसका लक्ष्य इन्ही लोगो का प्रेम है।

यदि दुहागिन (दुहागिनि) का उल्लेख हो तो उसके द्वारा उस समूह की ओर सकेत होता है जिन के विषय में यह कहा जा सकता है 'यह सब लोग पशुओ के समान हैं'। कभी उन लोगो की ओर संकेत होता है, जिन्हे खुदा उन्हें चाहता है, वे खुदा को चाहते हैं' की सभा में कोई समान नहीं। कभी उस सालिक (साधक) को ओर संकेत होता है जो संभोग की मंजिल तक नहीं पहुँचा है।

यदि हिंदवी वाक्यों में बालापन अथवा नैहर का उल्लेख हो तो बालापन द्वारा विचारों की बाल्यावस्था को ओर सकेत होता है क्योंकि मुरीद (चेले) पीरों (गुरू) के रूहानी (आध्यात्मिक) पुत्र होते हैं।

छद

मुरीद (चेले) इस मार्ग में बालको से भी कम हैं और मशाएख (गुरु) दृढ दीवार के समान हैं। उस छोटे बालक से चलना सीख कि उसने किस प्रकार दीवार का सहारा लिया।

नैहर से आलमे नासूत[५२] (नरलोक) में फसे हुए लोगो की ओर सकेत करते हैं और यही लोक मनुष्य के तत्व के उत्पन्न होने का स्थान है। जो व्यक्ति दो बार पैदा न हो वह आकाश के राज्य मे प्रविष्ट नहीं हो सकता। पहला जन्म तो सब लोगो को ज्ञात है और दूसरा जन्म चित्त की दया से उत्पन्न हुआ कहा जाता है। चित्त माताओ के समान है।

छद

तेरे भौतिक तत्त्व सबसे निम्न श्रेणी की मातायें हैं। तू पुत्र है और तेरे पिता बड़ी उच्च श्रेणी (उलवी) के पिता हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **तरुनापन** का प्रयोग हो तो उससे मारेफ़त तथा प्रेम की युवावस्था और तरीकत एव हकीकत के मकामों पर पहुँचने की ओर सकेत होता है।

छंद

जिस स्थान पर भी प्रेम अपना सिर उठाता है, सौ वर्ष के वृद्ध को भी युवक बना देता है।

उसकी वास्तविकता अस्तित्व के अंधेरे ग्राम से निकलना है। "हे हमारा पालन करने वाले, हमे इस ग्राम से निकाल, जिसके निवासी अत्याचारी हैं।"

छद

दूध पीता शिशु अपनी माता के पास झूले मे बदी रहता है।

जब वह वयस्क तथा यात्रा के योग्य बन जाता है तो यदि वह पुरुष होता है तो अपने पिता के साथ हो जाता है। तू भी हे पिता के प्राण, पिता के साथ हो जा। साथी बाहर निकल गए, तू भी बाहर निकल जा।

यदि हिंदवी वाक्यो मे **ससुराल** का उल्लेख हो तो उससे मारेफ़त वाले लोगों के उस स्थान की ओर सकेत होता है जो आकाश का राज्य है।

छंद

हम आकाश के लिए गर्व की वस्तु थे तथा फ़रिश्तों के मित्र थे। हम पुनः इसी स्थान को जाते हैं। ऐश्वर्य का मकाम (लक्ष्य) ही हमारी मंजिल है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **बूढापन** शब्द आए तो उससे वुजूद (शारीरिक अस्तित्व) के गुणों के अपमानित होने की ओर संकेत होता है। अस्तित्व के गुण प्रेम का राज्य नहीं प्राप्त कर पाते। 'निःसंदेह बादशाह जब ग्राम में प्रविष्ट होते हैं तो उसको छिन्न-भिन्न कर देते हैं तथा उसके सम्मानित व्यक्तियों को अपमानित कर देते हैं', और कभी इससे अवस्था एवं ज्ञान के पतित बन जाने की ओर संकेत होता है और यह बात मारेफ़त के शिखर पर उत्पन्न होती है जैसा कि कहा गया है कि 'अंतिम अवस्था प्रारंभ की ओर पलटने का नाम है और तुम में ऐसे भी लोग हैं जो अवस्था के सबसे पतित भाग की ओर लौटते हैं जिससे वे ज्ञान के उपरांत किसी वस्तु को भी न जान सकें।' वास्तव में ऐसी वृद्धावस्था मारफ़त के संसार में युवावस्था है और युवावस्था वृद्धावस्था के समान है।

समझना चाहिए कि मनुष्यता की अवस्था और है तथा मारेफ़त की अवस्था अन्य है। जिस प्रकार मनुष्य की अवस्था में बाल्यावस्था युवावस्था तथा वृद्धावस्था है उसी प्रकार मारेफ़त की अवस्था में बाल्यावस्था युवावस्था एवं वृद्धावस्था होती हैं। एक दिन ऐसा आता है जब कि मनुष्यता की अवस्था समाप्त हो जाती है। 'प्रत्येक प्राणी के लिये मृत्यु का आस्वादन आवश्यक है।' इसमें इसी मृत्यु की ओर संकेत होता है, किंतु जो मारेफ़त की अवस्था में अन्त को पहुँच जाते हैं उनके लिये इस आयत में संकेत है—'हम उसे पवित्रता की अवस्था में जीवित रखेंगे।'

छंद

मैं तेरे वियोग में वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया तो तेरे होठों ने कहा कि 'चिंता न कर। हम एक चुम्बन देकर हजार वर्ष के वृद्ध को युवक बना देते हैं।'

यदि हिंदवी वाक्यों में व्याह आए तो उससे निकाहे हकीकी की ओर संकेत होता है और यह निकाहे हकीकी इस प्रकार है कि मुरीद (चेला) तालब (अभिलाषी) एवं आशिक पीर व मुर्शिद (गुरु) के अधिकारों के समक्ष

शीश नवा देने के कारण अशक्त तथा पराधीन हो जाता है तथा प्रियतम के समस्त प्रेम के बंधनों के कारण विवश हो जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि बंदे (दास) ईश्वर के ऐश्वर्य के अधिकार के समस्त बंदिगी (दासता) के निकाह के बंधनों में विवश हैं। व्याह का अभिप्राय 'रुहानी निकाह' है और वह इस प्रकार कि प्रथम कैद जब बंदा (दास) वुजूद के जाल में बंधा, "रूहे आजम[५३]" है और परमेश्वर के शुहूद (साक्षात्कार) से अत्यधिक निकट है। इसी को ईश्वर ने अपने आप से संबंधित किया है और "मेरी रूह में से तथा हमारी रूह में से" जैसे शब्दों से संबोधित किया है। आदमे कबीर, प्रथम खलीफा[५४], दैवी व्याख्या करनेवाला, वुजूद की कुंजी तथा ईजाद का कलम एवं "रूहों का स्वर्ग[५५]" सब उसी के गुण बताए गए हैं। अनादि अभिलाषाओं ने उसे (मनुष्य को) संसार में अपना उत्तराधिकारी होने से संबंधित किया है* और दैवी रहस्य की कुंजियाँ उनको सौंपी हैं और इसमें से व्यय करने की भी उसे आज्ञा दी है। अपने समस्त नामों तथा अपने समस्त गुणों का उसे खिलअत पहनाया और उसकी दृष्टि में दैवी चमत्कार प्रदान किए। एक तो अपने जलाल (ऐश्वर्य) के प्रदर्शन के लिये और दूसरे दैवी युक्ति के जमाल (माधुर्य) को देखने के लिये। वह पहली दृष्टि के अनुसार आगे बढ़नेवाला है और दूसरी दृष्टि के अनुसार पीछे हटनेवाला है जैसा कि हदीस में उल्लेख है "फिर ईश्वर ने उससे कहा कि आगे बढ़, तो वह आगे बढ़ा और फिर उसने कहा कि पीछे हट तो वह पीछे हट गया"। पहली दृष्टि का परिणाम ईश्वर का प्रेम है तथा दूसरी दृष्टि का परिणाम नफ्से कुल्ली है। और नफ्से कामिल उस श्रेणी का नाम है जो रूहे आजम से उत्पन्न होती है। जो लाभ भी रूहे आज़म, ईश्वर द्वारा प्राप्त कर लेती है नफ्से कुल्ली भी उसी के योग्य हो जाती है। रूहे आजम तथा नफ्से कामिल में प्रभावित करने एवं प्रभाव स्वीकार करने के कारण एवं बल तथा निर्बलता के कारण स्त्री तथा पुरुष का संबंध स्थापित हो जाता है और परस्पर प्रेम प्रमाणित हो जाता है। इन्हींके मिलने के कारण सृष्टि में अन्य वस्तुएँ उत्पन्न हुईं तथा भाग्य की धात्री के हाथ तथा गैब (परोक्ष) की दया से जुहूर (साक्षात्कार) के लोक में आ गईं। उस समय रूहे इज़ाफ़ी (बढ़ी हुई रूह) मिट्टी के बने हुए आदम के वुजूद (अस्तित्व) के दर्पण में प्रतिबिंबित हुई। ईश्वर के समस्त नाम तथा गुण उसमें चमकने लगे तथा "हमने आदम को समस्त नाम सिखाए" के चमत्कार की पताका गाड़ दी गई

* अर्थात् उत्तराधिकारी बनाया है।

और मै पृथ्वी पर उत्तराधिकारी बन रहा हू" की पदवी प्राप्त हो गई। खिलाफ़त (खलीफ़ा बनाए जाने) के उस आज्ञापत्र पर "अल्लाह ने आदम को अपनी सूरत पर पैदा किया" की मुहर लग गई। अतः जिस प्रकार ससार में आदम का अस्तित्व रूहे आजम का प्रमाण है तथा प्रकट करता है उसी प्रकार हव्वा का अस्तित्व भी संसार मे सूरते मुकम्मल (पूर्णरूप) का प्रमाण है एव स्पष्ट करता है। हव्वा के आदम से उत्पन्न होने का उदाहरण नफ्स कुल्ली के रूहे आजम से पैदा होने का उदाहरण है। नफ़्स तथा रूह के परस्पर जोडा बनने का तथा इनमें पुरुष एवं स्त्री के सबंध स्थापित होने का यही प्रभाव था जो आदम तथा हव्वा के रूप में प्रकट हुआ। जिस प्रकार रूह तथा नफ्स के द्वारा समस्त वस्तुएँ उत्पन्न हुई उसी प्रकार वे सतानें आदम की पीठ मे थीं और वे हव्वा तथा आदम के जोडा मिलने के कारण हुई। अत. आदम तथा हव्वा का अस्तित्व नफ़्स एव रूह से मिलकर है। फलतः हव्वा तथा आदम के समिलन से एक मिलाप तैयार हुआ और नफ्स तथा रूह का एक अपूर्ण जोड़ा बंध गया और दोनो से उत्पत्तिया हुई। अत मानव जाति के पुरुषों की उत्पत्ति ने रूहे कामिल के रूप से लाभ प्राप्त किया और इसमें कुछ नफ़्स के भी गुण मिले रहे तथा स्त्रियों की उत्पत्ति नफ़्से कुल्ली के रूप से हुई और उसमें कुछ रूह के गुण भी मिल गए।

छद

धर्म में रूहानी निकाह हुआ तथा नफ़्से कुल्ली ने दुनिया महर[५७] मे प्रदान की।

यदि हिंदवी वाक्यों से मागल (मागल्य) तथा सोहला शब्द आएं तो इससे आशिक़ तथा माशूक़ की सहमति एवं प्रसन्नता की ओर संकेत होता है जब कि दोनो में एक दूसरे से प्रेम हो जाय। "अल्लाह उनसे संतुष्ट रहे और वे अल्लाह से सतुष्ट रहें," इसी मकाम (लक्ष्य) का नाम है? कभी इससे संभोग अथवा सभोग की आशा की प्रसन्नता एव एक दूसरे के दर्शन की अभिलाषा की ओर सकेत होता है—"जान लो कि सदाचारियो की मुझसे मिलने की बहुत समय से अभिलाषा है। मै भी उन लोगो से मिलने का बडा इच्छुक हू।" इस हदीस मे यही उल्लेख है। कभी इन शब्दो से उस हर्ष की ओर सकेत होता है जो आशिक को उस समय प्राप्त होता है जब माशूक उसको अशिष्टता, त्रुटियो एव भूलों के होते हुए भी उसे स्वीकार कर लेता है। "तुम

मेरे लिये हो, चाहे स्वीकार करो हो अथवा मना करो और मै तुम्हारे लिये हूँ, चाहे तुम्हे अभिलाषा हो अथवा अनभिलाष।"—में इसी घटना का उल्लेख है। कभी इन शब्दों से आनद के अनुभवों की ओर एव हर्ष के मकामात (लक्ष्य) की ओर सकेत होता है, जैसा कि कहा गया है,

छद

सादी तेरे प्रेम के मार्ग में हढ निकला। लोग कौन हैं और कैसे हैं तथा क्या हैं ?

यदि हिंदवी वाक्यों में सौत का उल्लेख हो तो इस बात की ओर सकेत होता है कि परलोक इस लोक की सौत है और यह लोक परलोक की सौत है। जब तू एक को प्रसन्न करेगा तो दूसरी भाग जायगी और यह दोनो एक स्थान पर कदापि एकत्र नहीं हो सकतीं[५८]। कभी मलकूत वालों की ओर भी सकेत होता है और इसी शब्द से कभी एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य से सबध भी समझा जाता है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे मान या मटकनि की चर्चा हो तो इससे बदे (दास) के खुदा की ओर से फिर जाने एव अल्लाह के जिक्र से असावधान हो जाने की ओर सकेत होता है और मानमती (मानवती) वह है जो जिक्र[५९] तथा इबादत से फिर जाय और मारिफत तथा मुहब्बत से असावधान हो जाय।' अल्लाह के कहा है 'जो मेरे जिक्र से मुँह फेर लेगा उसकी जीविका मे कमी हो जाएगी और वह खाली हाथ हो जाएगा और हम उसे कयामत के दिन अधा जमा करेंगे'। अर्थात् जो कोई मेरी स्मृति से मुँह फेर लेगा, उसके लिये इस लोक तथा परलोक मे जीविका बड़ी दुष्कर हो जायगी। ऐसे मुह फेरने वालो को हम कयामत मे अधा बनाए रखेंगे और वह नरक तथा नाना प्रकार के कष्टों के अतिरिक्त कुछ न देख सकेगा। यह तो उसकी दशा है जो केवल जिक्र से मुँह फेर ले, तो उसकी क्या दशा होगी जो जिक्र के स्वामी (अल्लाह) से मुँह फेर ले।'

यदि हिंदवी वाक्यो मे 'जब जब मान दहन करे तब तब अधिक सुहाग' एव इसी प्रकार की चर्चा हो तो इस प्रकार की रचनाएँ उस समूह के लिए स्वीकार की गई हैं जिनके लिये कहा गया है, 'मे पीठ फेरने वालों का अभिलाषी हूँ।' इसका अभिप्राय उन लोगो की सफलता है, क्योंकि यह बात कि 'जब भी वे किसी पाप का विचार करते हैं मे उनके हेतु अधिक दया करता हूँ। यही उन लोगो की सफलता का चिह्न है। इस

प्रकार की रचनाओं का एक अन्य अर्थ भी है जो इससे भी अधिक गूढ़ है और उसे अधिक स्पष्ट रूप से कहना सम्भव नहीं किंतु इस छंद में इसकी ओर संकेत है।

छंद

जिस माशूक ने नाज़ से चुंबन न दिया, उसने मुझसे चुंबन माँगा और मैंने न दिया।

यदि हिंदवी वाक्यों में सखी का उल्लेख हो तो उससे इस बात की ओर संकेत होता है कि परस्पर खुदा के लिये तथा खुदा से संबंधित मित्रता रखें और कभी ऐसे मित्रों की ओर संकेत किया जाता है जो एक ही मत तथा एक ही वंश से सहमत हों। यदि एक सखी को मध्यस्थ बनाकर किसी को सन्मार्ग पर लाने के लिये भेजें कि वह उस मानमती को प्रियतम को मिलन की ओर बुलाए और उसे सजाए और इस प्रकार की रचनायें मध्य में रखे और कहे।

'उठ चल वेग करन लाई व्यासही चतुरदस विद्या निधान' (१)

और कहे,

"तुम मान छाड़ दई कत हेत हे मानमती'

तथा इसी प्रकार की अन्य कोई रचना हो तो इससे सन्मार्ग पर लाने वाला एवं बुलाने वाला समझा जाता है तथा रसूलल्लाह (मुहम्मद साहब) तथा उनके अनुयायी जो तत्त्वयधी खिलअत पहने हैं, समझे जाते हैं। "हम ने उनमें एक ऐसे समूह को जन्म दिया जो हमारे आदेश की शिक्षा देते हैं।" इसे हिंदवी में दूती कहते हैं।

मानमती से वादियों, असावधान व्यक्तियों तथा जिक्र से मुंह फेरने वालों की ओर संकेत होता है जिन्हें रसूलल्लाह (मुहम्मद साहब) तथा उनके अनुयायी उपदेश द्वारा मारिफ़त (ज्ञान) एवं मुहब्बत की ओर बुलाते हैं और आलस्य तथा प्रमाद से मुक्ति दिलाते हैं और सफलता एवं मुक्ति का मार्ग दर्शाते हैं और अंत में परदे के बाहर निकाल लेते हैं और ये परदे (रूहानी) श्रेणी के अनुसार कम तथा अधिक होते हैं। नफ़्स (वासना) के परदे काम भोग तथा भक्षण हैं। हृदय का परदा ईश्वर के अतिरिक्त दूसरे का ध्यान करना है। बुद्धि का परदा वास्तविकता पर रुक जाना है। रहस्यों के संसार का परदा रहस्य की बातों के साथ रुका रहना

है। रुह का परदा मुकाशफ़ा (दैवी प्रकाशन) है और यह बारीक परदा किब्रियाई (ऐश्वर्य) है। रिसालये मक्किया मे इसी प्रकार उल्लेख हुआ है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **रैन मानुस** का उल्लेख हो तो उससे असावधानी की अवधि अथवा युवावस्था की अवधि की ओर सकेत होता है। कभी मनुष्य की अवस्था, कभी ससार और कभी आलमे मजाज[६०] समझा जाता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **बासर (वासर) व भोर** अथवा इसी प्रकार के नामों का उल्लेख हो तो इससे मारेफत के दिनों अथवा वृद्धावस्था और कभी कभी मनुष्यों के अत का समय, कभी कभी कयामत के दिन और कभी कभी आलमे हकीकत की ओर सकेत होता है। सभव है कि "**रैन-मानुष**" से उस समय की ओर सकेत करें जब सृष्टि की रचना न हुई थी और वासर व भोर से सृष्टि की रचना की ओर सकेत करें।

यदि हिंदवी वाक्यो में **सूरज (सूर्य) उदय** का उल्लेख हो तो इससे मुहम्मद साहब के नूर[६१] (ज्योति) के प्रकट होने की ओर सकेत होता है। "अल्लाह ने सर्वप्रथम जिस वस्तु की रचना की, वह मेरा नूर है।" कभी केवल नबूअत (नबी सबधी नूर) के प्रकट होने की ओर सकेत करते हैं। कभी मुशाहदे (साक्षात्कार) क नूर (ज्योति) से अभिप्राय होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **धूप** का उल्लेख हो तो उससे वुजूद (अस्तित्व) नूर (ज्योति) का ओर सकेत होता है।

छंद

वह खोज करनेवाला जिसने वहदत (ऐकश्वरवाद) का निरीक्षण कर लिया है उसकी दृष्टि सर्वप्रथम वुजूद (अस्तित्व) के नूर (ज्योति) पर जाती है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे **छाह** का उल्लेख हो तो उससे सृष्टि एव दैवी सर्य की छाया की ओर सकेत होता है। 'क्या तू अपने पालनेवाले को नही देखता कि उसने किस प्रकार छाया को बढाया ?'

छद

उसका दरबार एक सूर्य है। दोनो लोक उसके समक्ष मुझे सायबान ज्ञात होते है। कभी मोमिनो की ओर सकेत होता है जो मुहम्मद साहब के

नूर (ज्योति) का प्रतिबिंब है। 'मैं अल्लाह के नूर से हूँ तथा ईमान वाले मेरे नूर से हैं।'

छंद

समस्त सम्मान उसके अधीन है। खाकी बन्दों (मनुष्यों) का वुजूद (अस्तित्व) उसी की छाया के कारण है।

यदि दोपहर की छांह आए तो उससे उस चीज की ओर संकेत होता है जो पतन की ओर जा रही हो।

छंद

इन समस्त छायाओं का अन्त में पतन हो जाता है। तू ऐसी छाया की ओर दौड़ जिसका पतन नहीं है।

कभी दोपहर से हज़रत ख्वाजा सल्लम (मुहम्मद साहब) के समय की ओर संकेत करते हैं।

छंद

हजरत ख्वाजा का समय दोपहर का समय था जो प्रत्येक छाया तथा अंधेरे से मुक्त था।

यदि हिंदवी वाक्यों में शशि व चन्द्रमा का उल्लेख हो तो इससे विलायते मुतलक (सतलोक) के नूर की ओर संकेत किया जाता है जो नबूवत के सूर्य से लाभ प्राप्त करता है और कभी मुकाशफ़े (दैवी प्रकाशन) के नूर की ओर संकेत होता है। यदि वियोग के समय चन्द्रमा की ठंडक के गरमी में परिवर्तित होने का उल्लेख किया जाय तो उससे भाग्य एवं विधि लेख के प्रतिकूल तथा विपरीत होने की ओर संकेत होता है। यदि सम्भोग के समय उस चन्द्रमा का उल्लेख ऐसी ठंडक के साथ हो जो स्वभाव के अनुकूल हो तो उसका तात्पर्य प्रियतम की उन कृपाओं से होता है जो आशिक़ पर की जाती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में पवन अथवा उसी के समानार्थक शब्दों का उल्लेख हो तो इससे उस वायु की ओर संकेत होता है जो हृदय को एक दशा से दूसरी दशा में परिवर्तित कर देती है। जैसे कि हृदय एक वृक्ष के समान है जो किसी मैदान में लगा हुआ हो और वायु उसे ऊपर नीचे पलट रही हो और कभी उस पवन की ओर संकेत होता है जो हज़रत सुले-

मान[६२] को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाती थी 'और सुलेमान के लिये हवा का प्रबंध किया गया था कि प्रात.काल एक नगर में हों तथा सायंकाल दूसरे नगर में ।" कभी आराम की हवा तथा सुखदायक सुगंध की ओर संकेत होता है ।

छंद

प्रातःकाल जब पवन सुखद समाचार लाए तो वह हुद हुद[६३], सुलेमान के समान है । सेबा[६४] उद्यान से सुख शान्ति के सुखद समाचार लाई है ।

कभी इससे परिश्रम के कष्टों तथा असमंजस की लहू की ओर संकेत होता है ।

छंद

कष्टों की तेज हवाओं के कारण इस उद्यान में यह नहीं देख सकते कि यहाँ गुलाब था, अथवा चमेली ।

उस विषैली आँधी के कारण जो उद्यान के किनारों पर चली, यह देख कर आश्चर्य होता है कि किसी गुलाब का रंग अथवा चमेली की सुगंध कैसे शेष रह गई ।

यदि हिंदवी वाक्यों में चंदन तथा अगर आदि का उल्लेख हो तो ईश्वर के दान की ठंडक की ओर संकेत होता है । "हे खुदा मुझे अपनी क्षमा की ठंडक का आनंद प्रदान कर" और कभी नूरानी (ज्योतिमय) परदों की ओर संकेत होता है ।

मुझे उस सुगंध पर ईर्ष्या होती है जो तेरे शरीर में लिपट जाय ।

यदि हिंदवी वाक्यों में कँवल (कमल) अथवा कुमुदनी का उल्लेख हो और वह सूर्य के अर्थ में संबंधित हो तो उससे उम्मत (मुहम्मद साहब के अनुयायी) के हृदय की ओर संकेत होता है जिन्हें नबूवत के सूर्य की ज्योति से लाभ प्राप्त होता है । यदि उसका अर्थ चंद्रमा से संबंधित हो तो किसी बहुत बड़े वली (संत) के चेलों की ओर संकेत होता है अर्थात् उसके चेले और उसपर विश्वास रखनेवाले लोग, जो चंद्रमा से प्रकाश प्राप्त करते हैं । "शेख (गुरु) अपने चेलों में उसी प्रकार होता है जिस प्रकार नबी अपने अनुयायियों में ।"

यदि हिंदवी वाक्यों में तरैयों का उल्लेख हो तो उससे चरित्र के वे गुण समझे जाते हैं जिनका संक्षेप में इस हदीस में उल्लेख हुआ है—"अल्लाह

की आदतों से अपनी आदतें बनाओ" और कभी नबूअत के जौक (आस्वादन) तथा मुकाशफ़े (दैवी प्रकाशन) की ओर संकेत होता है, जिनका मोमिन (धर्मनिष्ठ मुसलमान) पालन करते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'भोर की तरैयां' कहा जाय तो उससे कुछ मनुष्यता के गुणों एवं मनुष्य की विशेषताओं की ओर संकेत होता है जो विलायत (संतलोक) के सूर्य के उदय होने पर स्वाभाविक रूप से विद्रोह करते हैं और उन्हें "मित्रों के अपराध" कहते हैं और वे उनके भाग्य की सुदृढ़ता के लिए होते हैं। उस महान् परमेश्वर की ओर से जो बहुत बड़ा नीतिज्ञ है, एक शुद्ध नीति होती है। बुज़ेर[६५] (भगवान् उसके रहस्यों को पवित्र बनाए) ने कहा है, "कामिनी कड़वी है किंतु उद्यान से आई हुई है अब्दुल्लाह (ईश्वर का दास) यद्यपि दोषी है किंतु मित्रों में से है। अन्य लोगों का पाप उच्च से निम्न श्रेणी की ओर लाता है और ईश्वर के मित्रों का पाप निम्न श्रेणी से उच्च श्रेणी की ओर ले जाता है।

यदि हिंदवी में कहें "तुम नह भई भोर की तरैया" तो यह संकेत है किसी कार्य से जिसे छिपा रखना चाहिए अथवा किसी ऐसे रहस्य के खोल देने से कलंकित होने की ओर।

यदि हिंदवी रचना में 'रैन कटी तारे गिनत" अथवा इसी प्रकार के वाक्य कहें तो इनमें किसी मित्र के अन्य मित्र की प्रतीक्षा करने की तथा आंख न झपकाने की ओर संकेत होता है।

छंद

वियोग की रात्रि की कथा कहना कौन जानता है। केवल वह जो 'सादी' के समान तारे गिने।

यदि इससे स्पष्ट शब्दों में जानना चाहो तो इस छंद से समझो।

छंद

स्मरण रहे कि मुकर्मियों की मुझसे भेंट की अभिलाषा बहुत बढ़ चुकी है और मैं उनसे मिलने का बड़ा इच्छुक हूं।

यदि हिंदवी वाक्यों में "रैन गई पीतम कंठ लागे" अथवा "रैन बिहानी पीतम संग" अथवा इसी प्रकार की कोई अन्य बात कहें तो इनसे

इस हदीस के अर्थ की ओर सकेत होता है, "मैं अपने ईश्वर के पास रात्रि में रहता हूँ"।

यदि हिंदवी रचना में "लालन कौ हौं देखन न दैहौं" अथवा इसी प्रकार की कोई अन्य बात कहें तो इससे इस अर्थ की ओर सकेत होता है जो तुम इस हदीस से समझ सकते हो "मेरे मित्र मेरे शिविर के नीचे हैं। उनको मेरे अतिरिक्त कोई अन्य नहीं जानता।"

छद

सब उसके साथ हैं किंतु वह सबसे दूर है और नूर (ज्योति) के परदों के पीछे छिपा है।

कभी उन वाक्यों की ओर सकेत होता है जो अन्य लोगों की दृष्टि से छिपाए रखते हैं। इसके अतिरिक्त उन समाचारों की ओर भी सकेत होता है जिनको निहित रखते हैं।

यदि हिंदवी रचनाओं में इस प्रकार कहें "तोई सग जाऊँ" अथवा इसी प्रकार के अन्य वाक्य कहें तो इस बात की ओर सकेत होता है कि प्रेमी सर्वदा प्रियतम के पीछे छाया के समान चलता है। प्रेमी के समस्त कार्य तथा गीत प्रियतम के ही कार्य एव गति होती हैं और उसे स्वय कोई अधिकार नहीं होता। नवीन के साथ प्राचीन का कोई चिह्न शेष नहीं रहता। (इस बात की व्याख्या करने वाले के छद नीचे दिए जा रहे हैं-)।*

छद

मैं छाया के समान तेरे साथ चलता हू। छाया को किसी बात के कारण पूछने का कोई अधिकार नहीं है। क्योंकि मेरी क्रियायें एव चुप रहना पूर्ण रूपेण तेरी ही ओर से है तो तू मुझपर सदाचार एव दुराचार का आरोप न लगा।

यदि तू मेरा अपराध देखे तो मेरे दोषों का उल्लेख मत कर। तूने ही तो मेरा सिर मेरे गले से निकाला है।

यदि हिंदवी रचना में "अवधि वदि गई मोसों" अथवा इसी प्रकार का उल्लेख हो तो इससे "अलस्त[६६]" के वचनों की ओर सकेत होता है जब कि आत्माओं ने 'बला'[६७] कहकर स्वीकृति का वचन दिया था।

---

* मीर अब्दुल वाहिद के छद।

यदि हिंदवी रचनाओं में 'अनत रति मानी' अथवा इसी प्रकार की अन्य कोई बात हो तो इससे इस बात की ओर संकेत होता है कि बदे छल तथा अभिमान के ससार पर विश्वास रखे बिना इबादत (उपसना) किए जाएं।

यदि हिंदवी वाक्यो में "तहाँ सिधारो जहा रति मानी" तो इनसे इस आयत के अर्थ की ओर सकेत होता है "अपनी पीठ के पीछे लौटो तथा प्रकाश ढू ढो।" हदीस में आया है "मनुष्य अपने प्रियतम के साथ रहता है।"

छंद

संसार में जिस वस्तु से तेरा ध्यान संबधित रहता है सर्वदा तेरे समिलन का मार्ग वही वस्तु होती है।

यदि हिंदवी में कहें "रति के चिह्न सब प्रकार के भये" तो उससे उस दिन की ओर सकेत होता है जिस दिन छिपे हुए रहस्य जाचे जयेंगे। यदि इनसे भी स्पष्ट सुनने की इच्छा हो तो इस पद्य में सुनो।

पद्य

समस्त एकत्र की हुई बातें तथा कार्य कयामत में प्रगट होंगे।
जब तूने अपने वस्त्र से अपने शरीर को नग्न कर लिया तो दोष तथा गुण एक ही बार प्रकट हो जायेंगे।

तेरे शरीर में किसी प्रकार का कोई दोष न होना चाहिए क्योंकि (उस हालत में) इसमें जल के समान रूप का प्रतिबिंब स्पष्ट नहीं हो सकता।

इसमें इस स्थान पर समस्त रहस्य प्रकट हो जायगे। इस विषय में 'जिस दिन छिपे हुए रहस्य प्रकट हो जायेंगे' की आयत पढ़नी चाहिए।

यदि हिंदवी में इस प्रकार का कोई लेख हो "अधर कपोल नैन आनन उर कहि देत रति के आनंद' तो इससे इस बात की ओर सकेत होता है कि "शरीर के अग अपने कार्य के स्वयं साक्षी होंगे' जैसा कि इस आयत में है। 'उस दिन (कयामत) उनके हाथ तथा पैर एवं उनकी जिह्वा उन बातो के लिये जो वे कर रहे हैं साक्षी होंगे।"

यहा यह बात जान लेनी चाहिए कि जो बातें भूत काल में विलीन हो चुकी हैं अथवा भविष्य में जिनके लिये वचन दिया गया है वे सब युक्तियों के

लिये इसी समय वर्त्तमान हैं क्योंकि वे समय तथा स्थान के प्रतिबंध से मुक्त हो चुके हैं और अज़ल (अनादि) एव अबद (अनत) से मिल चुके हैं।

छंद

हे सूफियो! दिन केवल आज ही का दिन है। भूतकाल तथा भविष्य का चिह्न कहाँ है! जो ईश्वर से एक क्षण भी असावधान नहीं रहता उसका भविष्य तथा भूतकाल सभी वर्त्तमान (के समान) होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे इसी प्रकार का लेख हो '**मैं पटई तौ लैन सुधि परि मैं रति मानी जाय।**" तो इससे उस समूह[६१] पर कोप की ओर सकेत होता है जिन्हें मारेफत (ज्ञान) तथा प्रेम के पूर्ण होने के उपरात मुहम्मद साहब के नायेब होने का वस्त्र पहना कर दोषियों को पूर्ण बनाने के आशय से लौटा दिया जाता है। अब उनका हृदय किसी वस्तु की ओर कुछ भी आकर्षित हो जाय तो उन्हें महान् ब्रह्म की लज्जा इस प्रकार की चेतावनियों एव पदवियो से सबोधित करती है। परमेश्वर के यह शब्द याद करो "ताकि वह सचों से उनकी सत्यता के विषय मे प्रश्न करे" और "सचों को इस बात का भय दिलाओ कि मुझे लज्जा आती है।" लज्जा का सघर्ष बड़ा ही उत्कृष्ट सघर्ष है और प्रेम की लज्जा बड़ी ही उत्तम लज्जा है अत' उसके गीत परदे मे गाओ "**झगडों की ल्यों सरिजन**" (झगरो कीनों साजन ?) अर्थात् माशूके हकीकी (परम प्रियतम) ने अपने आशिक के साथ एक मस्ती का युद्ध छेड रखा है जिससे आशिक को सन्मार्ग दर्शाये। यह समाचार तो बुरा है किंतु एक विचित्र रहस्य है।

छद

माशूक के मुडे हुए केशपाशों की व्याख्या सक्षेप में नहीं हो सकती क्योंकि वह कथा ही वडी लबी है।

यदि भागे तो इस वाक्य की लज्जा शरण न देगी। "भागने के स्थान कहा हैं?" और यदि आलिंगित रहे तो "अल्लाह तुमको अपने नफ्स (व्यक्तित्व) से भय दिलाता है।" के भय ने मार्ग रोक रखा है अतः विवश क्या करे। यदि बैठ जाए तो कहेंगे "अल्लाह से आशा लगा कर खडे हो जाओ" और यदि खोज में उठ खड़ा हो तो कहेंगे "तुम कहा जाते हो? खोज वर्जित है तथा द्वार बद है।"

छंद

यदि मैं उसकी खोज में जाऊँ तो आपत्तिया उठती हैं और यदि खोज न करूं और बैठ रहूँ तो (वह) शत्रुता के लिये उठ खड़ा होता है। यदि निराश हो जाय (जाऊँ) तो कहते हैं "ईश्वर की दया की ओर से निराश न हो" और यदि आशा लगाए रखे तो कहते हैं "क्या तुम्हें अल्लाह के मक्र (युक्ति) का भय नहीं रहा ?" यदि मारेफ़त (ज्ञान) के निकट आएँ तो कहते हैं "तुमने अल्लाह का यथारूप समान नहीं किया।" इस तुच्छ कण (मनुष्य) की आकुलता बड़ी ही विचित्र है। जिसके भी साथ जाय और जिसकी ओर आकर्पित हो उसे सफल नहीं होने देते और कहते हैं।—

छद

तू जिससे भी प्रेम करे, समझ ले कि तुझे सुख न मिलेगा। मैं तुझे ऊपर उठाता तथा नीचे गिराता ही रहूँगा क्योंकि तू तो मेरा ही है।

"आध लैहौं बटाय"

छद

हे मित्र तेरा हृदय दुख से इसलिये दो टुकडे हो गया है कि आधा हमारे साथ रहे तथा आधा ससार के साथ।

यदि तुम नबूवत अथवा उसके नायब होने के कारण सृष्टि की ओर आकर्पित हो तो विलायत (सतलोक) के कारण सर्वदा हमारा ध्यान करते रहो। अपने हृदय को किसी को न सौंपो, अन्यथा हमारी लज्जा के बल्ले से गेंद के समान सर्वदा लुढकते रहोगे। आधा अर्थात् हृदय का आधा भाग हमारे प्रेम का भाग है और दूसरा आधा भाग जो प्रकट है उसे हम प्राणियो का हिस्सा बना देते हैं। "अल्लाह उन बंदों के साथ है, जिनके शरीर ससार मे हैं तथा उनके हृदय अल्लाह के पास हैं।"

छद

हे ईश्वर तू ने मुझे ससार को सौंप दिया है। हृदय जो तेरे पास है, कोप के कारण दो टुकडे हो गया है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे "समीप अथवा संग" अथवा ऐसे ही अन्य शब्दों का उल्लेख हो जो संमिलन के समानार्थक हों तो उससे उन सीमाओं के समाप्त होने की ओर संकेत होता है, जो अनात्मवाद मे घिरी हुई हैं।

छंद

यहां समिलन कल्पना के उठा देने का नाम है। यदि कल्पना सामने से हट जाए तो वही समिलन है।

यह केवल सीमा निर्धारित करना है, जो अस्तित्व से पृथक् है कि न खुदा बदे के साथ हुआ और न बदा खुदा के साथ।

कभी इस शब्द से सबधों तथा बधनों के तोड़ डालने की ओर सकेत होता है।

छद

सबध एक परदा है तथा उसका कोई फल नहीं। यदि तू सबधों को तोड़ देगा तो समिलन हो जायगा।

यदि हिंदवी शब्दों में **विरह, वियोग** अथवा उसके समानार्थक शब्दों का उल्लेख हो तो उससे हृदय की वास्तविक बातों से वियोग अथवा खुदा के जिक्र (स्मरण) की ओर से असावधान हो जाने की ओर सकेत होता है। इसकी तीन श्रेणिया हैं (१) सर्वसाधारण का वियोग (२) विशेष व्यक्तियों का वियोग (३) सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों का वियोग। सर्वसाधारण का वियोग ईश्वर के ध्यान से असावधानी करना है। यह विशेष व्यक्तियों के अनुसार भी कुफ्र[७१] है।

छंद

जो व्यक्ति ईश्वर के ध्यान से एक क्षण के लिये भी असावधान हो जाय वह उसी समय काफ़िर हो जाता है किंतु निहित रहता है। यह असावधान रहना चलता रहे तो इस्लाम का द्वार उसके लिये बद हो जाता है।

विशेष व्यक्तियों का वियोग मध्य में (किसी समय) अपनी ओर एक क्षण के लिये दृष्टिपात करना है।

सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों का वियोग यह है कि वह आरिफ़ (ज्ञानी) जो इर्फान (ज्ञान) की सर्वोच्च श्रेणियों तक पहुँच गया हो और यदि उसका व्यक्तित्व ईश्वर के अस्तित्व में और उसके गुण ईश्वर के गुण में विलीन हो चुके हों और वह महव (मिटजाने) एव फना (विलीन) होने की अन्तिम श्रेणी को प्राप्त हो चुका हो, फ़ना (विलीन) होने के उपरात बका (जीवन) की श्रेणी तक उन्नति कर चुका हो, किंतु उस नाम तथा व्यक्तित्व के कारण

जो वह रखता है और जो उससे सबंधित है, सर्वश्रेष्ठ लोगों के लिये यही नाम तथा व्यक्तित्व वियोग है। "क्या अच्छा होता मुहम्मद का रब मुहम्मद को पैदा न करता।" अर्थात् क्या अच्छा होता कि नाम तथा व्यक्तित्व भी मध्य में न होते।

छद

सिर व गले के कारण ही बिना चिह्न का होना है। मिट मिट कर मिट जाना गैब (परोक्ष) के भीतर गैब है।

यदि हिंदवी वाक्यों में गर्भ व अंगन का उल्लेख हो तो इससे अतरग एव बहिरग अथवा रूप एवं वास्तविकता की ओर सकेत होता है।

अध्याय (२)

उन संकेतों तथा वाक्यों की व्याख्या में जो विशुन पद (विष्णु पद) में आते हैं

यदि कोई कहे कि अपवित्र काफ़िरों के नाम आनन्द लेकर सुनना एवं शरा के विरुद्ध लेखों पर आवेश में आकर नृत्य करने लगना कहाँ से उचित हो गया तो हम कहेंगे उमर खत्ताब[1] (अल्लाह उनसे सन्तुष्ट रहे) से लोगों ने सुनकर यह बात कही कि "(क्या) कुरान में शत्रुओं का उल्लेख तथा काफ़िरों के प्रति सम्बोधन नहीं है ?"

और यह उस सबब की बात है कि ऐनुलकुज़ात[2] ने फरमाया कि "फ़िरऔन[3] व हामान[4] व कारून[5] के नाम अबूजेहल[6] ने कुरान में देखे तथा कुरान के वाक्य सुने।" अत जब यह सम्भव है कि कुछ लोग शत्रुओं के उल्लेख, काफ़िरों से सम्बोधन कुरान में सुन सकें तो यह भी सम्भव है कि कुछ लोग अपवित्र काफ़िरों का वर्णन संगीत के रागों में सुन सकें।

यदि हिंदवी वाक्यों में कृष्ण अथवा उनके अन्य नामों का उल्लेख हो तो इससे रिसालत पनाह सल्लम (मुहम्मद साहब) की ओर संकेत होता है और कभी इसका केवल मनुष्य से तात्पर्य होता है। कभी इससे मनुष्य की वह वास्तविकता समझी जाती है जो परमेश्वर के जात (सत्ता) की वहदत (एक होना) से सम्बंधित होती है। कभी इब्लीस से तात्पर्य होता है। कभी उन अर्थों की ओर संकेत होता है जिनका अभिप्राय बुत (मूर्ति) तर्सा बचा (ईसाई बालक, माशूक) तथा मुग़बचा (अग्नि पूजक का पुत्र, माशूक) से होता है, जैसा कि इस मसनवी से ज्ञात होता होगा।

मसनवी

बुत तथा तर्सा बचा खुले हुए नूर (ज्योति) है जो रूपवानों के मुख से चमकते रहते हैं। यह प्रकाश हृदयों का विश्राम स्थान बन जाता है। कभी गायक बन जाता है और कभी साकी।[8]

यदि हिंदवी वाक्यों में **गोपी** तथा **गूजरी** का उल्लेख हो तो इससे फ़रिश्तों की ओर सकेत किया जाता है और कभी इससे मनुष्य जाति की वास्तविकता की ओर उसके गुणों की वहदत (एक होने) के अनुसार सकेत होता है और यदि बुद्धि की आँख इन सकेतों में कुछ अतर देखे तो वह अन्तर बुद्धि की आँख है। इन विश्वासों तथा सकेतों में कोई अतर नहीं। यदि तुम जानना चाहो तो लोग कहते हैं कि एक बार शेख शिबली[1] ने यह छद कहनेवालों के द्वारा सुना। मैं सलमा के विषय में प्रश्न करता हूँ और ससार में कोई उसका उत्तर देनेवाला नहीं। यहाँ यह स्पष्ट बात है कि सलमा एक स्त्री का नाम है और शिबली का सलमा से अभिप्राय ईश्वर से है। इस कौम के विश्वासी (सूफी) इस प्रकार के अनेक सकेत तथा प्रमाण रखते हैं और इन संकेतों के कारण भी उनके निकट अनेक प्रकार के हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **कुबरी** तथा **कुब्जा** का उल्लेख हो तो इससे मनुष्य की ओर उसके दोषों तथा त्रुटियो के अनुसार सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **ऊधो** (**उद्धव**) का उल्लेख हो तो इससे रिसालत पनाह सल्लम (मुहम्मद साहब) की ओर सकेत होता है। कभी इसका तात्पर्य उनके अनुयायियों से होता है जो सेवक तथा स्वामी के मध्य में अभिकर्त्ता हैं कभी इस शब्द से जिबरील (फ़रिश्ते) की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यो में **पतिया** आए तो इससे ख़ुदा के यहाँ से उतरी हुई पुस्तक की ओर सकेत होता है और कभी बदों के उन नाम-ए-आमाल (कर्म-पजिका) की ओर सकेत होता है जो कयामत के दिन प्रकट होंगे और कभी (खुदा के) उस फ़रमान (आदेश) की ओर सकेत होता है जो स्वर्ग में भेजा जाएगा कि 'हे मेरे बदे तू हूरों (स्वर्ग की अप्सराओं) और महलो में व्यस्त हो गया और मेरे दर्शन को भूल गया।' कभी इस शब्द से समस्त आलमे वुजूद (सृष्टि) की ओर सकेत होता है जो 'जौहर' (तत्व) अर्ज़ (दृश्यमान) अमिश्र तथा मिश्रित का सग्रह होता है और यही परमेश्वर की पुस्तक है।

पद्य

जिसकी रूह तजल्ला (ज्योति) मे रहती है, उसके निकट समस्त ससार परमेश्वर की पुस्तक है।

उर्ज (दृश्यमान) एराब (जेर, ज़बर, पेश) तथा जौहर (तत्व) अक्षर के समान है। श्रेणियाँ आयतें तथा वक्फ़ (ठहरने के स्थान) हैं।

किंतु एक प्रकार से ससार की पुस्तक का प्रत्येक पृष्ठ मारेफ़त (ज्ञान) की एक पुस्तक है और एक प्रकार से प्रत्येक पृष्ठ तथा सीमा ससार की पुस्तक का एक वाक्य है।

छंद

अंतरग एवं वहिरग प्रत्येक को तू (ईश्वर का) अस्तित्व समझ ले और समस्त वस्तुओं को क़ुरान एवं उसकी आयतें समझ ले। और कभी इस शब्द से उन दिलों की ओर सकेत होता है जिनमें ईमान लिख दिया गया है। 'ये ही वे लोग हैं जिनके हृदय मे ईमान लिखा गया है।'

जिस दिन फूलों को उत्पन्न किया गया उसी दिन दिलों मे ईमान लिखा गया।

यदि तू उस लेख को एक बार पढ ले, तो जिस वस्तु को भी पढेगा समझ लेगा।

यदि हिंदवी वाक्यों मे ब्रज अथवा गोकुल का शब्द आए तो उससे आलमे नासूत और कभी कभी आलमे मलकूत तथा कभी कभी आलमे जबरूत की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में जमुना अथवा गंगा अथवा कालिंद्री (कालिंदी) अथवा इसी प्रकार का उल्लेख हो तो इससे वहदत (एकेश्वरवाद) की नदी की ओर सकेत होता है और कभी मारेफ़त (ज्ञान) के समुद्र की ओर, और कभी हुदूस (आदि रचना) तथा इमकान (सभावना) की नहर की ओर सकेत होता है। निस्सदेह जन्म पानेवाली वस्तुएँ लहरों तथा नहरों के समान हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों मे मुरली अथवा बाँसुरी अथवा इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इससे भाव के अभाव मे प्रकट होने की ओर सकेत होता है।

छंद

समस्त ससार उसके गीत की आवाज है। किसने ऐसी लंबी आवाज़ सुनी है। और कभी 'हमने उस आदम में अपनी रूह फूंकी' के संगीत की

ओर सकेत होता है और कभी "कुन"[११] (क्रिया) के सगीत की ओर सकेत होता है।

छंद

सृष्टि तथा अम्र (आदेशों) का ससार एक सास से प्रकट होते हैं क्योंकि यह श्वास जब आया, उसी समय चला गया।

उसी श्वास से दोनों लोकों का जन्म हुआ और उसी श्वास से आदम के प्राण प्रकट हुए और यह श्वास केवल एक राग है। इसमें कोई अक्षर कोई आवाज़ अथवा आवाज का खिंचाव एव टूटना नहीं है।

छंद

आत्मा का सगीत आवाज़ तथा अक्षर नहीं हैं क्योंकि उसके प्रत्येक परदे में एक अनूठा रहस्य निहित है।

यदि हिंदवी वाक्यों में कहे "गांग (गगा) पार डफ बॉसुरी बाजै" तो इससे इस अर्थ की ओर सकेत होता है कि हुदूस (आदि रचना) तथा इमकान (सभावना) की नदी के अतिरिक्त इश्क (प्रेम) तथा हुस्न (सौंदर्य) के अनेक राग हैं। और आत्मा तथा माशूक के अनेक निहित सकेत हैं और इन रागों को तू उस समय तक न सुनेगा और न देखेगा जब तक हुदूस (आदि रचना) की नदी पार न कर लेगा।

छंद

ससार सगीत, मस्ती तथा शोर से परिपूर्ण है किंतु अधा दर्पण मे क्या देख सकता है ?

गानेवाला तो कभी चुप नहीं रहता किंतु कान तो प्रत्येक समय खुला नहीं रहता।

यदि हिंदवी वाक्यों में बीन तथा किन्नर अथवा इसी प्रकार के शब्द आएँ तो इनसे उन गैबी (परोक्ष सबधी) घटनाओं की ओर सकेत होता है जो आरिफ़ों (ज्ञानियों) को आँख से दिखाई देते हैं तथा उन इलहामों (दैवी प्रेरणा) की ओर सकेत होता है जिनमें कोई सदेह नहीं।

छंद

प्रेम की मिजराब[१२] एक विचित्र प्रकार के स्वर का बाजा रखती है। जिस राग को भी इस मिजराब से निकाला जाय वह एक नवीन ढग का होता है।

यह समझ लो कि किन्नर, बीन तथा बाँसुरी आदि से जो राग निकलता है वह किसी मनुष्य की अंगुलियों तथा अंगों की क्रिया के बिना नहीं निकल सकता और इन वस्तुओं की क्रिया मनुष्य के हृदय के हिलने के बिना संभव नहीं। हृदय का हिलना गुरु के हिलाए बिना असंभव है और इसमें कोई आपत्ति नहीं।

छंद

मेरे हाथ से कोई ऐसा रूप नहीं बन सकता जिसके चिह्न ऊपर के गुरु (ईश्वर) ने न बनाए हों।

इस स्थान से समस्त रागों के अर्थ समझे जा सकते हैं।

पद्य

मेरे हृदय ने मेरे लिये एक गीत गाया और जैसे उसने गाया वैसे ही मैंने भी गाया और यह राग जहाँ थे वहीं मैं भी था और जहाँ मैं था वहीं ये राग भी थे।

बाँसुरी जो प्रत्येक समय गाने गाती है वह वास्तव में बाँसुरी बजानेवाले के श्वास के द्वारा गाती है।

प्रेम बाँसुरी बजाने वाले के अतिरिक्त और कुछ नहीं और हम बाँसुरी के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। वह एक क्षण भी हमारे बिना नहीं है और हम उसके बिना नहीं हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में कंस का उल्लेख हो तो उससे नफ़्स (वासना) की ओर संकेत होता है और कभी खन्नासा (शैतान) की ओर, और कभी इबलीस की ओर संकेत होता है और कभी खुदा के कह्हर (कोप) व जलाल (ऐश्वर्य) वाले नामों की ओर संकेत होता है और ऐसा भी होता कि इनका तात्पर्य पिछले पैगंबरों की शरीअत से हो।[13]

यदि हिंदवी वाक्यों में शेषनाग* का उल्लेख हो अथवा इसी प्रकार के अन्य नामों की चर्चा हो तो उसका तात्पर्य नफ़्से अम्मारा (काम वासना) से होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में मधुपुरी अथवा बिंद्राबन (वृंदावन) अथवा मधुबन के शब्द अथवा इसी प्रकार के अन्य शब्द आए तो इससे उन अर्थों

---

*पुस्तक में 'मार' है जिसका अर्थ नाग होता है।

की ओर संकेत होता है जिनके लिये इस कौम (सूफ़ियों) में ऐमन की घाटी के शब्द का प्रयोग होता है।

छंद

कुछ समय के लिये ऐमन की घाटी में आ जा और निःसदेह यह आवाज सुन कि 'मैं ही अल्लाह हूँ।'

ऐमन की घाटी में आ। वहाँ अचानक एक वृक्ष तुमसे कहेगा 'मैं ही अल्लाह हूँ।'

समझ लो कि इन लोगों (सूफ़ियों) की परिभाषा में ऐमन की घाटी का तात्पर्य हृदय को पवित्र बनाने तथा आत्मा को प्रकाशमान करने के नियमों से है। और इसी नियम से ईश्वर द्वारा लाभ अनिवार्य रूप से प्राप्त होता है और कभी ऐमन की घाटी का अभिप्राय गोकुल तथा व्रज के समानार्थक शब्दों से भी होता है।

यदि हिंदवा वाक्यों में **मथुरा** की चर्चा हो तो इससे मारेफ़तवालों (ज्ञानियों) के अस्थायी मकाम (लक्ष्य) की ओर सकेत होता है क्योंकि मारेफ़तवालों (ज्ञानियों) के दो मकाम हैं। एक अस्थायी, यह मकाम (लक्ष्य) आलमे नासूत में है और दूसरा स्थायी मकाम है और वह आलमे मलकूत तथा आलमे जबरूत में है और जब आध्यात्मिक यात्रा में अस्थायी मकाम (लक्ष्य) से चलते हैं तो स्थायी मकाम (लक्ष्य) में प्रविष्ट होते हैं। यह वाक्य "जो मनुष्य दो बार जन्म न ले वह बलन्दी के अध्यात्म में प्रविष्ट न होगा।" इस अर्थ की व्याख्या करता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में **द्वारिका** की चर्चा हो तो उनसे आरिफ़ों (ज्ञानियों) का स्थायी स्थान तथा उनके लौटकर जाने की मजिल समझी जाती है और यह मकाम (लक्ष्य) एक रोक तथा सीमा है। पूर्ण व्यक्तियों की यात्रा तथा उनके कर्म एव ज्ञान वहा तक पहुँच सकते हैं। वह मकाम नामों तथा श्रेणियों की ऐसी सीमा है कि इससे ऊचा अन्य कोई लक्ष्य नहीं। "जिसने तुझ पर कुरान अनिवार्य किया है वह तुझे लौटने के स्थान पर वापस लाने वाला है"। संकेतवाले लोगों (ज्ञानियों) की जबान में यहा शब्द मआद (लौटने का स्थान) से वही मकाम (लक्ष्य) समझा जाता है।

यदि हिंदवी वाक्यों मे जसोधा (यशोदा) की चर्चा हो तो इसका तात्पर्य खुदा की दया तथा कृपा का वह संबंध समझा जाता है जो उसकी ओर से ससार वालों के लिये पूर्व ही से निश्चित है।

यदि हिंदवी वाक्यों में नंद महर का उल्लेख हो तो इससे रिसालत पनाह सल्लम (मुहम्मद साहब) की ओर संकेत होता है और कभी इससे ईश्वर की सर्वदा प्राप्त होनेवाली कृपा, दया तथा दान भी समझे जाते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में गोरस दहिय्व (दही) महिय्व (मही) तथा दूध एवं इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इससे नाना प्रकार की इबादतो (उपासनाओं) तथा आज्ञाकारिता की ओर एवं नाना प्रकार के गुणों और उत्कृष्ट कार्यों की ओर संकेत होता है कि जो "गोबर तथा रक्त" अर्थात् अतिशयोक्ति एवं अल्प के मध्य से शुद्ध एवं उत्कृष्ट होकर निकलते हैं। अल्लाह का कथन है "नि.संदेह तुम्हारे लिये चतुष्पद शिक्षा ग्रहण करने का साधन हैं। हम तुम्हें वह वस्तु पिलाते हैं जो उनके शरीरों के भीतरी भागो में हैं, गोबर तथा रक्त के मध्य मे शुद्ध और पीने वालो के लिये स्वादिष्ट दूध, और यह श्रेणी निष्ठा की मंज़िल है जैसा कि शफ़ीक (अल्लाह उनसे संतुष्ट रहे) से निष्ठा के विषय में पूछा गया तो उन्होंने कहा "निष्ठा कर्म को दोषों से पृथक् पहचान लेने का नाम है जैसा कि दूध गोबर तथा रक्त के मध्य से पहचाना जा सकता है।"

यदि हिंदवी वाक्यो मे नैनों का उल्लेख हो तो इससे प्रार्थना एवं विनति के मक़ाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है क्योंकि प्रार्थना इबादतो (उपासना) का सार है, जिस प्रकार घी, दूध तथा दही का सार है। प्रार्थना का मकाम (लक्ष्य) सांसारिक जीवों एवं नफ्स से पवित्रता है।

छंद

जिस व्यक्ति ने यह पवित्रता प्राप्त की वह नि:संदेह प्रार्थना के योग्य हो जाता है।

यदि हिंदवी लेखों मे "बेचन जाय" अथवा "दुहावन जाय" अथवा "नीर भरन जाय" अथवा इन्हीं के समानार्थक वाक्यों का प्रयोग हो तो इससे नवाफ़िल[14] तथा वज़ीफ़े[15] पढ़ने की ओर संकेत होता है क्योंकि इनके द्वारा बंदे (दास) अल्लाह के निकट पहुँच जाते हैं "बंदा नवाफ़िल

पढने के कारण निरतर मुझमे निकट होता रहता है यहा तक कि मैं उससे प्रेम करने लगता हूँ।"

और कभी इससे उन मुजाहदों (दमन) तथा रियाजतों (तपस्याओं) की ओर सकेत होता है जो जाहिरी (बहिरग) तथा बातनी (अतरग) सबध को त्यागकर की जाती हैं। क्योंकि यह मुजाहदे (दमन) तथा रियाजतें भी ईश्वर की निकटता एव उसके द्वारा समानित होने का साधन होता हैं। "जो मुझमे एक बित्ता निकट हुआ, मैं उससे एक गज़ निकट हो जाता हूँ।"

यदि हिंदवी वाक्यों मे "कान्ह घाट रूधो" अथवा "कन्हैया मारग रोकौ"

अथवा इसी प्रकार के वाक्यो का प्रयोग हो तो इससे इबलीस के नाना प्रकार से मार्ग-भ्रष्ट करने की ओर सकेत होता है।

छद

माशूक ने मुझ से कहा कि "मेरे द्वार पर बैठ जा और जिसको मेरा रहस्य ज्ञात न हो उसे भीतर प्रविष्ट न होने दो।

और कभी (अल्लाह के जलाल (ऐश्वर्य) सबधी वाक्यों की ओर सकेत होता है और यह कोप से सबधित होते हैं।

छद

ईश्वर के अस्तित्व का नूर (ज्योति) उन वस्तुओं में प्रवेश नहीं करता जिन्हें उसने प्रकट किया है क्योंकि उसके जलाल (ऐश्वर्य) सबधी वाक्य कोप से परिपूर्ण होते हैं।

बुद्धि को त्याग दे और ईश्वर के साथ सर्वदा रहा कर क्योंकि चिमगादड़ की आखें सूर्य का सामर्थ्य नहीं रखतीं।

और कभी इन वाक्यों के दूरबाश[१९] की ओर सकेत होता है "ढूढने वाला लौटा दिया गया तथा द्वार बद कर दिया गया"।

छंद

जब तक तुम पैरों तथा सिर से दौड़ रहे हो, अपने मार्ग पर चलो। तुम इस गली के पुरुष नहीं हो।

जब तक अज़ल (अनादि) तथा अबद (अनत) एक स्थान पर नहीं मिलते, तो कुछ अधिक विचार न करो क्योंकि द्वार बद है।

और कभी इनसे सासारिक माशूक़ो पर आसक्त होने की ओर सकेत होता है। जो इबादत (उपासना) तथा सदाचार में बाधक होते हैं।

छद

किंतु जब तक तुम प्रियतम के होंठ तथा प्याले की अभिलाषा करते हो तब तक इस बात की लालसा न करो कि दूसरे कार्य भी कर सकोगे।

और कभी इसके विरुद्ध डाकुओ की शुद्धि से तात्पर्य होता है और उनका अर्थ यह है कि हमने सासारिक माशूको से आनद प्राप्त न किया।

यदि हिंदवी वाक्यों मे "दान" का उल्लेख हो तो ईश्वर की इबादत (उपासना) मे बदों (दासों) मे निष्ठा की माग की ओर सकेत होता है। "निष्ठावान बड़े सकट मे हैं। कर्म में लक्ष्य की सत्यता की ओर सकेत होता है।" खुदा सच्चो से उनकी सच्चाई के संबध में प्रश्न करेगा। किसी आलिम (आचार्य) तथा आबिद (उपासक) को निष्ठा के बिना मुक्ति नहीं, तथा नीयत (अभिप्राय) की सत्यता के बिना छुटकारा नहीं। शरीअत का आदेश है कि सत्यता ही मुक्ति प्रदान करती है। सक्षेप में जो नक्द धन तथा सामग्री तेरे पास है उसके लिय एक कसौटी, परखनेवाला अथवा परीक्षा करनेवाला अवश्य होगा। "छल मत कर कारण कि परखने वाला बड़ा जानकार है।" यह जानकार परखनेवाला किसी नक्द का परीक्षा किए बिना नहीं छोड़ता किंतु एक उपाय है कि तू समस्त नक्दी को सबध विच्छेदन के अनुसार तौहीद (एकेश्वरवाद) को सौंप दे और समस्त सामग्री खजानों, कर्मों तथा दशाओं से दरिद्र बनकर (त्यागकर) निकल आ। उस समय तेरे पास कुछ न होगा और उजाड़ ग्राम पर कर नहीं लगाया जाता।

छंद

जब तू दीन अवस्था को प्राप्त हो जाएगा तो तुझ पर कोई अर्थ दड न होगा। और मुझसे सुन कि दीन अवस्था वालो का कोई निशाब[१७] नहीं।

यदि हिंदवी वाक्यों में "लार जबान कोहीं" (?) अथवा इस प्रकार का होगा—"काहू की बाह मरोरी, काहू के कर चूरी फोरी, काहू की मटकिया डारी, काहू की कचुकी फारी (फाड़ी)," तो इससे उस व्यग्य के अर्थ की ओर सकेत होता है 'क्या उसमें ऐसा खलीफ़ा बना रहा है जो इस भूमि पर फ़साद करेगा और बड़ा रक्तपात करेगा।" कभी-कभी इसमें नाना प्रकार के अप्राकृतिक कार्यो तथा चमत्कारों की ओर संकेत होता है जो मनुष्य की विशे

पता है। कभी इस आयात के अर्थ की ओर सकेत होता है 'तेरे समान की शपथ मैं इन सबको मार्गभ्रष्ट करूँगा'[१८] कभी इस आयत के अर्थ की ओर सकेत होता है 'नित्य वह एक नई शान मे होता है।' अर्थात् एक ही गुरु है जो कि छाया तथा विचार के परदे के पीछे अपने परस्पर विरोधी रूप तथा आकृति दिखाता है।

छद

चद्रमा तथा माशूक भिन्न भिन्न शान तथा दशाएँ प्रकट करते हैं किंतु उस प्राण (प्रियतम) की शान प्रत्येक शान मे लक्षित है।

यदि हिंदवी वाक्यो मे जसोधा (यशोदा) के मुख से इस प्रकार के वाक्यों का उल्लेख हो 'यह बालक मेरा कछू न जान' या कहे 'कन्हैया मेरो बारो तुम बाद लगावत खोर' तो इससे इन दो आयतो के अर्थ की ओर सकेत होता है 'मनुष्य निर्बल उत्पन्न किया गया है' और निस्संदेह वह अत्याचारी तथा मूर्ख है।

खोज तथा मनन करने वाले कहते हैं कि अल्लाह ने अपने बदों के साथ अत्यधिक अनुकम्पा के कारण उन बदों को निर्बलता तथा मूर्खता से सबधित किया है जिससे यदि इबादत (उपासना) करने मे कोई कमी करे अथवा नफ़्स (वासना) एव कामनाओ के पीछे पड़कर उसकी दशा में कोई दोष आ जाय तो अल्लाह की अनुकंपा की जबान तुरत उसकी ओर से प्रत्युत्तर प्रस्तुत कर देगी और वह अपनी दया की जबान से कह देगा 'मैंने उसको पूर्व ही से निर्बल, अधकार मे एवं मूर्ख पैदा किया है।

'तेरी दया एव अनुकपा सबकी ओर से प्रत्युत्तर प्रस्तुत कर देती है।'

यदि हिंदवी रचनाओ मे 'ग्वाल गायन चरावे' अथवा इसी प्रकार के वाक्य कहे तो इससे इस बात की ओर सकेत होता है कि सतान गउओं तथा बकरियो के समान हैं और घरवाले चरवाहे के समान हैं। 'तुम मे से प्रत्येक चरवाहा है और प्रत्येक से उसकी प्रजा के विषय में प्रश्न किया जायगा।' कभी इस बात की ओर सकेत करते हैं 'शरीर की भुजाएँ तथा अंग पशुओं के समान हैं तथा सन्मार्ग पर ले जाने वाली बुद्धि चरवाहे के समान है।' कभी इस अर्थ की ओर सकेत होता है कि 'फ़साद पैदा करने वाले बकरियों के समान हैं और हृदय उनका रक्षक है।' हजरत अली ने कहा है 'मैं तथा मेरा नफ़्स केवल बकरियों के चरवाहे के समान हैं। जब मैं एक ओर से उनकी रक्षा करता हूँ तो वे दूसरी ओर से भागती हैं। 'कभी उम्मत

(अनुयायी) को बकरियों के समान कहते हैं और नबियों को रक्षक के स्थान पर समझते हैं और कभी इस अर्थ की ओर सकेत करते हैं कि अल्लाह कसरत (प्रचुरता) को वहदत (केवल) में पालता है और वहदत कसरत मे चलती फिरती दृष्टिगत होती है। यह मोती के समान है और वह बहने वाली नहर के समान।

छद

सर्वदा अल्लाह की अनुकंपा अपनी शान मे प्रकाश दिखाती तथा प्रकट रहती है।

उस ओर से वह आविष्कार करता तथा परिपूर्ण रहता है तथा इस ओर से वह प्रत्येक समय परिवर्तनशील रहता है। यदि ऐसे अवसरो पर तुम्हारे हृदय मे यह सदेह उत्पन्न हो कि 'ग्वाल' शब्द से अल्लाह की वहदानियत (अद्वैत-भाव) की ओर सकेत करना अथवा हादिस (पैदा होने वाली चीजो) से कदीम (जो आरभ से हो) का अर्थ समझना अप्रमाणित बात है तथा इसका कोई प्रमाण नहीं, तो इसका मैं उत्तर दूंगा कि इस समूह (सूफियों) के निकट जो कुछ भी मजाजी ससार (इस दुनिया) में होता है उसके लिये नि.सदेह एक हकीकत (वास्तविकता) है। अत. यदि मजाज (काल्पनिक) मे हकीकत (वास्तविक) की ओर सकेत करें तो कोई आपत्ति नहीं क्योंकि मजाज, हकीकत का पुल है और विशेष कर इस समूहवाले (सूफ़ी) कहते हैं कि जो कुछ भी मजाज मे है वह सब हकीक़त के नाम हैं। "उसी ईश्वर की शपथ जिसका कोई नाम नहीं। तू उसे जिस नाम से भी पुकारेगा वह प्रकट होगा।"

यदि हिंदवी वाक्यो मे कहें "काँधे कमरिया" या "पॉयन पाँवरे' तो इससे फ़कीरी तथा जुहद (वैराग्य) के वस्त्र की ओर सकेत होता है जो आरिफ़ (ज्ञानी) ही धारण करते हैं।

यदि हिंदवी रचनाओं मे "मोर मुकुट सीस धरे" का उल्लेख हो तो इससे इस बात की ओर सकेत होता है कि मनुष्य ने 'अमानत'[१] का भार स्वीकार कर लिया है और उसकी व्याख्या इस आयत मे है, "मनुष्य ने उस अमानत को उठा लिया।' कभी इससे खलीफ़ा बनाए जाने के मुकुट की ओर सकेत होता है "मैं भूमि पर अपना खलीफ़ा बनाना चाहता हूँ' इसका प्रमाण है। कभी नामों के ज्ञान की ओर सकेत होता है, "खुदा ने

मनुष्य को समस्त नामों की शिक्षा दी", यह आयत इसी विषय की ओर सकेत करती है। व्याख्या करनेवाले* का छद।

छद

नामो का ज्ञान शहशाही ताज है। यह ताज आदम के शीश पर बड़ी सजावट से रखा गया है।

यदि हिंदवी वाक्यो में **गोवर्द्धन धारी** कहे तो इससे लोगो का विचार है कि ईश्वर की अमानत (धरोहर) के भार की ओर सकेत होता है जो काफ[२०] पर्वत से भी भारी है। मनुष्यों में इस भार के उठाने वाले हमारे रसूल सल्लम (मुहम्मद साहब) हैं, जैसा इमाम खाकानी[२१] ने कहा है।

"वह मनुष्य के शरीर में (ईश्वर की) धरोहर के योग्य, वह समाचारो के ससार (इस ससार) में रूहानियत (आध्यात्म) पर कार्य करने वाला है। इन वाक्यों से मुहम्मद साहब का जकात[२२] का भार उठाना भी समझा जा सकता है जैसा इस आयत में हैं, "तुझे जो आदेश दिया गया उस पर दृढ रह"।

यदि हिंदवी वाक्यों में कहें **"श्याम सुदरिया सॉवरो"** तो इससे मनुष्य के अधकार एव अज्ञानता की ओर सकेत होता है। इसमें एक उत्तम बात यह है कि यह दोनों शब्द अतिशयोक्ति के हैं। यह नियम है कि जब कोई वस्तु अपनी सीमा से आगे बढ जाती है तो अपने विरुद्ध वस्तु के समान हो जाती है। इसी कारण इन शब्दों को प्रकाश तथा ज्ञान के समान बना दिया गया है।

छद

अधकार एव अज्ञानता प्रकाश के विपरीत हैं किंतु ये ईश्वर के प्रमाण को प्रकट करते हैं जब दर्पण धुधला होता है तो मनुष्य के मुखको अन्य का मुख दिखाता है।

कभी इन शब्दों मे फकीरी के अधकार की ओर सकेत होता है जो मनुष्य के लिये समस्त प्राणियों की अपेक्षा उसकी श्रेष्ठता एव महत्ता के साधन हैं। "फकीरी मेरे लिये गर्व की बात है"—का सकेत इसी ओर है।

छद

मनुष्यों तथा जिन्नों की योग्यता को प्राप्त कर लिया है और फकीरी की तलवार द्वारा बादशाही प्राप्त की है।

---

* मीर अब्दुल वाहिद के छद

यदि हिंदवी वाक्यो मे "अंतरजामी (अन्तर्यामी) का उल्लेख हो तो इसमे इरफ़ान वालो (ज्ञानियों) के हृदय की ओर सकेत होता है जो प्रकाशमान है और वस्तुओ की आतरिक बातो का ज्ञान प्राप्त कर लेते है तथा बुद्धि द्वारा समझ जाते है।

यदि हिदवी वाक्यो मे "पीत पिछौरी" का उल्लेख हो तो इससे प्रेमियो के मुख के रग की ओर सकेत होता है जो पीला होता है।

छंद

तेरे प्रेम की कीमिया से मेरा मुख सोना बन गया। हा, तेरी अनुकंपा के आशीर्वाद से धूल भी सोना बन जाती है।

और कभी कभी इन शब्दों से ईश्वर के ऐश्वर्य की चादर समझी जाती है। "आकाश तथा पाताल मे ऐश्वर्य उसके लिये उचित है" एव "और इन (आकाश तथा पाताल) मे वही पूर्णरूपेण दृष्टिगत हो सकता है। ऐश्वर्य मित्र के मुख का आलोक है और उसका प्रदर्शन चादर बिना सभव नहीं।"

ऐश्वर्य ही ईश्वर के अस्तित्व के प्रकट होने का स्थान है। नूर (ज्योति) की चादर को देखो, वह स्वय नूर (ज्योति) ही होती है।

अध्याय (३)

यह अध्याय उन वाक्यों के अर्थ के संकेत से संबंधित है जो कुछ अन्य स्थानों पर 'ध्रुवपद' एवं 'विशुनपद' (विष्णुपद) के अतिरिक्त प्रयोग में आते हैं।

यदि हिंदवी में सयाला (?) व मॉह व पाला' अथवा उनसे संबंधित शब्दों का प्रयोग हो तो उनसे (इस विषय की ओर) संकेत होता है कि फ़क़ीरों के अहवाल (आध्यात्मिक दशायें) उनके अधिकार में होते हैं और उनसे तजल्लियात (ज्योतियां) प्रकट होती रहती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'महाला' व कौंच का उल्लेख हो तो इससे उन चिह्नों की ओर संकेत होता है जो भूत काल एवं बीते हुए समय की स्मृति दिलाते हैं और कभी उन बलदियों की ओर संकेत करते हैं जो इस समय अधिकार में हैं तथा वर्त्तमान हैं।

यदि हिंदवी रचना में कहें, 'सूर सप्त (सौर सपेती ?) ते जाड़ न जाय' अथवा इसी प्रकार की अन्य चर्चा हो तो इनसे इस बात की ओर संकेत होता है कि जो उत्कृष्ट अहवाल (आध्यात्मिक दशायें) व्यतीत हो चुके हैं उनको प्रयत्न तथा किसी उपाय द्वारा पुनः प्राप्त करना सम्भव नहीं और किसी युक्ति अथवा छल द्वारा उन तक पहुँचना असंभव है अपितु उन दशाओं का प्राप्त करना केवल परमेश्वर की अनुकम्पा पर निर्भर है।

छंद

सर्वप्रथम तुम समय को बहुमूल्य समझो। समय के मोती का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। सुअवसर यदि किसी के हाथ से निकल जाय तो फिर नहीं लौट सकता।

यदि हिंदवी रचनाओं में कहें 'जाड़ लगत मरत, कंठ लाग प्यारी' तो इससे इस बात की ओर संकेत होता है कि जब प्रेम की शक्ति ठंडी हो जाती है तथा वियोग की दशा होती है तो वह प्रियतम का आलिंगन करने की आकांक्षा करता है। प्रियतम से आलिंगन होने का तात्पर्य यह है कि आशिक अपने व्यक्तित्व तथा गुणों को नष्ट करदे क्योंकि सच्चे आशिक के गुण तथा व्यक्तित्व उसको ठंडा बनाने तथा प्रियतम से परदे में रखने का कारण

होते हैं। अतः आलिंगन होने की आकांक्षा का यही अर्थ है कि अपने व्यक्तित्व तथा गुणों को नष्ट कर दे।

छंद

मधुशाला वाला (मस्त) बन जाना ही अपने नफ्स (वासना) के अधिकार से छूटना एवं मुक्त होना है। खुदी (अहंभाव) कुफ्र है। यदि तू पवित्र है (धर्मनिष्ठ) है तो इस बात को ध्यान में रख।

यदि हिंदवी वाक्यों में इस प्रकार की चर्चा हो

'पवन झनमका सींव जनाया। (?)
कामी कंत बहुरि किन लाया॥'

तो इनसे समय की उदासीनता तथा संसार के अत्याचारों की ओर संकेत होता है। क्योंकि सालिक (साधक) को अत्याचारियों के अत्याचारों तथा निर्दयी लोगों की निर्दयता के हाथों उनका सामना करना पड़ता है और सालिक (साधक) अल्लाह की रिजा (संतोष) से संतुष्ट होकर ईश्वर की शरण में आ जाता है और अपनेमें यह गुण उत्पन्न कर लेता है कि पूर्णतया अपने आपको ईश्वर को समर्पित कर दे जिससे इन अत्याचारों तथा दुःखों से बचकर निकल जाय।

यदि हिंदवी वाक्यों में **'पंचम व बसंत'** तथा उनसे संबंधित शब्दों का उल्लेख हो तो इससे अपने व्यवहार में अपने स्वभाव को संयमी बनाए रखने की ओर संकेत होता है। चरित्र में स्वभाव का संयम उस समय उत्पन्न होता है जब स्वभाव में सभी नैतिकतापूर्ण गुण मिश्रित हो जाएँ और बनावट तथा विरोध की आदत समाप्त हो जाय। अल्लाह ने कहा है 'तेरे रब की शपथ ये लोग उस समय तक ईमानवाले न होंगे जब तक अपने झगड़े की बातों में तुझको अपना हाकिम न स्वीकार कर लें, तो फिर जो तू निर्णय कर देगा उसमें अपने नफ्सों (वासनाओं) के लिये कोई हानि न पाएँगे और उस निर्णय पर पूर्णतया संतुष्ट रहेंगे।' अर्थात् इनका ईमान (इस्लाम में विश्वास) उस समय पूर्ण होगा जब कि 'हे मुहम्मद! ये लोग तुझे अपना शासक स्वीकार कर लेंगे और तू जो आदेश देगा उससे अपने हृदय में किसी असंतोष तथा भार का अनुभव न करेंगे और पूर्णतया तेरे आदेशों के समक्ष शीश नवा देंगे, और यह ध्यान रखो कि मनुष्य का स्वभाव, चरित्र में उस समय संयमी बनता है जब कि नफ्स (चेतना) में

नफ़्से मुतमइना (सतुष्ट चेतन) बनने के गुण पैदा हो जाय। इस दशा के लिये हिंदवी मे 'वसंत' शब्द का प्रयोग करते हैं। कभी वसत तथा उसके समानार्थक शब्दो से प्रियतम के मुख के रग की ओर सकेत करते है।

छंद

उस माधुर्य भाववाले प्रियतम ने जब मेरे मुख को स्वर्ण के समान पाया तो उसने कहा कि अब तू मुझसे सभोग की आशा न कर, क्योंकि देखने मे तू मेरे विरुद्ध है। तू खिज़ा (हेमत का रग रखता है और मैं बहार (वसंत) का रग रखता हूँ।

इस शब्द से कभी आदम एव मनुष्यों के जन्म के समय की ओर भी सकेत करते हैं और कभी रसूल सल्लम (मुहम्मद साहब) के प्रकट होने के समय का ओर भी सकेत करते हैं।

छंद

हम गुलाम के समान हैं तथा ससार बहार (वसत) के समान है। आज तू खिला हुआ है और कल भूमि पर गिरा पड़ा है।

यदि हिंदवी वाक्यों में फूल वा पुहुप की चर्चा हो तो इन शब्दो से यह वास्तविक अर्थ पर्याप्त है कि 'उनसे रसूल का पसीना समझा जाय।'

छंद

हे फूल मैं तुझसे प्रसन्न हूँ कि तू किसी को सुगध रखता है। हे सरो मैं तुझ से प्रसन्न हूँ कि तेरी आकृति अमुक प्रिया से मिलती जुलती है।

और कभी इन शब्दों से इस्लाम के गुणों की ओर सकेत होता है जो कि जन्म से ही प्रत्येक मनुष्य के साथ होते हैं। "प्रत्येक बालक का जन्म प्रकृति के अनुसार इस्लाम पर होता है।" कभी इससे मोमिनो (धर्मनिष्ठ मुसलमानो) के नूर (ज्योति) की ओर सकेत होता है जो रसूल सल्लम (मुहम्मद साहब) के नूर का प्रतिबिंब है। "मै अल्लाह के नूर से उत्पन्न हुआ हूँ और मोमिन मेरे नूर से पैदा हुए हैं।"

और कभी इन शब्दों से विविध भाति की नेकियों (सदाचारों) तथा इबादतो (उपासनाओ) के नूर (ज्योति) की ओर सकेत होता है। इन इबादतो (उपासनाओं) के सुदर मुख पर पाप एक तिल के समान होता है। कहा जाता है नि.सदेह ईश्वर तुझे इस कारण पाप मे ग्रस्त रखता है कि

तुझपर इबलीस की बुरी दृष्टि का प्रभाव न हो जाय, क्योंकि जब तेरा कर्म तथा इबादत (उपासना) उत्कृष्ट होते हैं उस समय तेरे एक गधे का सिर पैदा कर दिया जाता है जिससे तुझको बुरी दृष्टि न लग जाय। (इस संबध में व्याख्या करनेवाले का छंद इस प्रकार है—)

छंद

यदि तेरे कर्म का उद्यान हरा भरा है तो मारेफत (ज्ञान) के द्वारा सीने में बहार पैदा हो जाएगी। किंतु बुरी दृष्टि से रक्षा के लिये दो एक पाप उत्पन्न हो जाएँगे जो गधे के सिर के स्थान पर होगे।

यदि हिंदवी वाक्यों में "हार व हमेल" का उल्लेख हो तो उससे योग्यता के धागे में उत्कृष्ट चरित्र, कर्म एवं नेकियों के एकत्र होने की ओर संकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में "चौसर हार" का उल्लेख हो तो इससे उन चार मकामों (लक्ष्यों) की ओर संकेत होता है। "शरीअत मेरे कथन हैं, तरीकत मेरे कार्य हैं। हकीकत मेरे अहवाल का नाम है तथा मारेफत मेरी पूंजी है।"

यदि हिंदवी वाक्यों में 'सेहरा' शब्द की चर्चा हो तो उससे उस उत्कृष्ट मकाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जो 'तहज्जुद' पढनेवालो तथा रात्रि में जागनेवालों को प्राप्त होता है। "और रात्रि में सुन्नती नमाज़ो के समान तहज्जुद पढा कर कि ईश्वर तुझे उत्कृष्ट स्थान पर शीघ्र उन्नति देगा।"

यदि हिंदवी रचनाओं में यह दोहरा आये "हौं बलिहारी साजनॉ साजन मुझ बलिहार" तो इससे आशिके हकीकी एवं माशूके मज़ाज़ी की विशेषताओं की ओर संकेत होता है और ये विशेषतायें अभिलाषा एवं आवश्यकतायें हैं।

"हमें उसकी आवश्यकता थी और उसको हमारी अभिलाषा थी।"

"हौं साजन सिर सेहरा साजन मुझ गलहार" यहा सेहरा शब्द से अनिवार्य इबादतों (उपासनाओं) द्वारा ईश्वर की निकटता की ओर संकेत होता है और 'हार' का अभिप्राय नवाफ़िल[२] द्वारा ईश्वर की निकटता है। इसे सावधानी से समझ लो।

यदि हिंदवी वाक्यो मे 'पुर' का उल्लेख हो तो उससे आत्मबलिदान एवं दान की प्रकृति उत्पन्न करनेवाले की ओर संकेत होता है "और ये लोग अपने न.फ्स (वासना) का बलिदान करते हैं यद्यपि उन्हें स्वयं आवश्यकता है।"

छंद

दान की निहित विशेपता वृक्ष से सीखो, जो तुम्हें पत्थर मारे, तुम उसे फल प्रदान करो।

यदि हिंदवी वाक्यो में "नौलासी" का उल्लेख हो तो इससे उन बहुत सी दशाओ एवं ईश्वर की अनेक अनुकम्पाओ की ओर संकेत किया जाता है जो अत्यधिक संख्या में प्राप्त होती रहती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में "कोकिला" का उल्लेख हो तो इससे निष्ठावान् प्रेमियों की जबान की ओर सकेत होता है क्योकि बुद्धिमत्ता के स्रोत हृदय मे उनकी जबान द्वारा निकलते रहते हैं और हाल (मूर्च्छा) से विवश होने के समय यह आयत उनकी सहायक होती है। "अल्लाह ईमानवालो को पक्के तथा स्थायी वचन द्वारा दृढ एव पुष्ट रखता है।"

यदि हिंदवी वाक्यों में "भंवर, भौंरा" अथवा इसी प्रकार के नामो का उल्लेख हो तो इससे मनुष्य के नफ्स (वासना) के अंधकार की ओर सकेत होता है, कारण कि उसका पहचानना अल्लाह की मारिफ़त (ज्ञान) का साधन है। "जिसने अपने नफ्स को पहचान लिया उसने अपने ईश्वर को पहचान लिया।"

यदि हिंदवी वाक्यों में 'मालती" की चर्चा हो तो इसका अभिप्राय मानव सबधी तत्वों के उन पुष्पों से होता है जो इस आयत के मोदप्रद सुगधित पवन द्वारा सूरत (ससार) के उपवन में खिलते हैं कि "हमने उस आदम में अपनी रूह फूंको।" (व्याख्या[1] करने वाले के छद—)

छद

सूरत (ससार) के उपवन में यदि यह पुष्प न खिलता तो उपवन का गुरु अपना रग किस वस्तु मे प्रकट करता ? "परमेश्वर ने मनुष्य को अपने रूप के अनुसार उत्पन्न किया।"

छंद

उस सबसे बडे बादशाह ने दृढतापूर्वक द्वार बद कर लिए थे। सहसा उसने आदम का वस्त्र धारण किया तथा द्वार पर आ गया।

वह गीत जो विशुनपद (विष्णुपद) के इस राग मे गाया गया है "वसंत नव मेदिनी फूलन छाइना" छद के विषय की ओर सकेत करता है।

---

१ मीर अब्दुल वाहिद के छद

तुझपर इब्लीस की बुरी दृष्टि का प्रभाव न हो जाय, क्योंकि जब तेरा कर्म तथा इबादत (उपासना) उत्कृष्ट होते हैं उस समय तेरे एक गधे का सिर पैदा कर दिया जाता है जिससे तुझको बुरी दृष्टि न लग जाय। (इस संबंध में व्याख्या करनेवाले का छंद इस प्रकार है—)

छंद

यदि तेरे कर्म का उद्यान हरा भरा है तो मारेफत (ज्ञान) के द्वारा सीने में बहार पैदा हो जाएगी। किंतु बुरी दृष्टि से रक्षा के लिये दो एक पाप उत्पन्न हो जाएँगे जो गधे के सिर के स्थान पर होंगे।

यदि हिंदवी वाक्यों में "हार व हमेल" का उल्लेख हो तो उससे योग्यता के धागे में उत्कृष्ट चरित्र, कर्म एवं नेकियों के एकत्र होने की ओर संकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में "चौसर हार" का उल्लेख हो तो इससे उन चार मकामों (लक्ष्यों) की ओर संकेत होता है। "शरीअत मेरे कथन हैं, तरीकत मेरे कार्य हैं। हकीकत मेरे अहवाल का नाम है तथा मारेफत मेरी पूंजी है।"

यदि हिंदवी वाक्यों में 'सेहरा' शब्द की चर्चा हो तो उससे उस उत्कृष्ट मकाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जो 'तहज्जुद' पढनेवालों तथा रात्रि में जागनेवालों को प्राप्त होता है। "और रात्रि में सुन्नती नमाज़ों के समान तहज्जुद पढा कर कि ईश्वर तुझे उत्कृष्ट स्थान पर शीघ्र उन्नति देगा।"

यदि हिंदवी रचनाओं में यह दोहरा आये "हौं बलिहारी साजनाँ साजन मुझ बलिहार" तो इससे आशिके हकीकी एवं माशूके मजाज़ी की विशेषताओं की ओर संकेत होता है और ये विशेषतायें अभिलाषा एवं आवश्यकतायें हैं।

"हमें उसकी आवश्यकता थी और उसको हमारी अभिलाषा थी।"

"हौं साजन सिर सेहरा साजन मुझ गलहार" यहां सेहरा शब्द से अनिवार्य इबादतों (उपासनाओं) द्वारा ईश्वर की निकटता की ओर संकेत होता है और 'हार' का अभिप्राय नवाफ़िल[2] द्वारा ईश्वर की निकटता है। इसे सावधानी से समझ लो।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'पुर' का उल्लेख हो तो उससे आत्मबलिदान एवं दान की प्रकृति उत्पन्न करनेवाले की ओर संकेत होता है "और ये लोग अपने नफ्स (वासना) का बलिदान करते हैं यद्यपि उन्हें स्वयं आवश्यकता है।"

छंद

दान की निहित विशेषता वृक्ष से सीखो, जो तुम्हें पत्थर मारे, तुम उसे फल प्रदान करो।

यदि हिंदवी वाक्यों में "नौलासी" का उल्लेख हो तो इससे उन बहुत सी दशाओं एव ईश्वर की अनेक अनुकपाओं की ओर संकेत किया जाता है जो अत्यधिक संख्या में प्राप्त होती रहती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में "कोकिला" का उल्लेख हो तो इससे निष्ठावान् प्रेमियों की जबान की ओर संकेत होता है क्योंकि बुद्धिमत्ता के स्रोत हृदय से उनकी ज़बान द्वारा निकलते रहते हैं और हाल (मूर्च्छा) मे विवश होने के समय यह आयत उनकी सहायक होती है। "अल्लाह ईमानवालो को पक्के तथा स्थायी वचन द्वारा दृढ एव पुष्ट रखता है।"

यदि हिंदवी वाक्यों मे "भंवर, भौंरा" अथवा इसी प्रकार के नामों का उल्लेख हो तो इससे मनुष्य के नफ्स (वासना) के अंधकार की ओर सकेत होता है, कारण कि उसका पहचानना अल्लाह की मारिफ़त (ज्ञान) का साधन है। "जिसने अपने नफ्स को पहचान लिया उसने अपने ईश्वर को पहचान लिया।"

यदि हिंदवी वाक्यो में "मालती" की चर्चा हो तो इसका अभिप्राय मानव सबधी तत्वो के उन पुष्पो मे होता है जो इस आयत के मोदप्रद सुगधित पवन द्वारा सूरत (ससार) के उपवन में खिलते हैं कि "हमने उस आदम में अपनी रूह फूंकी।" (व्याख्या[१] करने वाले के छद—)

छद

सूरत (ससार) के उपवन में यदि यह पुष्प न खिलता तो उपवन का गुरु अपना रग किस वस्तु में प्रकट करता ? "परमेश्वर ने मनुष्य को अपने रूप के अनुसार उत्पन्न किया।"

छंद

उस सबसे बड़े बादशाह ने दृढतापूर्वक द्वार बंद कर लिए थे। सहसा उसने आदम का वस्त्र धारण किया तथा द्वार पर आ गया।

वह गीत जो विशुनपद (विष्णुपद) के इस राग मे गाया गया है "बसंत सब मेदिनी फूलन छाइया" छद के विषय की ओर सकेत करता है।

---

१ मीर अब्दुल वाहिद के छद

छंद

कहते हैं कि संसार काटे के समान है अथवा उद्यान के रूप में है। ईश्वर का ऐश्वर्य अत्यधिक है क्योंकि इस आयत द्वारा "मैं निःसन्देह तुम्हारे साथ हूँ", सभी ससार को उद्यान समझते हैं

"तरवर भेख फिर आया" द्वारा इस छद की ओर सकेत होता है।

जब अवगुण परिवर्तित हो गए तो जितनी कठिनाइया थीं सब बदल गईं।

जो गीत विपुन पद (विष्णुपद) के इस राग में गाया गया है **"मेरो चोला झटका कुंवर संग"** से इस बात की ओर सकेत होता है कि अधिकार तथा आधिपत्य के आवरण जो मेरे प्रत्यक्ष व्यक्तित्व से सबधित हैं वे परम प्रियतम के सगीत के समय उठ गए और नीचे गिर गए।

छंद

इबादत मे, खड़ा होना, बैठना, तकबीर[3] कहना तथा नीयत[4] करना माशूके हकीकी की सगति के समय नष्ट हो जाते हैं।

"हौं चाचर खेलों सरब अग" से इस बात की ओर सकेत होता है कि अब ईश्वर का मारेफ़त (ज्ञान) का नृत्य, जिसे हिंदवी में **चाचर** कहते हैं मुझको इस अस्तित्व के ससार से प्राप्त हुआ है क्योंकि अधिकार तथा आधिपत्य का परदा एक अस्थायी वस्तु थी, उसके उठ जाने के उपरात 'ऐनुलयकीन'[5] की आख से दिखाई दे गया कि मेरे अस्तित्व के कणों में से कोई कण भी परम प्रियतम के हिलाए बिना नहीं हिलता अपितु उसी के अधिकार पर निर्भर एव अवलम्बित है। "वह परम प्रियतम जिस प्रकार चाहता है उसको हिलाता है और उसीके द्वारा अस्तित्व के कण हिलते तथा नृत्य करते हैं। (व्याख्या करनेवाले के छद*)

छद

मेरे अस्तित्व के कणों का नृत्य उसीके कारण है और मेरे व्यक्तित्व के कणों का हिलना उसीके ओर से है।

यदि हिंदवी वाक्यों में इस प्रकार के लेख हों **"काची कलियां न तोर मुरझ गईं डालियां"** तो इससे इस विषय की ओर सकेत होता है कि मारेफ़त (ज्ञान) के रहस्य की कोंपलें तथा इरफान (ज्ञान) के भेदों की कलिया अभी तक कच्ची हैं। तथा अभी तक 'एनुलयकीन' के पुष्प की जड़ मे आदि काल से चलनेवाली मधुर पवन द्वारा मारेफत (ज्ञान) तथा बुद्धि की भूमि

---

* मीर अब्दुल वाहिद के छंद

ने खिल नहीं पाई हैं, इन कलियों तथा कोंपलों को मत उठाओ और खोल कर न रखो, जिससे उस फूल की जड़ की डालिया आपस में उलझ न जायं और उन्नति तथा बढने से रुक न जाय ॥

"दोयन हाथ न लावा पावा गालिया" से इस ओर संकेत होता है कि दैवी रहस्य तथा ईश्वर की इच्छा के भेद जो बुद्धि तथा शरीअत के कारण निहित हैं, और यदि तुझको विलायत (सतलोक) के नूर (ज्योति) द्वारा उनका ज्ञान प्राप्त हो जाय तो तुझे उसमें हस्तक्षेप न करना चाहिए। अपने ज्ञान के अनुसार कार्य न कर, क्योंकि यदि तुझ पर जिनदीक एवं मुलहिद अथवा मुरतिद (अधर्मी) होने का आरोप लग जायगा तो तू हत्या के योग्य कर दिया जायगा।

छंद

कभी किसी सभा में सच्चे इश्क के रहस्य का उल्लेख मत कर। तू ने देखा है कि मनसूर हल्लाज ने एक संकेत बताया और वह सूली पर चढा दिया गया।

यदि कोई मस्ती में उस इश्क का रहस्य कह जाए तो तरीक्त में उसका बदला सूली पर चढना है।

यदि हिंदवी में इस प्रकार का लेख हो "इंह वन फूली पुंडरिया उह वन तीस' तो इससे उस बात की ओर संकेत होता है कि संसार में काम तथा वासना का उपवन और लोभ एवं लोलुपता के उद्यान खिले हुए हैं और वहां अथवा उकबा (परलोक) के मैदान में स्वर्ग के वरदान तथा जन्नत के स्वाद के उद्यान बहार पर हैं, अतः यहां काम तथा वासना और वहां वरदान एवं स्वाद हैं। इनसे क्या प्राप्त हो सकता है। इनकी ओर आकर्षित होना आशिकों की प्रतिष्ठा के अनुसार उचित नहीं।

छंद

लोक तथा परलोक आशिक के लिये आवरण हैं उनकी ओर आकर्षित होना आशिकों के लिये उचित नहीं।

'ले चल रानी के डुलहा अपने देस" इससे इस विषय की ओर संकेत होता है कि आशिकों का उद्योग, आशिकों, मुर्शिदों, तथा मुर्शिदों से करता है कि मुझे किसी अन्य संसार में डाल दो और इन सब से मुक्ति दिला दो और लोक तथा परलोक किसी की अभिलाषा मत करो।

छद

हमारे लिये इस ससार से पृथक् एक अन्य ससार है और स्वर्ग नरक के अतिरिक्त एक अन्य स्थान भी है।

इस बात का इस पूर्वी गीत में भी उल्लेख है **"साजन आओ हमारीं वारीं"**। यह सकेत अजली (अनादि काल से सबधित) निमत्रण की ओर है। अल्लाह शाति के घर की ओर बुलाता है। यह सकेत उसी लोक को ओर है जिसको ओर हमने उपर्युक्त छद में सकेत किया है। और इस हिंदवी पद मे भी इसी सकेत का उल्लेख है।

"हम तन फूलि फूलन फुलवारीं" इससे भी उस लोक की ओर सकेत होता है जो ईश्वर ने चाहा तो उसके निकटवर्ती लोगों को प्राप्त होगा। स्वर्ग जिसमे न हूरें (अप्सरायें) हैं न भव्य भवन बने हैं न दूध है न मधु, उसमें हमारा रब हसता हुआ दिखाई देगा।

छद

अल्लाह निकटवर्तियों का उद्यान विचित्र उद्यान है। वहा प्रत्येक कली के लिये मुस्कान है अपितु "प्रत्येक कली में तू हसता हुआ दिखाइ देता है।

तुझे ज्ञात होना चाहिए कि तुझे ऐसे मनोहर लोक की ओर बुलाते हैं और कहते हैं **"तुझ कारन मैं सेज सवारी"**।

हे मित्र मैंने अपने सभोग के बिछौने को विशेष कर तेरे लिये ही सजाया है। प्रतिष्ठा पर अधिकार रखनेवाले अपनी प्रतिष्ठा को पहचान। मैंने मृत्युलोक को तेरे ही कारण पैदा किया है। 'तू मेरी ओर आ और मैं तेरी ओर आ रहा हूँ।' तुझे ज्ञात है कि मैंने तेरे लिये क्या तैयार किया है? ऐसी वस्तुएँ जिन्हें किसी आख ने नही देखा तथा किसी कान मे नहीं सुना और जिनका किसी हृदय में विचार भी नहीं आया। विशेषकर मैंने अपने व्यक्तित्व को तुझे दे दिया है। 'जिसे उसका स्वामी मिल गया उसे सब कुछ मिल गया' मै तेरे आगमन के कारण पग पग पर न्यौछावर हूँ। तू पग धर कि हम तेरे लिये ही हैं।

छंद

हे मित्र आ जा कि हम तेरे लिये ही हैं। तू हम से अनैक्य भाव मत रख कारण कि हम तेरे मित्र हैं।

तन मन जोवन जिउ वलिहारी—देख कि किस प्रकार हम तुझ पर दया, कृपा तथा अनुकपा प्रकट कर रहे हैं कि **'तन मन'** अर्थात् अतरग

एव बहिरग 'जोबन जिउ' अर्थात् सुंदरता एवं परिपूर्णता 'बलिहारी' विशेषकर तेरे लिये है। 'अल्लाह प्रशंसा के योग्य है, वह विचित्र रहस्य है।'

यदि हिंदवी रचना में आए—

नन्ह नन्ह पात जो अंबली सरहर पेड खजूर।
तिन चढ़ देखों बालमा नियरे बसैं कि दूर।'

तो अंबली तथा खजूर से पवित्र कलमे की ओर संकेत होता है। पवित्र कलमे का उदाहरण पवित्र वृक्ष के समान है। माशूक से निकटता व दूरी का पता लगाने के लिये वृक्ष पर चढ़ने से इस बात की ओर संकेत होता है कि उस सच्चे की चर्चा पाक कलमे पर विजयी हो जाती है। अंबली का तात्पर्य जोड़ तथा घटाव के उल्लेख से है। अर्थात् अल्लाह के अतिरिक्त कोई ईश्वर नहीं है, जैसा कि माशूक का मार्ग देखने के लिए दृष्टि को अंबली के फूल की पंखड़ियों से बाहर निकाल देना चाहिए। जब उस परम प्रियतम की चर्चा इन दोनों उल्लेखों को विजय कर ले तो कभी प्रियतम को निकट देखेगा और कभी दूर औरकभी प्रत्यक्ष देखेगा और कभी न निकट और न दूर और कभी जितना निकट से देखेगा अधिक दूर पाएगा और जितनी ही दूर से देखेगा उतना ही निकट पाएगा क्योंकि जितनी बारीकी अधिक होगी विराव अधिक होगा और कभी आरिफ़ (ज्ञानी) दूरी तथा निकटता के संबंध में संदेह अटक जाता है। मूसा (उन पर सलाम हो) ने प्रार्थना में कहा, 'हे ईश्वर क्या तू मुझसे निकट है या मैं तुझ में हूँ अथवा तू मुझसे दूर है जो मैं तुझको पुकारता हूँ।

और इस सोहू राग में यह गीत 'उठ सुहागिन मुख न जोह छैल खड़ो गल बाहि।' अर्थात् हे महान् आरिफ़ (ज्ञानी) उठ तथा जल्दी कर एव प्रियतम के दर्शन की सपत्ति प्राप्त कर ले। उस प्रियतम ने अपनी समस्त चमक दमक तथा युवावस्था के साथ अनुकंपा की गली में पग रखा है और ध्यान दे रहा है तथा ध्यान की प्रतीक्षा कर रहा है।

"थाल भरी गजमोतिनहि गोद भरी कलियाहि' अर्थात् अनुकंपा के मोती प्रेम के थाल में भर कर तथा दान की कलिया प्रेम के पल्ले में डालकर तेरे निकट लाया है। (व्याख्या करने वाले के छद—)

छंद

सज धज वाला माशूक सैकड़ों गुणों के साथ प्रकट हो रहा है। प्रातःकाल अपनी माशूक़ी की चादर से निकलकर तेरी खोज में आया है।

तेरे लिये अपने पल्लू में मोती रखता है तथा थाल मे मोती भरे हैं। हे मित्र उठ तथा उसका माशूकाना मुख देख।

यदि हिंदवी रचना में इस प्रकार का उल्लेख हो **"मीत चिरातन परिहरी भूली कौन हुलास'** अथवा इसी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हो तो उनसे इस विषय का ओर सकेत होता है—हे दास हमारी प्राचीन दया तथा अनुकम्पा जो आदि काल से तुझे प्राप्त हैं, उनके प्रति कृतज्ञता क उत्तरदायित्व से भी (तूने) मुख फेर लिया है और तू किस वस्तु से प्रसन्न हो गया है। हे मनुष्य तुझको अपने ऊपर दया करनेवाले परमेश्वर के सबध में किस वस्तु ने भ्रम में डाल दिया है ?" मनुष्य तूने हमारी आदि काल से होनेवाली अनुकपाओं को तथा हमारी अनत युग तक होने वाली अतिम दयाओं की भी सुधि न रखी और नफ्स के छल तथा इबलीस की धूतता से प्रसन्न हो गया। यह क्या जीवन है और यह कैसा रहन सहन है।

छद

हे मनुष्य तू प्रत्येक क्षण नित्य नये छल करता है और तेरे प्रत्येक बाल की जड़ में एक इबलीस वर्त्तमान है।

तेरी ऐसी दशा है जो सृष्टि मे बहुत कम पाई जाती है। यह हास का स्थान नहीं अपितु करुणा का स्थान है।

यदि हिंदवी वाक्यों में "अठ्ठारह वनस्पति" (?) का उल्लेख हो तो इसका तात्पर्य १८००० जगत् से होता है और कभी कभी ७२ सम्प्रदायों[६] तथा इसी प्रकार की वस्तुओ की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवीमें **बरखा (वर्षा)** ऋतु का उल्लेख हो तो यह उस प्रेम तथा मारेफत (ज्ञान) की ओर सकेत है जिसका उल्लेख इस हदीस में है "मैने मित्र बनाया इस कारण कि मैं पहचाना जाऊँ।"

यदि हिंदवी वाक्यों में **बदरी** एव इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो उससे उन बादलों की ओर सकेत होता है जिनके सबध में हदीस में आया है "एक अरब ने रसूल अलैहिस्सलाम (मुहम्मद साहब) से प्रश्न किया कि 'जब सृष्टि की रचना नहीं हुई थी, उस समय हमारा रब (ईश्वर कहा था ? रसूल ने उत्तर दिया कि 'वह एक हलके बादल में था जिसके ऊपर तथा नीचे वायु नहीं थी।" और शब्द कोष मे "ग़मास" का अर्थ हलका बादल है। और कभी उन तथ्यों की ओर सकेत होता है जिन्हें दूसरी श्रेणी का सत्य कहा जाता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में मेंह् अथवा उसके समानार्थक शब्दों का उल्लेख हो तो उससे नूर (ज्योति) की वर्षा की ओर संकेत होता है। हदीस में आया है, "अल्लाह ने मखलूक (जीव) को अंधेरे में उत्पन्न किया और फिर उन पर अपने नूर (ज्योति) का एक भाग बरसाया। जिस तक वह नूर (ज्योति) पहुँच गया वह सन्मार्ग पर आ गया और जो चूक गया वह मार्ग भ्रष्ट तथा विद्रोही हो गया।"

मआक् में लिखा है, "प्रकट होने के प्रातःकाल ने श्वास ली। सदाचार की पवन चली। दया की नदी में लहरें उठीं और अनुकंपा की वर्षा ने योग्य भूमि पर मेंह बरसाया कि "फिर उसने अपने नूर (ज्योति) की वर्षा की।" भूमि अपने रब के नूर से चमक उठी, और संसार को अमृत पान कराया। कभी इन शब्दों से आलमे अरवाह (आत्मालोक) की ओर संकेत होता है क्योंकि जल तथा आत्मा दोनों ही जीवन का कारण हैं और एक दूसरे से संबंध रखते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'स्वांति नखत' (स्वाती नक्षत्र) अथवा 'बूंद सेवाती' अथवा इसी के समानार्थक शब्दों का उल्लेख हो तो इससे नामों के ज्ञान की ओर संकेत होता है जिनकी वर्षा इस आयत के शिक्षा के बादल से होती है। "आदम को अल्लाह ने नामों की शिक्षा दी" और उनके कारण हृदय की सीपियों में बहुमूल्य मोती पैदा कर दिए।

छंद

(तेरा) अस्तित्व नदी के समान है। तेरा शरीर तट के समान है। इस नदी में उठनेवाली बुद्धि तथा वर्षा की अनुकंपा नामों का ज्ञान है। बुद्धि इस अथाह समुद्र में डुबकी लगाती है, जिसकी गुदड़ी सहस्रों रत्न हैं, प्रत्येक लहर में हजारों बादशाहों के योग्य मोती, 'नक्ल[७],' 'नस[८]' तथा हदीस द्वारा गिरते हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'झकोर' अथवा 'लकवाह' अथवा इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इनसे ईश्वर की अनुकंपा तथा परमेश्वर की दया की ओर संकेत होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'बड़ी बड़ी बूंदन' की चर्चा हो तो उनसे पूर्वकाल के सदाचारियों की आत्मा की ओर संकेत होता है।

द

जिससे इस लौकिक ससार में एक नदी उत्पन्न हो जाय विश्वास कर लो कि उस प्रत्येक बूद का नाम जुनैद वा बायज़ीद होगा। और कभी फरिश्तों के प्रकट होने की ओर सकेत होता, "फरिश्ते तथा मलायेक उतरते रहते हैं" द्वारा इसी अर्थ की व्याख्या होती है।

यदि हिंदवी वाक्यो में 'फुइहैं' अथवा 'नन्हीं नन्हीं बूदे' का प्रयोग हो तो इससे सृष्टि के कणों में अल्लाह की ज़ात (अस्तित्व) के नूर (ज्योति) के प्रकट होने की ओर सकेत होता है।

छंद

ससार को तुम पूर्णतया एक दर्पण समझो। प्रत्येक कण में १०० चमकने वाले सूर्य हैं। यदि तू किसी बूद का भी हृदय चीर कर देखे तो उससे १०० शुद्ध जल के समुद्र निकल आएगे।

यदि तू सीधी तरह देखे तो मिट्टी के ढेर में सहस्रों आदम वर्त्तमान हैं। हाथ पैर के अनुसार एक मच्छर भी हाथी के समान है और नामों के ससार में बूद भी नील नदी के समान है।

प्रत्येक दानेके हृदय में सौ खलिहान वर्त्तमान हैं और एक चावल के दाने में १०० ससार विद्यमान हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'पपीहा', 'दादुर', अथवा 'मोर' तथा इसी प्रकार के शब्दों का उल्लेख हो तो इससे प्रेम के मतवालों की ज़बानों तथा आवाज़ों की ओर सकेत होता है और यही आवाज़ें प्रेम की भावनाओं तथा प्रीति की अभिलाषाओं को उत्तेजित करती हैं और इन्हीं के द्वारा भौतिक ससार से पृथक् होने तथा एकात एव ईश्वर से प्रेम और विक्षिप्तता की प्रेरणा प्राप्त होती है।

छद

मैं उन शब्दों का दास हूँ जो अग्नि भड़का देते हैं न कि ऐसे वाक्य जो धधकती अग्नि पर भी शीतल जल डाल दें।

यदि हिंदवी वाक्यो में 'दामिनी' का उल्लेख हो तो इससे समय की तलवार की तेज़ी की ओर सकेत होता है और कभी उन बिजलियों तथा प्रकाश की चमक की ओर सकेत होता है जो एकातवासियों के ईश्वर की ओर ध्यान लगाने के समय प्रकट होती हैं।

छद

उसने यह कहा कि हमारी दशा ससार की दामिनी के समान है। क्षण भर मे प्रकट हूँ तथा दूसरे क्षण में लुप्त।

यदि हिंदवी वाक्यो मे 'हंस', 'वक', 'चकई' व 'सारस', अथवा इसी प्रकार के अन्य शब्दो की चर्चा हो तो उनसे आलमे मिशाल (रूप लोक ससार) की ओर सकेत होता है और यह आलमे अरवाह (आत्म लोक) तथा आलमे अजसाम (शरीर लोक) के मध्य मे सबध स्थापित करता है।

यदि हिंदवी वाक्यो मे 'घन गरजे' अथवा इसी प्रकार के अन्य शब्दो का प्रयोग हो तो उनमे गैब (परोक्ष) से आने वाली हार्दिक दशाओ का ओर सकेत होता है जो आलमे अरवाह (आत्म लोक) से बड़ी तीव्रता के साथ प्राप्त होती है। अथवा ईश्वर की अनुकपा की भावना की ओर सकेत होता है जो अत्यधिक बल प्राप्त करके बदे (दास) को असावधानी की निद्रा मे शनै. शनै. जगा देती है।

छद

बदो (दासो) पर अनुकपा करनेवाले, तेरी अनुकपा का एक कण सहस्र वर्ष की तसबीह (अल्लाह के नाम का सुमिरन) तथा नमाज से बढ़कर है।

और इन शब्दों से गैबी (परोक्ष की) आवाज देने वाले फ़रिश्ते की ओर सकेत होता है जो सुखद समाचार पहुँचाता है तथा सावधान करने के लिये आवाज देता है।

छद

गत रात्रि मे, मै मदिरालय में मस्त तथा मादक दशा में था। इसी अवस्था में ग़ैब (परोक्ष) के फ़रिश्ते ने ऐसे उत्कृष्ट तथा प्रसन्न करनेवाले समाचार सुनाए कि उनका उल्लेख सभव नहीं।

यदि हिंदवी वाक्यो में इस बात का उल्लेख हो 'धर ने पहना हरिया चोला' तो इससे इस बात की ओर सकेत होता है कि सालिक (साधक सूफ़ी) के नफ़्स (वासना) ने आत्मा के गुण प्राप्त कर लिए हैं। 'और भूमि अल्लाह के नूर (ज्योति) से चमक उठेगी।' और कभी इसी ओर सकेत होता है कि जिज्ञासुओं की दृष्टि में भूमि की प्रत्येक वनस्पति का प्रत्येक

पद्मा इस बात का साक्षी होता है कि 'हमने भूमि को बिछाया है तथा हम बड़े अच्छे बिछाने वाले हैं।'

छंद

जो घास भी भूमि पर उगती है वह कहती है 'अल्लाह एक है तथा उसका कोई साथी नहीं।

यदि हिंदवी में **'बीर बहूटी'** का उल्लेख हो तो उससे आत्माओं के शरीर ग्रहण करने की ओर संकेत होता है।

यदि हिंदवी रचनाओ में **'ऊंच खाल फिर नीर हिलोरा'** का उल्लेख हो तो इससे इस छंद की ओर संकेत होता है।

छंद

यद्यपि मदिरा तथा प्रेम के खेल हानि तथा परिपूर्णता के कारण हैं किंतु हमा अस्त (सब कुछ ईश्वर है) के मुकाम (लक्ष्य) पर हानि तथा परिपूर्णता सभी समान हैं।

छंद

जहा परमेश्वर के ऐश्वर्य के प्रकट होने का प्रश्न आता है वहा मेरी तौहीद (एकेश्वरवाद) तथा तेरा शिर्क (दूसरो को साथी बनाना) सभी समान हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **'अंध कूप निस'** जैसे शब्दों का प्रयोग हो तो इन शब्दों से भौतिक उत्पत्ति, चित्त, स्वेच्छा, उच्च श्रेणी की अभिलाषा, अभिमान तथा अहकार की ओर सकेत किया जाता है और यह सब वस्तुए अधे कूप के समान हैं।

'तनिक उस अधे कूप से निकल जिससे तू ससार के दर्शन कर सके।'

यदि हिंदवी वाक्यों में **'पैंघ व हिंडोला'** का उल्लेख हो तो इससे रगा रगी (विभिन्न रूप) के मुकामात (लक्ष्य) तथा श्रेणियों की ओर सकेत होता है। और यह रगा रगी (विभिन्न रूपो) का होना ईश्वर की मारेफत (ज्ञान) के उतार चढाव मे से एक मुकाम (लक्ष्य) है चाहे यह सैर इलल्लाह (अल्लाह की ओर से भ्रमण) हो और चाहे सैर फ़िल्लाह (अल्लाह मे भ्रमण) हो। अल्लाह बदलनेवाले हालो का मित्र है।

पत्ता इस बात का साक्षी होता है कि 'हमने भूमि को बिछाया है तथा हम बड़े अच्छे बिछाने वाले हैं।'

छंद

जो घास भी भूमि पर उगती है वह कहती है 'अल्लाह एक है तथा उसका कोई साथी नहीं।

यदि हिंदवी में **'बीर बहूटी'** का उल्लेख हो तो उससे आत्माओं के शरीर ग्रहण करने की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी रचनाओ में **'ऊच खाल फिर नीर हिलोरा'** का उल्लेख हो तो इससे इस छंद की ओर सकेत होता है।

छंद

यद्यपि मदिरा तथा प्रेम के खेल हानि तथा परिपूर्णता के कारण हैं किंतु हमा अस्त (सब कुछ ईश्वर है) के मुकाम (लक्ष्य) पर हानि तथा परि-पूर्णता सभी समान हैं।

छद

जहा परमेश्वर के ऐश्वर्य के प्रकट होने का प्रश्न आता है वहा मेरी तौहीद (एकेश्वरवाद) तथा तेरा शिर्क (दूसरों को साथी बनाना) सभी समान हैं।

यदि हिंदवी वाक्यो में **'अंध कूप निस'** जैसे शब्दों का प्रयोग हो तो इन शब्दों से भौतिक उत्पत्ति, चित्त, स्वेच्छा, उच्च श्रेणी की अभिलाषा, अभिमान तथा अहकार की ओर सकेत किया जाता है और यह सब वस्तुए अधे कूप के समान हैं।

'तनिक उस अधे कूप से निकल जिससे तू ससार के दर्शन कर सके।'

यदि हिंदवी वाक्यों में **'पैंघ व हिडोला'** का उल्लेख हो तो इससे रगा रगी (विभिन्न रूप) के मुकामात (लक्ष्य) तथा श्रेणियों की ओर सकेत होता है। और यह रगा रगी (विभिन्न रूपो) का होना ईश्वर की मारेफ़त (ज्ञान) के उतार चढाव मे से एक मुकाम (लक्ष्य) है चाहे यह सैर इलल्लाह (अल्लाह की ओर से भ्रमण) हो और चाहे सैर फ़िल्लाह (अल्लाह मे भ्रमण) हो। अल्लाह बदलनेवाले हालो का मित्र है।

और जैतश्री राग में यह गीत "एक हिंडोला बाप दिया" का अभिप्राय यह है कि मारेफ़त (ज्ञान) को रंगा रंगी का पहला मक़ाम (लक्ष्य) भय तथा आशा का मक़ाम है तथा पिता का दिया हुआ मक़ाम है अर्थात् आदम से उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ है। दुजा जो पिया दई (दिया)" अर्थात् रंगा रंगी का दूसरा मक़ाम (लक्ष्य) जो अपने ऊपर अधिकार प्राप्त करना तथा पाबन्दी का नाम है, कदाचित् हमें रसूलल्लाह (मुहम्मद साहब) के अनुसरण के आशीर्वाद से प्राप्त हो जाय।

"तिसरे हिंडोले म पांव धरौं" अर्थात् रंगा रंगी का तीसरा मक़ाम (लक्ष्य) भय एवं प्रेम का मक़ाम (लक्ष्य) है और वहां से मैं मारेफ़त (ज्ञान) में दृढ़ हो जाऊँगा।

"जोबन लहरे ले" अर्थात् मेरे हृदय का विस्तार एवं अंतरङ्ग की परिपूर्णता वहदत (एकेश्वरवाद) की नदी में लहरें लेने लगेगी और (मैं) मारेफ़त (ज्ञान) के समुद्र में प्रचंड बन जाऊँगा एवं मानी (वास्तविकता) के समुद्र में वेग में आ जाऊँगा।

छंद

यह तूफ़ान जो मैं तनदूर में से निकलता देख रहा हूँ, यदि एक बार वेग में आ जाय तो न यहां मूसा रहेंगे और न तूर पर्वत।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'दुइ खांभ' का प्रयोग हो तो उससे ईश्वर की अंगुलियों में से उन दो अंगुलियों की ओर संकेत होता है जो मोमिनों के हृदय को रंगा रंगी (विभिन्न रंगों) के मक़ाम (लक्ष्य) में परिवर्तित कर दिया करती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'चार डाडे' का उल्लेख हो तो उनसे चारों तत्वों की ओर संकेत होता है जिनके द्वारा रूप स्थापित रहता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में कॅवल (कमल) तथा भौंरा का उल्लेख हो तो उससे ईश्वर की स्थायी तथा अमिट बुद्धि की ओर संकेत होता है जो मनुष्यों के भाग्य का लिखा है।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'तितरी' का उल्लेख हो तो इससे उन मक़ाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जहां मारेफ़त (ज्ञान) वाले अपने नफ़्स (वासना) को रयाज़त (तपस्या) देते हैं। यह मक़ाम (लक्ष्य) प्रत्येक व्यक्ति के लिये उसकी योग्यता के अनुसार होता है। बुजुर्गों में से एक

पत्ता इस बात का साक्षी होता है कि 'हमने भूमि को बिछाया है तथा हम बड़े अच्छे बिछाने वाले हैं।'

छंद

जो घास भी भूमि पर उगती है वह कहती है 'अल्लाह एक है तथा उसका कोई साथी नहीं।

यदि हिंदवी में **'बीर बहूटी'** का उल्लेख हो तो उससे आत्माओं के शरीर ग्रहण करने की ओर सकेत होता है।

यदि हिंदवी रचनाओं में **'ऊंच खाल फिर नीर हिलोरा'** का उल्लेख हो तो इससे इस छद की ओर सकेत होता है।

छद

यद्यपि मदिरा तथा प्रेम के खेल हानि तथा परिपूर्णता के कारण हैं किंतु हमा अस्त (सब कुछ ईश्वर है) के मुकाम (लक्ष्य) पर हानि तथा परि-पूर्णता सभी समान हैं।

छद

जहा परमेश्वर के ऐश्वर्य के प्रकट होने का प्रश्न आता है वहा मेरी तौहीद (एकेश्वरवाद) तथा तेरा शिर्क (दूसरों को साथी बनाना) सभी समान हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में **'अध कूप निस'** जैसे शब्दों का प्रयोग हो तो इन शब्दों से भौतिक उत्पत्ति, चित्त, स्वेच्छा, उच्च श्रेणी की अभिलाषा, अभिमान तथा अहकार की ओर सकेत किया जाता है और यह सब वस्तुएं अधे कूप के समान हैं।

'तनिक उस अधे कूप से निकल जिससे तू ससार के दर्शन कर सके।'

यदि हिंदवी वाक्यो में **'पैंग व हिंडोला'** का उल्लेख हो तो इससे रगा रगी (विभिन्न रूप) के मुकामात (लक्ष्य) तथा श्रेणियों की ओर सकेत होता है। और यह रगा रगी (विभिन्न रूपों) का होना ईश्वर की मारेफ़त (ज्ञान) के उतार चढाव मे से एक मुकाम (लक्ष्य) है चाहे यह सैर इलल्लाह (अल्लाह की ओर से भ्रमण) हो और चाहे सैर फ़िल्लाह (अल्लाह मे भ्रमण) हो। अल्लाह बदलनेवाले हालों का मित्र है।

और जैतश्री राग में यह गीत "एक हिंडोला आप दिया" का अभिप्राय यह है कि मारेफ़त (ज्ञान) को रगा रगी का पहला मक़ाम (लक्ष्य) भय तथा आशा का मकाम है तथा पिता का दिया हुआ मक़ाम है अर्थात् आदम ने उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ है। "दुजा जो पिया दई (दिया)" अर्थात् रगा रगी का दूसरा मकाम (लक्ष्य) जो अपने ऊपर अधिकार प्राप्त करना तथा पाबन्दी का नाम है, कदाचित् हमें रसूलल्लाह (मुहम्मद साहब) के अनुसरण के आशीर्वाद से प्राप्त हो जाय।

"तिसरे हिंडोले न पांव धरौं" अर्थात् रगा रगी का तीसरा मकाम (लक्ष्य) भय एवं प्रेम का मकाम (लक्ष्य) है और वहां से मैं मारेफ़त (ज्ञान) में दृढ हो जाऊँगा।

"जोबन लहरें ले" अर्थात् मेरे हृदय का विस्तार एवं अंतरङ्ग की परिपूर्णता वहदत (एकेश्वरवाद) की नदी में लहरें लेने लगेगी और (मैं) मारेफ़त (ज्ञान) के समुद्र में प्रचंड बन जाऊँगा एवं मानी (वास्तविकता) के समुद्र में वेग में आ जाऊँगा।

छंद

यह तूफ़ान जो मैं तनदूर में से निकलना देख रहा हूँ, यदि एक बार वेग में आ जाय तो न यहां मूसा रहेंगे और न तूर पर्वत।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'दुइ खांभ' का प्रयोग हो तो उससे ईश्वर की अंगुलियों में से उन दो अंगुलियों की ओर संकेत होता है जो मोमिनों के हृदय को रंगा रंगी (विभिन्न रंगों) के मक़ाम (लक्ष्य) में परिवर्तित कर दिया करती हैं।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'चार डाडे' का उल्लेख हो तो उनसे चारों तत्वों की ओर संकेत होता है जिनके द्वारा रूप स्थापित रहता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में कँवल (कमल) तथा भौंरा का उल्लेख हो तो उससे ईश्वर की स्थायी तथा अनादि बुद्धि की ओर संकेत होता है जो मनुष्यों के भाग्य का लिखा है।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'तितरी' का उल्लेख हो तो उससे उन मकाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जहां मारेफ़त (ज्ञान) वाले अपने नफ़्स (वासना) को रयाज़त (तपस्या) देते हैं। यह मक़ाम (लक्ष्य) प्रत्येक व्यक्ति के लिये उसकी योग्यता के अनुसार होता है। बुज़ुर्गों में से एक

बुजुर्ग से लोगों ने प्रश्न किया, 'आप अपने नफ्स (वासना) को रयाजत में किस मकाम (लक्ष्य) पर व्यवस्त पाते हैं' तो उन्होंने उत्तर दिया। 'तवक्कुल (प्रसाद) के मकाम पर'। कभी उस मकाम (लक्ष्य) की ओर संकेत होता है जिसको सच्चाई का विश्राम स्थल कहते हैं।

यदि हिंदवी में 'त्यौहार' अर्थात् 'दिवाली होली' आदि का उल्लेख हो तो इन शब्दों से मंगल कामनाओं तथा मनोहर स्थानों की ओर संकेत होता है। यह मकाम (लक्ष्य) माशूक की अनुकंपा तथा आशिक के समस्त माशूक (प्रियतम) की कृपा तथा दया के सुखद समाचारों से स्पष्ट होता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में 'प्रियतम लग तन होली कीन्हा' अथवा इसी प्रकार के वाक्यों का प्रयोग हो तो इससे प्रेम की उस अग्नि की ओर संकेत किया जाता है जो आशिकों के हृदय को सजाए हुए है और इस अग्नि ने उनके अस्तित्व का सिर से पैर तक घेर रखा है। कश्फुल इसरार में लिखा है कि "जो अग्नि हृदय में होती है वह बड़ी ही विचित्र अग्नि है"। हुसैन मनसूर (अल्लाह उनकी आत्मा को पवित्र करे) ने कहा है "अल्लाह की वह भड़कने वाली अग्नि जो हृदय में जलती रहती है, यह अग्नि मेरे हृदय में १००० वर्ष तक धधकती रही और वह सब का सब जल गया। अब चाहिए कि यह जला हुआ हृदय मेरी जलन की सूचना दे।"

छंद

हे दीपक आ, जिससे मैं और तू रहस्य की वार्ता करें क्योंकि जले हुए हृदय की दशा जले हुए हृदयवाला ही जानता है।

यदि हिंदवी वाक्यों में धुरहड़ी (धुलेंडी) अथवा इसी प्रकार के शब्दों की चर्चा हो तो इससे आशिक के न्योछावर होने की ओर संकेत होता है तथा प्रेम एवं प्रीति की अग्नि में जल कर भस्म हो जाने की ओर संकेत होता है।

छंद

तू मिट्टी बन जा, मिट्टी, जिससे (मिट्टी से) फूल उगें। इस कारण प्रत्येक वस्तु के प्रकट होने का स्थान मिट्टी के अतिरिक्त कुछ नहीं।

× × × ×

ईश्वर प्राणियों में से सर्वश्रेष्ठ प्राणी, हज़रत मुहम्मद तथा उनकी समस्त ...न रखे। यह पुस्तक ९७४ हि० (१५६६–६७ ई०) के

जमादीउल अव्वल मास में लिखी गई। हे उद्योगी अब यह कदापि न समझ लेना कि जिन शब्दों का उल्लेख हुआ वे उन्हीं अर्थों तथा संकेतों तक सीमित हैं अपितु इन शब्दों के अनेक अर्थ तथा संकेत हैं, जिनका उल्लेख नहीं हुआ है जिससे यह पुस्तक बहुत न बढ जाय और कुछ यह भी बात है कि उन अर्थों का उल्लेख संभव भी न था। बहुत से अर्थ बड़े ही कोमल तथा गूढ़ हैं जो कदाचित् श्रोताओं की बुद्धि के सारल्य के अनुकूल नहीं हैं और लोग उन्हें सुनकर अस्वीकार करने तथा विद्रोह करने लगेंगे अत: प्राचीन लोगों का अनुसरण करते हुए उन्हें छोड़ दिया जैसा कि अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास[1] ने कहा है कि "यदि मैं इस आयत के अर्थ का, तथा जो मैं जानता हूँ, तुमसे वर्णन करूं तो तुम मुझे पत्थरों से मार डालोगे। आयत यह है "अल्लाह वह है जिसने सात आकाश उत्पन्न किए तथा उन्हीं के बराबर भूमि पैदा की। अल्लाह के आदेश उन्हीं से आते रहते हैं।"

छंद

अवस्था व्यतीत हुई और मेरे दुःख की कथा का अंत न हुआ। रात्रि समाप्त हुई, अब मैं कहानी संक्षिप्त करता हूं।

× × ×

भगवान्* को धन्य है कि पवित्र• पुस्तक 'हकायके हिंदी" जो मेरे जद (पितामह) मीर सैयिद अब्दुल वाहिद शाहिदी बिलग्रामी की रचना है, शाबान ११६६ हि॰ (मई १७५६ ई॰) को समाप्त हुई। दो चार पृष्ठ तथा इतने ही अंत के पृष्ठ और कुछ स्थानों पर बीच में फकीर ज़ादा सैयिद मुहम्मद इमाम उर्फ़ शाह गदा के पवित्र हाथों द्वारा लिपि बद्ध हुए तथा शेख सैफुल्लाह फ़क़ीर सरकार के हाथ से लिखे गए। वह अल्लाह ही आदि तथा अनंत है। उसे जिसने समझ लिया।

○

---

* ये वाक्य पुस्तक की नकल करनेवालों के हैं।

पारिभाषिक शब्द की व्याख्या

अध्याय १

१. हदीस—मुहम्मद साहब के कथन तथा उनके जीवन से संबंधित विभिन्न घटनाओं का संग्रह।

२. मसनवी—वह कविता जिसमें किसी कथा अथवा नसीहत का उल्लेख हो।

३. गैब—इस्लामी सिद्धांत के अनुसार सभी बातों का स्रोत ईश्वर है और जो कुछ प्रकट होता है, उसे गैब से प्रकट होना कहते हैं।

४. तसव्वुफ़ में इश्क को ईश्वर की इच्छा बताया जाता है। सूफ़ी इश्क तथा लिप्सा में बड़ा अंतर बताते हैं। इश्क में एक प्रियतम के अतिरिक्त किसी अन्य से संबंध रखना लिप्सा कहा जाता है। इश्क अह भाव का सर्वनाश कर देता है। नाना प्रकार के कष्टों को झेलता हुआ आशिक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता जाता है। अरबी फ़ारसी तथा उर्दू ग़ज़ल एवं तसव्वुफ़ का आधार इश्क है। प्रायः इश्क किसी तरुण अथवा रमणी या किसी अन्य वस्तु से प्रारंभ होता है। उसे इश्के मजाज़ी (केवल प्रेम) कहते हैं। यही इश्के हकीकी (परम प्रेम) की सीढ़ी है। दारा शिकोह (शाहजहाँ के पुत्र, १०६९ ई०) ने लिखा है 'चिदाकाश से सर्व प्रथम जो वस्तु निकली वह 'इश्क' था और इसे भारतीय अद्वैतवाद में माया कहते हैं। इश्क ही से जीवात्मा "रूहे आज़म" का जन्म हुआ (मजमउल बहरैन, पृ० ५)।

५. अम्र—आदेश, किंतु सूफ़ी साहित्य में मनुष्य की आत्मा को ईश्वर का अम्र कहा जाता है। इमाम ग़ज़ाली (मृत्यु ११११ ई०) का कथन है कि लोक दो प्रकार के होते हैं। खल्क तथा अम्र और दोनों का संबंध ईश्वर से है। भौतिक पदार्थ का कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं। इसका संबंध खल्क से है। जिन वस्तुओं को वास्तविक अस्तित्व प्राप्त है उनका संबंध मनुष्य की आत्मा से है और वे 'अम्रलोक' से संबंधित हैं।

६. कहा जाता है कि ईश्वर के नाम के ज्ञान का रहस्य केवल मुहम्मद साहब को ज्ञात था।

७ वे वस्तुएं जिनसे बाजे बनते हैं।

८. वह स्थान जहा मूसा पैगंबर ने ईश्वर से वार्ता की थी। कहा जाता है कि वार्ता एक वृक्ष द्वारा हुई थी।

९. मुसलमानो के अनुसार एक बहुत बडे पैगंबर। उनका कार्य क्षेत्र मिस्र बताया गया है जहाँ का बादशाह फिरऔन जो अपने आप को ईश्वर कहता था, इनका बड़ा विरोधी था। उसे कस का अनुरूप कहा जा सकता है। कुरान के अनुसार अपने अनुयायियों के कहने पर उन्होंने ईश्वर से वार्तालाप भी किया था। इस कारण इन्हें "कलीमुल्लाह" अर्थात् अल्लाह से बातें करनेवाला कहा जाता है।

१० इस स्थान पर सगीत की विशेषता मूसा से तुलना करके बताई गई है कि मूसा तो केवल एक खास पेड़ ही से अल्लाह की आवाज़ सुन सकते थे किंतु सूफ़ी प्रत्येक बाजे से अल्लाह की आवाज़ सुनता है।

११. जिब्रील—एक फ़रिश्ता जो मुहम्मद साहब के पास ईश्वर का सदेश (वही) ले जाता था।

१२ कहा जाता है कि जब मेराज मे मुहम्मद साहब को जिब्रील अपने साथ ईश्वर से भेंट कराने ले गए तो एक स्थान पर पहुँच कर रुक गए और मुहम्मद साहब को आगे जाने के लिये कहते हुए निवेदन किया कि 'यदि मैं बाल बराबर भी अब आगे बढ़ूँगा तो मेरे पर जल जायगे।'

१३. अर्शे आज़म—परमेश्वर का सिंहासन जिसकी परिभाषा शरा में नहीं की गई है। मनुष्य के अतःकरण को अर्श कहा जाता है। दारा शिकोह ने लिखा है कि "मन आकाश 'अर्श' कहा जाता है।" (मजमउल बहरैन पृ० १०४)

१४. कशफ़—प्रकट करना, खोलना, तसव्वुफ़ में दैवी प्रेरणा द्वारा विभिन्न रहस्यों का ज्ञान।

१५. इलहाम—जिब्रील द्वारा मुहम्मद साहब को प्राप्त होनेवाला सदेश।

१६ करामात—सूफियो (सतो) द्वारा प्रदर्शित चमत्कार। सूफियों को अपने चमत्कारो को गुप्त रखने का आदेश दिया गया है।

१७ मजज़ूब—वह सूफ़ी (साधक) जो भावावेश में सब कुछ त्याग चुका हो और जिसे किसी बात का चिंता न हो। इन्हें किसी शेख (गुरु) की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरीत सालिक को शेख की आवश्यकता

होती है क्योंकि वह जिस प्रकार उचित समझता है धीरे धीरे सालिक (सूफी) को मारिफ़त तक ले जाता है।

१८ पीरे तरीकत—तरीकत (तसव्वुफ़ के मार्ग) का गुरु।

१९. पीरे हकीकत (अथवा मुर्शिदे हकीकत)—हकीकत के मार्ग का गुरु।

२० आयत—कुरान का एक पूरा वाक्य आयत कहलाता है।

२१. जमीले हकीकी—वास्तविक सौंदर्य रखनेवाला (परमेश्वर)

२२. मकाम—तरीकत (तसव्वुफ़ के मार्ग) के लक्ष्य, (देखो प्रस्तावना)।

२३ हालात—तरीकत में अंतःकरण की दशाएँ, (देखो प्रस्तावना)।

२४. सिराते मुस्तकीम—इसका उल्लेख कुरान में लगभग ३२ स्थानों पर हुआ है। इसका तात्पर्य 'इस्लाम' भी समझा जाता है।

२५. जुलेखा—फ़िसलने का स्थान। यूसुफ़ की आसक्ता।

२६. हकीकते मुहम्मदी—मुहम्मद की हकीकत (वास्तविकता)। कुरान के अनुसार मुहम्मद साहब ईश्वर के अंतिम दूत हैं, किंतु तसव्वुफ़ में मुहम्मद साहब की सत्ता को सृष्टि की रचना का एक कारण बताया गया है और इस हकीकत की बड़ी रहस्यमयी व्याख्या की गई है।

२७ यूसुफ़—एक पैगम्बर, जुलेखा को इनसे बड़ा प्रेम था। ये बड़े रूपवान थे।

२८. काब कौसेन—दो कमानों के बराबर। कहा जाता है कि जब मुहम्मद साहब मेराज में ईश्वर का साक्षात्कार करने गए थे तो दोनों में दो कमान की दूरी रह गई थी।

२९ जेहादे अकबर—जेहाद का अर्थ प्रयत्न अथवा विरोध। इस्लाम फैलाने के लिये जो युद्ध किए जाते हैं वे भी जेहाद कहलाते हैं। सूफ़ियों के अनुसार जेहाद दो प्रकार का होता है।

(१) जेहाद अकबर (सर्वोच्च जेहाद) अपनी वासनाओं के विरुद्ध युद्ध

(२) जेहाद असगर (निम्न जेहाद) काफ़िरों के विरुद्ध।

३० हराम—वे कार्य तथा वस्तुएँ जिनकी शरा द्वारा मनाही की गई है।

३१ ज़िक्र—ईश्वर के नाम का सुमिरन। इसके विभिन्न नियम हैं और सूफ़ियों की उपासना का नाना प्रकार इसी पर निर्भर है।

३२. मजाज़—जो वास्तविक न हो। संसार तथा उसका प्रेम मजाज़ी कहलाता है।

३३. वही—ईश्वर का सदेश जो मुहम्मद साहब के पास ज़िबरील द्वारा आता था। कुरान के अनुसार मुहम्मद साहब किसी समस्या का उस समय तक उत्तर न देते थे, जब तक वही द्वारा उन्हें ईश्वर की इच्छा ज्ञात न हो जाती थी।

३४. अब्दाल—सूफ़ियों के अनुसार ब्रह्माड का अस्तित्व कुछ बहुत बड़े बड़े सूफ़ियों पर निर्भर है। इनके विषय में किसी को कुछ ज्ञान नहीं। इन अधिकारियों में ३०० 'अख़यार' ४० 'अब्दाल', ७ 'अबरार', ४ 'अवताद', तीन 'नुकबा' तथा एक 'कुतुब' अथवा 'ग़ौस' होता है। इन लोगों को एक दूसरे के विषय में ज्ञान होता है और एक दूसरे के परामर्श से कार्य करते हैं।

३५ फ़तवा—इस्लामी राज्यों में काज़ी (न्यायाधीश) की सहायता के लिये मुफ़ती होते थे। वे काज़ी को शरा के आदेशों के विषय मे सूचना देते थे। इनका मत फ़तवा कहलाता था। आज कल भी जो लोग शरा की समस्याओं के विषय में अपना मत देते हैं, उनका मत फ़तवा कहलाता है।

३६. बर्ज़खेकुबरा—दो एक दूसरे के विरोधी वस्तुओं के मध्य की चीज़। मनुष्यों को मृत्यु तथा कयामत के मध्य का समय बर्ज़ख कहलाता है।

३७. साद—अरबी का एक अक्षर। इसे स्वीकृति का चिह्न भी कहा जाता है।

३८ मीम—अरबी का एक अक्षर।

३९ अहमद बिला मीम—अहद अर्थात् एक (ईश्वर)। इस का अर्थ यह हुआ कि अहमद (मुहम्मद साहब) से अहद (अल्लाह) तक केवल मीम का अंतर है।

४०. तौबा—किसी बुरे कार्य को न करने की प्रतिज्ञा।

४१. इसतेग़फ़ार—मगफ़ेरत (मुक्ति) का प्रार्थना करना।

४२ जुहद—वैराग्य। तरीकत में कुछ सूफ़ियों के अनुसार पहला लक्ष्य तौबा, दूसरा इनाबत (परिवर्त्तन) और तीसरा जुहद (वैराग्य) होता है।

४३. तवक्कुल—ईश्वर को समर्पण। तरीकत में कुछ सूफ़ियों के अनुसार यह लक्ष्य जुहद के पश्चात् आता है।

४४. तसलीम—परित्याग।

४५. तकवा—पवित्रता. ईश्वर का भय।

४६. रिजा—सतोष, ईश्वर की इच्छा तथा जो भी उसके द्वारा हो उससे सतुष्ट रहना।

४७ ईश्वर के दूत—पैगबर।

४८. वली—ईश्वर के मित्र, बडे बडे सूफ़ी (सत)।

४९. ज़ौक—ईश्वर के प्रेम में स्वाद।

५०. रिसाल-ए-मक्खिया—फ़ुतूहाने मक्किया, लेखक, मुहीउद्दीन इब्नो अरबी।

५१ रिसाल—कुछ ऐसे सूफ़ी जो अपने आपको सत्य (ईश्वर) कहते थे, मनसूर आदि।

५२. आलमे नासूत—कुछ सूफ़ियो के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को चार आलमो (लोक) से गुजरना होता है। (१) नासूत (२) मलकूत (३) जबरूत तथा (४) लाहूत। दारा शिकोह ने मजमउल बहरैन में लिखा है कि भारतीय सतो के अनुसार यह अवस्थाए हैं। (१) जागरित (जाग्रत्) (२) स्वप्न (३) सखुपत (सुपुति) और (४) तुर्या (तुरीय)। जागरित अथवा नासूत प्रकाशन एव जागरण की अवस्था। स्वप्न अथवा मलकूत आत्माओ एव स्वप्नो की अवस्था। सुपुति अथवा जबरूत सर्वश्रेष्ठ अवस्था है और इसमे दोनो लोको के चिह्न समाप्त हो जाते हैं और 'मै' तथा 'तू' का अतर नहीं रहता। चाहे कोई आखें खोल कर देखे अथवा बद करके। दोनो धर्मों के अत्यधिक फ़क़ीरो को इस अवस्था का कोई ज्ञान नहीं होता सैयिदुत्ताइफ़ा, उस्ताद अबुल कासिम बिन (पुत्र) मुहम्मद बिन (पुत्र) जुनेद का कथन है कि उन्होने एक बार कहा 'तसव्वुफ एक क्षण के लिये बिना किसी शुश्रूषा के बैठने का नाम है।' शेखुल इस्लाम ने पूछा 'बिना शुश्रूषा का अर्थ क्या हुआ?' उन्होंने बताया 'बिना खोज के प्राप्त करना और बिना देखे दर्शन पाना। दर्शन के लिये नेत्र का प्रयोग एक रोग है। अत. एक क्षण के लिए बिना किसी शुश्रूषा के बैठने का अर्थ यह है कि उस समय आलमे नासूत तथा आलमे मलकूत के मस्तिष्क में न आए। तुरीय अथवा लाहूत शुद्ध अस्तित्व है और वह ब्रह्माड का सभी वस्तुओं तथा इन तीनों अवस्थाओं को घेरे हुए है। (मजमउल बहरैन, पृ० ६०, प्रस्तावना भी देखिए)।

५३. रूहे आज़म—आत्मा दो प्रकार की होती है। साधारण (रूह) आत्मा (२) आत्माओं की आत्मा (अबुल अर्वाह)। दारा शिकोह के

अनुसार भारतीय मत प्रथम का आत्मा और दूसरी को परमात्मा कहते हैं। जब ज़ाते बहत (शुद्ध अस्तित्व, ईश्वर) निर्धारित तथा बदी हो जाता है चाहे वह शुद्धता और चाहे अशुद्धता द्वारा हो तो उसका ललित रूप रूह अथवा आत्मा कहलाता है तथा अललित रूप जस्द अथवा शरीर कहलाता है। जो अस्तित्व अनादि काल में निर्धारित हो गया उसे रूहे आजम कहते हैं और वह तथा त्रिकाल गुणी सत्ता एक ही है (मजमउल बहैरन)।

५४. खलीफ़ा, उत्तराधिकारी—कुरान के अनुसार आदम ईश्वर के खलीफ़ा थे। जब परमेश्वर ने फ़रिश्तों से कहा कि मैं भूमि पर अपना खलीफ़ा (उत्तराधिकारी) नियुक्त करना चाहता हूँ" तो उन्होंने उत्तर दिया "क्या तू ऐसे को नियुक्त करेगा जो भ्रष्टाचार तथा रक्तपात करेगा ? हम तो तेरी उपासना करते ही हैं" उत्तर मिला "जो हम जानते हैं वह तुम नही जानते" सूफ़ी इन आयतों द्वारा मनुष्य के महत्त्व तथा उसके अत्यंत उत्कृष्ट स्थान तक पहुँच जाने का दावा करते हैं।

५५. मनुष्य को मुसलमानों के अनुसार सृष्टि की रचना का कारण बताया गया है और कहा जाता है कि मनुष्य द्वारा ही ईश्वर अपने आप को पहचनवाना चाहता था, अतः दैवी व्याख्या करनेवाला, वुजूद की कुंजी, ईजाद का कलम आदि वाक्य मनुष्य के लिये कहे गए हैं।

५६. नफ़से कुल्ली अथवा नफसे कामिल—ईश्वर की इच्छा।

५७ महर—वह धन जो पति अपने विवाह के समय पत्नी को देना स्वीकार करता है।

५८ मलकूत—देखो जबरूत।

५९. जिक्र, जपः—ईश्वर के नामों तथा उसकी प्रशसा सबधी वाक्यों का सुमिरन यह दो प्रकार का होता है। जिक्रे जली, जिसका उच्चारण जोर ज़ोर से हो (२) ज़िक्रे खफ़ी जिसका उच्चारण मन मे हो। सूफ़ियों के विभिन्न सिलसिलों म जिक्र के नियम अलग अलग हैं।

६०. आलमे मजाज—भौतिक ससार।

६१ मुहम्मद साहब का नूर अथवा नूरे मुहम्मदी या हकीकत मुहम्मदी अथवा मुहम्मद साहब की वास्तविकता—मुसलमानो के अनुसार सृष्टि की रचना के पूर्व ईश्वर ने अपने नूर (ज्योति) से मुहम्मद साहब के नूर को पैदा किया। कहा जाता है कि सृष्टि की रचना के पूर्व ईश्वर ने मुहम्मद साहब के नूर को चार भागों में विभाजित किया (१) कलम (२) लौह (तख्ती) (३)

अल्लाह का अर्श और चौथे के चार अन्य भाग किए (अ) हमलतुल अर्श अथवा आठ फरिश्ते जो ईश्वर के सिंहासन को सँभाले हैं (ब) कुर्सी अथवा अर्श का नीचे का भाग (स) फ़रिश्ते (द) इसे फिर चार भागों में बाँटा गया (क) सप्त आकाश (ख) ७ नरक तथा स्वर्ग (ग) भूमि (घ) इसके फिर चार भाग किए गए (१) आँख का प्रकाश (२) मस्तिष्क का प्रकाश (३) प्रेम का प्रकाश (४) अन्य सृष्टि।

६२. हज़रत सुलैमान—एक पैग़म्बर जिनका हवा पर भी राज्य बताया गया है। वे अपने ऐश्वर्य, योग्यता तथा बुद्धिमत्ता के लिये प्रसिद्ध बताए जाते हैं।

६३. हुदहुद—एक पक्षी जो कुरान के अनुसार हज़रत सुलैमान के पत्र सेबा की मलका को ले जाता था।

६४. सेबा—यमन का एक नगर।

६५. वुरैर—रसूल के एक सहचर।

६६. अलस्त—कुरान के अनुसार कयामत में ईश्वर आत्माओं से पूछेगा—'अलस्तु बे रब्बेकुम्' (क्या मैं तुम्हारा ईश्वर नहीं हूँ ?)

६७. बला—उस समय वे उत्तर देंगी—बला (निःसंदेह तू ही है।)"

६८. कयामत के दिन।

६९. यहाँ सूफियों से तात्पर्य है।

७०. यह संबोधन मुहम्मद साहब के लिये है।

७१ कुफ्र—वे बातें जो इस्लाम के विरुद्ध हों।

O

अध्याय २

१. उमर खत्ताब—मुसलमानों के दूसरे ख़लीफ़ा (मृत्यु ६४४ ई०)

२. ऐनुल कुज़्ज़ात—एक प्रसिद्ध सूफ़ी।

३. फ़िरऔन—मिस्र का बादशाह वलीद बिन मुसाब जो मूसा पैग़म्बर का समकालीन था।

४. हामान—फ़िरऔन का मंत्री।

५. कारूनः—एक बहुत बड़ा धनी तथा कंजूस जो मूसा पैग़म्बर का बहुत बड़ा विरोधी था।

६. अबू जहेल - मुहम्मद साहब का एक चाचा जो अंतिम समय तक उनका विरोध करता रहा। मुहम्मद साहब से युद्ध करता हुआ बद्र के युद्धमें मार्च ६२४ ई० में मारा गया।

७. इबलीस—वह फ़रिश्ता जिसने आदम को ईश्वर के आदेशानुसार सिजदा नहीं किया और आदम तथा उनकी संतान को मार्गभ्रष्ट करने की प्रतिज्ञा की। सूफ़ी साहित्य में वह शैतान नहीं क्योंकि उसने ईश्वर की उपेक्षा नहीं की, और वह कर भी कैसे सकता था, क्योंकि कोई भी कार्य अल्लाह की इच्छा के बिना नहीं हो सकता। वह सर्वदा अल्लाह का ही सिजदा करता है और उसके आदेश पर भी किसी अन्य को सिजदा करने के लिये तैयार नहीं। अतः तसव्वुफ़ में इबलीस अल्लाह का बड़ा भक्त है।

८ साकी - मदिरा पिलानेवाला। प्रायः तरुण इस कार्य को करते थे।

९. शेख शिबली—बगदाद के एक बहुत बडे सूफ़ी। इनकी मृत्यु ३१ जुलाई ९४६ ई० को हुई।

१०. सलमा—एक स्त्री जो अपनी सुंदरता के लिये बड़ी प्रसिद्ध थी।

११ कुन—जब ईश्वर ने सृष्टि की रचना करने की इच्छा की तो उसने 'कुन' (हो जा) कहा और सब कुछ हो गया।

१२. मिज़राब—तार का बना हुआ एक प्रकार का नुकीला छल्ला जिससे सितार बजाया जाता है।

१३ इसका कारण यह है कि मुसलमानों के अनुसार मुहम्मद साहब के पश्चात् पिछली शरीअतों का अंत हो गया।

१४. नवाफ़िल - वे नमाज़ें जो अनिवार्य नहीं।

१५ वज़ीफ़े - विभिन्न कुरान के वाक्यों तथा ईश्वर के नामों आदि का जाप।

१६ दूरबाश—दूर रहो। बादशाहों की सवारी तथा राजसभाओं में इसका प्रयोग सर्वसाधारण को दूर हटाने के लिये किया जाता था।

१७ निसाब—वह कम से कम आय जिसपर धार्मिक कर लगते है।

१८. जब ईश्वर ने इबलीस की इच्छा के विरुद्ध आदम को पैदा करना निश्चित कर लिया तो उसने शपथ ली थी कि 'मैं मनुष्य को मार्गभ्रष्ट करता रहूँगा'।

१९ अमानत—ईश्वर का ज्ञान ऐसी अमानत (धरोहर) बताई गई है जिसका भार मनुष्य के अतिरिक्त कोई नहीं उठा सका। यह बात मनुष्य की बहुत बड़ी विशेपता बताई गई है।

२०. काफ़ पर्वत—कहा जाता है कि ये पर्वत संसार को घेरे हैं। मुसलमानों का विश्वास है कि इस पर्वत पर जिन्नात आदि निवास करते हैं।

२१. खाकानी—अफ़ज़लुद्दीन इब्राहीम (पुत्र) अली शिरवाना सिद्ध फ़ारसी कवि जिनकी रचनाओं में तुहफ़तुल एराकीन तथा क़सीदे डे प्रसिद्ध हैं। उनकी मृत्यु ११८६ ई० अथवा ११९८ ई० में हुई।

२२. जक़ात—मुसलमानों के लिये उनकी कुछ निश्चित आय पर कर।

●

अध्याय ३

१. तहज्जुद—आधी रात्रि के बाद की नमाजें।

२. नवाफ़िल—ऐसी नमाजें आदि जो अनिवार्य न हों।

३. तकबीर—अल्लाहो अकबर कहना।

४. नीयत—नमाज में निर्धारित रकातें पढने की प्रतिज्ञा।

५. ऐनुल यक़ीन—सूफ़ियों के अनुसार यक़ीन अथवा विश्वास की तीन श्रेणियाँ होती हैं। इल्मुल यक़ीन (२) ऐनुल यक़ीन (३) हक़्कुल यक़ीन। धुआँ देखकर लोगों को इस बात का विश्वास हो जाता है कि वहाँ अग्नि है। यह इल्मुल यक़ीन है। कोई अपनी आँखों से आग देखता है। उसे पहले मनुष्य की अपेक्षा अधिक विश्वास हो जाता है। यह ऐनुल यक़ीन है। कोई अपना हाथ आग में डालता है और जल जाता है। उसे पहले दोनों व्यक्तियों की अपेक्षा कहीं अधिक आग का विश्वास हो जाता है। यह हक़्कुल यक़ीन है। पहला अनुमान द्वारा विश्वास, दूसरा निरीक्षण द्वारा विश्वास और तीसरा अनुभव द्वारा ज्ञान।

६. संप्रदाय—इस्लाम के विभिन्न ७२ सम्प्रदाय।

७. नक़ल—वृत्तान्त।

८. नस—क़ुरान।

९. अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास—मुहम्मद साहब के एक चाचा। इनका जन्म मुहम्मद साहब के मदीने पहुँचने के तीन वर्ष पूर्व (६१९ ई० में) हुआ। ये क़ुरान की व्याख्या करने में बड़े प्रसिद्ध थे। इनकी मृत्यु ६८७ ई० में हुई।

●

ग्रंथ सूची

[इस सूची में केवल वे ही पुस्तके दी गई हैं जिनकी चर्चा भूमिका अथवा व्याख्या में की गई है। तसव्वुफ की समस्त सहायक पुस्तकों का उल्लेख जिनके आधार पर भूमिका तथा व्याख्या तैयार की गई है, देना संभव नहीं]

१—कलेमाते चद, लेखक मीर अब्दुल वाहिद (फ़ारसी) हस्तलिखित अलीगढ ।

२—कुशफ़ुल महजूब, लेखक हुजवेरी (फ़ारसी) लाहौर प्रकाशन १६२३ ई० ।

३—खिलजी कालीन भारत, अनुवादक रिज़वी (हिंदी) अलीगढ १६५५ ई० ।

४—गुलजोर अबरार, लेखक गौसी शत्तारी (फ़ारसी) हस्तलिखित ।

५—जवामे उल किलम, लेखक ख्वाजा गेसू दराज (फ़ारसी) इन्तिजामी प्रेस उस्मानगंज (१६३७–३८ ई०)

६—नफ़ायसुल मआसिर, लेखक मीर अलाउद्दौला मीर यहिया कजवीनी (फारसी) हस्तलिखित अलीगढ ।

७—फ़वायदुल फ़वाद, लेखक अमीर हसन (फ़ारसी) फ़खसलमतावे १६५५–५६ ई० ।

८—बहरुलहयात, लेखक शेख़ मुहम्मद गौस (फ़ारसी) देहली १८६० ई० ।

९—मआसेरुल केराम, लेखक मीरगुलाम अली आजाद बिलग्रामी (फ़ारसी) आगरा १८८० ई० ।

१०—मकतूबाते शरफ़ुद्दीन यहिया मुनेरी, लेखक यहिया मुनेरी कुतुबखान-ए-इस्लामी पजाब ।

११—मजमउल बहरैन, लेखक दारा शिकोह (फ़ारसी) कलकत्ता ।

१२—मुतखबुत्तवारीख, लेखक मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी (फ़ारसी) कलकत्ता १८६४–६६ ई० ।

१३—रिसालये कुशेरिया, लेखक कुशेरी (अरबी) मिश्र में प्रकाशित १६२३ ई० ।

१४—सब्र-ए-सनाबिल, लेखक मीर अब्दुल वाहिद (फ़ारसी) हस्तलिखित अलीगढ ।

१५—हस्ते शुबहात, लेखक मीर अब्दुल वाहिद (फ़ारसी) हस्त लिखित अलीगढ ।

१६—हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, लेखक डा० रामकुमार वर्मा (हिंदी) प्रयाग १६४८ ।